

* يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْأَهْلِ قُلْ هِيَ مَوَاقِيتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ
 وَلَيْسَ الْبِرُّ بِأَنْ تَأْتُوا الْبُيُوتَ مِنْ ظُهُورِهَا وَلَكِنَّ الْبِرَّ
 مَنْ اتَّقَىٰ وَآتَىٰ الْبُيُوتَ مِنْ أَبْوَابِهَا وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ
 تُفْلِحُونَ ﴿١٨٩﴾ وَقَتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُقَتِّلُونَكُمْ وَلَا
 تَعْتَدُوا إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ﴿١٩٠﴾ وَأَقْتُلُوهُمْ حَيْثُ
 ثَقِفْتُمُوهُمْ وَأَخْرِجُوهُمْ مِّنْ حَيْثُ أَخْرَجُوكُمْ وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ
 مِنَ الْقَتْلِ وَلَا تَقْتُلُوهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّىٰ
 يُقَتِّلُوكُمْ فِيهِ فَإِنْ قَتَلُوكُمْ فَأَقْتُلُوهُمْ كَذَلِكَ جَزَاءُ
 الْكَافِرِينَ ﴿١٩١﴾ فَإِنْ أَنْتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١٩٢﴾ وَقَتِلُوهُمْ
 حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ فَإِنْ أَنْتَهَوْا فَلَا
 عُدْوَانَ إِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ﴿١٩٣﴾ الشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ
 وَالْحُرُمَتُ قِصَاصٌ فَمَنِ اعْتَدَىٰ عَلَيْكُمْ فَأَعْتَدُوا عَلَيْهِ
 بِمِثْلِ مَا اعْتَدَىٰ عَلَيْكُمْ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَعَ
 الْمُتَّقِينَ ﴿١٩٤﴾ وَأَنْفِقُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَلَا تُلْقُوا بِأَيْدِيكُمْ إِلَى
 التَّهْلُكَةِ وَأَحْسِنُوا إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٩٥﴾ وَأَتِمُّوا الْحَجَّ
 وَالْعُمْرَةَ لِلَّهِ فَإِنْ أُحْصِرْتُمْ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ وَلَا
 تَخْلِقُوا رُءُوسَكُمْ حَتَّىٰ يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحَلَّهُ فَمَنْ كَانَ
 مِنْكُمْ مَّرِيضًا أَوْ بِهِ أَذًى مِّن رَّأْسِهِ فَفِدْيَةٌ مِّن صِيَامٍ
 أَوْ صَدَقَةٍ أَوْ نُسُكٍ فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَمَنْ تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ إِلَى الْحَجِّ

فَمَا أَسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ فِي
الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ إِذَا رَجَعْتُمْ تِلْكَ عَشْرَةٌ كَامِلَةٌ ذَلِكَ لِمَنْ لَّمْ
يَكُنْ أَهْلُهُ حَاضِرِي الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَاتَّقُوا اللَّهَ
وَأَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿١٩٦﴾

Theme	
The moon is to determine time periods. Order to fight for a just cause. Retaliation is made lawful even in the sacred months. Commandment to give charity. Hajj and Umrah (pilgrimage to Makkah).	चाँद वक़्त की मुद्दतों के तअय्युन के लिए है। मुनसिफ़ाना मक़सद के लिए लड़ने का हुक्म दिया गया है। हुरमत वाले महीनों में भी बदला लेना जायज़ करार दिया गया है। सदक़ा देने का हुक्म दिया गया है। हज और उमरह (मक्का की ज़ियारत)।
Tarjumanī	
They question you about the new moons. Tell them: they are to determine the periods of time for the benefit of mankind and for the Hajj (pilgrimage). It is not righteous to enter your houses from the back doors during Hajj times. Righteousness is to fear Allah. Enter your houses through the proper doors and fear Allah so	ऐ नबी, लोग तुमसे चाँद की घटती-बढ़ती सूरतों के मुताल्लिक पूछते हैं। कहो, "ये लोगों के लिए तारीखों की तायीन की और हज की अलामातें है।" नीज़ उनसे कहो, "यह कोई नेकी का काम नहीं है कि तुम अपने घरों में पीछे की तरफ़ से दाखिल होते हो। नेकी तो असल में यह है कि आदमी अल्लाह की नाराज़ी से बचे। लिहाज़ा तुम अपने घरों में दरवाज़े ही से आया करो। अलबत्ता अल्लाह से डरते रहो

that you may prosper. Fight in the cause of Allah those who fight against you, but do not exceed the limits. Allah does not like transgressors. Kill them wherever they confront you in combat and drive them out of the places from which they have driven you. Though killing is bad, creating mischief is worse than killing. Do not fight them within the precincts of Al-Masjid-al-Haram unless they attack you there, but if they attack you, put them to the sword, that is the punishment for such unbelievers. If they cease hostility. then surely, Allah is Forgiving. Merciful. Fight against them until there is no more disorder and Allah's supremacy is established. If they desist, let there be no hostility except against the oppressors. The Sacred month, in which fighting is prohibited, is to be respected if the same is respected by the enemy: sacred things too are subject to retaliation. Therefore, if anyone transgresses a	शायद कि तुम्हें फ़लाह नसीब हो जाए और तुम अल्लाह की राह में उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं, मगर ज़्यादती न करो कि अल्लाह ज़्यादती करनेवालों को पसन्द नहीं करता उनसे लड़ो जहाँ भी तुम्हारा उनसे मुकाबला पेश आए, और उन्हें निकालो जहाँ से उन्होंने तुमको निकला है, इसलिए कि क़त्ल अगरचे बुरा है, मगर फ़ितना उससे भी ज़्यादा बुरा है और मस्जिदे-हराम के करीब जब तक वे तुमसे न लड़ें, तुम भी न लड़ो मगर जब वे वहाँ लड़ने से न चुकें तो तुम भी बेतकल्लुफ़ उन्हें मरो कि ऐसे काफ़िरों की यही सज़ा है फिर अगर वे बाज़ आ जाएँ तो जान लो कि अल्लाह माफ़ करनेवाला और रहम फरमानेवाला है तुम उनसे लड़ते रहो यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी न रहे और दीन अल्लाह के लिए हो जाए फिर अगर वे बाज़ आ जाएँ, तो समझ लो कि ज़ालिमों के सिवा और किसी पर दस्तदराज़ी रवा नहीं माहे-हराम का बदला माहे-हराम ही है और तमाम हुर्मतों का लिहाज़ बराबरी के साथ होगा लिहाज़ा जो तुम पर दस्तदराज़ी करे, तुम भी उसी तरह उसपर दस्तदराज़ी करो अलबत्ता अल्लाह से डरते रहो और
---	--

prohibition and attacks you, retaliate with the same force. Fear Allah, and bear in mind that Allah is with the righteous. Give generously for the cause of Allah and do not cast yourselves into destruction by your own hands. Be charitable: Allah loves those who are charitable. Complete the Hajj (obligatory pilgrimage to Makkah) and the Umrah (optional visit to Makkah) for the sake of Allah. If you are prevented from proceeding, then send such offering for sacrifice as you can afford and do not shave your head until the offerings have reached their destination. But, if any of you is ill or has an ailment in his scalp, which necessitates shaving, he must pay ransom either by fasting or feeding the poor or offering a sacrifice. If, in peacetime, anyone wants to take the advantage of performing Umrah and Hajj together, he should make an offering which he can afford; but if he cannot afford it, he	यह जान रखो कि अल्लाह उन्हीं लोगों के साथ है, जो उसकी हुदूद को तोड़ने से परहेज़ करते हैं। अल्लाह की राह में खर्च करो और अपने हाथों अपने आपको हलाकत में न डालो। एहसान का तरीका इख्तियार करो कि अल्लाह मुहसिनों को पसन्द करता है। अल्लाह की खुशनूदी के लिए जब हज और उमरे की नीयत करो, तो उसे पूरा करो, और अगर कहीं घिर जाओ तो जो कुरबानी मुयस्सर आए, अल्लाह की जनाब में पेश करो, और अपने सर न मूँडो जब तक कि कुरबानी अपनी जगह न पहुँच जाए। मगर जो शख्स मरीज़ हो या जिसके सर में कोई तकलीफ़ हो और इस बिना पर अपना सिर मूँडवाले, तो उसे चाहिए कि फिदये के तौर पर रोज़े रखे या सदका दे या कुरबानी करे। फिर अगर तुम्हें अम्र नसीब हो जाए (और तुम हज से पहले मक्का पहुँच जाओ) तो जो शख्स तुममें से हज का ज़माना आने तक उमरे का फ़ायदा उठाए, वह हस्बे-मकदूर कुरबानी दे, और अगर कुरबानी मुयस्सर न हो तो तीन रोज़े हज के ज़माने में और सात घर पहुँचकर, इस तरह पुरे दस रोज़े रख ले। यह रिआयत उन लोगों के लिए
--	---

should fast three days during the Hajj and seven days on his return making ten days in all. This order is for the one whose household is not in the precincts of Al-Masjid Al-Haram. Fear Allah and know that Allah is strict in retribution.	है, जिनके घर मस्जिदे-हराम के करीब न हों अल्लाह के इन अहकाम की खिलाफवर्जी से बचो और खूब जान लो कि अल्लाह सख्त सज़ा देनेवाला है
--	--

Tafsir

They will ask you about the crescent moons. Say, 'They are set times for mankind and for the hajj.' It is not devoutness for you to enter houses by the back. Rather devoutness is possessed by those who are godfearing. So come to houses by their doors and have fear of Allah, so that hopefully you will be successful. [2:189]	वो आप से हिलाल (चाँद के पहले बारीक नज़र आने वाले हिस्से) के बारे में पूछेंगे। कह दीजिए: "ये लोगों के लिए और हज के लिए वक्त मुकर्रर करने के ज़राए हैं।" और नेकी ये नहीं कि तुम घरों में उनके पिछले हिस्सों से दाखिल हो, बल्कि नेकी तो उस शख्स की है जो तक्रवा इख्तियार करे। पस तुम घरों में उनके दरवाज़ों से दाखिल हुआ करो और अल्लाह से डरते रहो ताकि तुम कामयाब हो सको। [2:189]
They will ask you about the crescent moons.	वो आप से हिलाल (चाँद के इब्तिदाई बारीक हिस्से) के बारे में सवाल करेंगे।
The Jews asked the Prophet about this when Muadh was	यहूदियों ने नबी से इस बारे में सवाल किया जब मुआज़ आप के साथ थे,

with him and Muadh said, 'Messenger of Allah, the Jews overwhelm us and ask us a lot of questions about the crescent moons. Why does the moon first appear fine and then increase in size until it is round and then get smaller again until it looks like it did at the beginning?' Then Allah revealed this ayah. It is also said that the reason for the revelation of this ayah was that the Muslims asked the Prophet about the new moon and the reason for its waning and fullness and its difference from the sun. Ibn 'Abbas, Qatadah, ar-Rabi and others said that.	मुआज़ ने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल, यहूदी हमें घेर लेते हैं और हम से हिलाल के बारे में बहुत से सवालात करते हैं, चाँद पहले बारीक क्यों ज़ाहिर होता है फिर आहिस्ता आहिस्ता बढ़ता है यहाँ तक कि मुकम्मल गोल हो जाता है फिर दोबारा कम होना शुरू हो जाता है यहाँ तक कि वह फिर वैसा ही हो जाता है जैसा इब्तिदा में था? तब अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फरमाई, यह भी कहा गया है कि इस आयत के नाज़िल होने का सबब यह था कि मुसलमानों ने नबी से नए चाँद, उसके घटने बढ़ने, उसके मुकम्मल होने और सूरज से उसके फर्क के बारे में सवाल किया था, इब्न अब्बास, क़तादा, अर-रबीअ और दीगर ने यही बयान किया है।
'Crescent moons' (ahilla) is the plural of hilal, while it is one in reality since it occurs once in every month, although it also appears at the end. It is a reference to the passing months and the term is used to designate months because the month begins with a crescent moon. The month (shahr) takes	"हिलालें" (अहिल्ला) लफ़्ज़ हिलाल की जमअ है, हालाँकि हक़ीक़त में यह एक ही होता है क्योंकि यह हर महीने में एक बार ज़ाहिर होता है, अगरचे महीने के आखिर में भी नज़र आता है। यह गुज़रने वाले महीनों की तरफ़ इशारा है और इस इस्तिलाह को महीनों के लिए इसलिए इस्तेमाल किया जाता है कि महीना हिलाल से

its name from the fact that people make it known (tashharu) by pointing at the new moon with their hands when they see it. The term is used for the two days at the end of the month and the two at the beginning. It is also said to apply to the three at the beginning. Al-Asma'i says it is called a crescent (hilal) when it is curved like a thin thread. It is also said that it is called hilal until its light is clear in the sky, which is the seventh night. Abu-l-Abbas said that it is called hilal because the word means to raise the voice and people raise their voices when reporting its sighting. One form of the verb is used for the cry of a newborn baby. Another use is for a face shining with joy.	शुरू होता है। महीना (शहर) का नाम इस वजह से रखा गया है कि लोग इसे ज़ाहिर करते हैं (तशहरू) जब वे नए चाँद को देखकर उसकी तरफ़ हाथों से इशारा करते हैं। यह लफ़्ज़ महीने के आखिर के दो दिनों और आगाज़ के दो दिनों के लिए भी इस्तेमाल होता है, और यह भी कहा गया है कि इब्तिदा के तीन दिनों पर भी लागू होता है। अल-अस्माई कहते हैं कि इसे हिलाल उस वक़्त कहा जाता है जब वह बारीक धागे की तरह मुड़ा हुआ हो। यह भी कहा गया है कि इसे हिलाल उस वक़्त तक कहा जाता है जब तक उसकी रोशनी आसमान में वाज़ेह न हो जाए, और यह सातवीं रात होती है। अबू अल-अब्बास ने कहा कि इसे हिलाल इसलिए कहा जाता है कि इस लफ़्ज़ के मानी आवाज़ बुलंद करना हैं, और लोग इसके देखे जाने की ख़बर देते वक़्त अपनी आवाज़ बुलंद करते हैं। इसी माद्दा की एक शक़ल नवज़ाइदा बच्चे के रोने के लिए भी इस्तेमाल होती है, और एक और इस्तेमाल ख़ुशी से चमकते हुए चेहरे के लिए है।
If someone swears that he will settle a debt, or do something	अगर कोई शख्स क़सम खाए कि वह चाँद के नज़र आने पर या चाँद के

else, at the crescent moon or at the beginning of the crescent and does that a day or two after the crescent moon, he has not broken his oath. All the months are valid times for all sorts of acts of worship and transactions.	शुरू होते ही कोई कर्ज अदा करेगा या कोई और काम अंजाम देगा, और वह यह काम चाँद के नज़र आने के एक या दो दिन बाद करे, तो उसने अपनी क़सम नहीं तोड़ी। तमाम महीने हर क़िस्म की इबादात और मामलात के लिए दुरुस्त वक़्त होते हैं।
Say, 'They are set times for mankind and for the hajj.'	कह दीजिए: "वह लोगों के लिए और हज के लिए मुक़र्ररा औक़ात हैं।"
This explains the legal ruling applied to the waxing and waning of the moon. It removes doubt about the length of set terms and transactions, oaths, hajj, 'iddah, fasting and breaking the fast, and the extent of pregnancy, wages and hire and other things. This is referred to in the ayah: 'We made the night and day two Signs. We blotted out the Sign of the night and made the Sign of the day a time for seeing so that you can seek favour from your Lord and will know the number of years and the reckoning of time.' Allah also	यह चाँद के बढ़ने और घटने के साथ संबंधित शरई हुक्म की वज़ाहत करता है। यह मुक़र्ररा मुद्दतों और मामलात, क़समों, हज, इद्दत, रोज़ा रखने और इफ़्तार करने, हम्ल की मुद्दत, उजरत और किराए और दीगर उमूर के बारे में शक को दूर करता है। इसकी तरफ़ इस आयत में इशारा किया गया है: "और हमने रात और दिन को दो निशानियाँ बनाया, फिर हमने रात की निशानी को मिटा दिया और दिन की निशानी को देखने का ज़रिया बनाया ताकि तुम अपने रब का फ़ज़ल तलाश करो और बरसों की गिनती और वक़्त का हिसाब जान सको।" अल्लाह तआला यह भी फरमाता है: "वही है जिसने सूरज को

says: 'It is He Who appointed the sun to give radiance and the moon to give light, assigning its phases so you would know the number of years and the reckoning of time.' Counting the new moons is easier than counting days.	रोशन और चाँद को नूर बनाया और उसके लिए मंज़िलें मुक़र्रर कीं ताकि तुम बरसों की गिनती और वक़्त का हिसाब जान सको।" नए चाँदों को शुमार करना दिनों की गिनती से ज़्यादा आसान है।
What we have affirmed refutes the literalists who say that sharecropping (musaqah) is permitted for an unknown number of years. They argued that the Messenger of Allah employed Jews in return for half the crops and dates without setting a time. This does not constitute evidence because the Prophet told the Jews, 'I affirm you in what Allah has affirmed you.' This is the clearest evidence that that was something specifically for him. He was awaiting a judgment concerning that from his Lord. That is not the case with other people. The Shariah deals with ideas of hire and all transactions. Nothing is permitted except what the Book	जो कुछ हमने साबित किया है वह उन ज़ाहिर परस्तों की तरदीद करता है जो कहते हैं कि बटाई (मुसाक़ात) नामालूम मुद्दत के लिए जायज़ है। उन्होंने यह दलील दी कि रसूल अल्लाह ने यहूदियों को निस्फ़्र पैदावार और खजूरों के बदले काम पर लगाया बिना किसी मुद्दत मुक़र्रर किए। यह दलील दुरुस्त नहीं क्योंकि नबी ने यहूदियों से फ़रमाया: "मैं तुम्हें उसी हालत पर बरक़रार रखता हूँ जिस पर अल्लाह ने तुम्हें बरक़रार रखा है।" यह इस बात की वाज़ेह दलील है कि यह मामला ख़ास तौर पर आप के साथ मख़सूस था। आप अपने रब की तरफ़ से इस बारे में हुक्म के मुंतज़िर थे। यह सूरत दूसरे लोगों के लिए नहीं है। शरीअत उजरत और तमाम मामलात के उसूल बयान करती है। कोई चीज़ जायज़ नहीं मगर वही जिसे किताब व

and Sunnah sets out. The imams of the community state that.	सुन्नत ने मुकर्रर किया हो। उम्मत के आइम्मा ने भी यही बात बयान की है।
‘Set times’ (mawaqit) is the plural of miqat. It is also said that miqat refers to the end of a period, and that mawaqit is not declinable and has no singular form. Hajj is only mentioned because it is something whose time needs to be known and it is not permitted to delay it beyond its time, which differs from what the pre-Islamic Arabs thought because they used to alter the months. Allah nullified what they said and did as will be discussed in at-Tawbah, Allah willing.	‘मुकर्ररा औक़ात’ (मवाक़ीत) दरअसल ‘मीक़ात’ की जम्अ है। यह भी कहा जाता है कि ‘मीक़ात’ किसी मुद्दत के इख़िताम को कहते हैं, और ‘मवाक़ीत’ ग़ैर मंसर्फ़ है और इसकी कोई वाहिद शक़्ल नहीं है। हज का ख़ास तौर पर ज़िक्र इसलिए किया गया है कि यह ऐसा अमल है जिसके वक़्त को जानना ज़रूरी है और इसे उसके मुकर्रर वक़्त से मोअख़्ख़र करना जायज़ नहीं। यह बात क़ब्ल-ए-इस्लाम अरबों के तरीक़े से मुख़्तलिफ़ है, क्योंकि वे महीनों में रद्द-ओ-बदल किया करते थे। अल्लाह तआला ने उनके क़ौल व फ़ैअल को बातिल क़रार दिया, जैसा कि इंशाअल्लाह सूरह तौबा में इसकी तफ़सील आएगी।
Malik and Abu Hanifah used this ayah as evidence that ihram can be validly adopted outside the months of hajj because Allah Almighty here makes all the crescent moons apply to it. This is contrary to the position taken by ash-	इमाम मालिक और इमाम अबू हनीफ़ा ने इस आयत से यह इस्तिदलाल किया है कि एहराम हज के महीनों के अलावा भी दुरुस्त तौर पर बांधा जा सकता है, क्योंकि अल्लाह तआला ने यहाँ तमाम हिलालों को इस पर मुनतबिक किया

Shafi'i in view of the words of Allah: 'The hajj takes place during certain well-known months' as we will discover when we come to that ayah. The meaning of this ayah, then, is that some crescent moons are times for people (in general) and some are times for hajj (specifically).	है। यह मौक़िफ़ इमाम शाफ़ई के क़ौल के ख़िलाफ़ है, जो अल्लाह तआला के इस फ़रमान की बुनियाद पर है: "हज चंद मालूम महीनों में होता है", जैसा कि हम इस आयत पर पहुँच कर वाज़ेह करेंगे। पस इस आयत का मफ़हूम यह है कि कुछ हिलाल आम लोगों के लिए औक़ात हैं और कुछ ख़ास तौर पर हज के लिए मुक़र्ररा औक़ात हैं।
There is no disagreement between scholars that if someone sells known goods at a known term in the months or days of the customary Arab dating system, that is permitted. That is the same with a sale on credit with a known period of time. They disagree about someone who sells something which is to be paid for at harvest time or the arrivals of stipends or the like. Malik said, 'That is permitted because it is known.' Abu Thawr said that. Ahmad said, 'I hope that there is nothing wrong with it.' The same is true when setting a time such as the arrival of an expedition. Ibn	इस बात पर उलमा के दरमियान कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि अगर कोई शख्स मआरूफ़ अशिया को अरबों के मआरूफ़ तक्रवीमी महीनों या दिनों में एक मालूम मुद्दत के लिए फ़रोख़्त करे तो यह जायज़ है। इसी तरह मालूम मुद्दत के साथ उधार पर फ़रोख़्त भी जायज़ है। अलबत्ता उस शख्स के बारे में इख़्तिलाफ़ है जो कोई चीज़ इस शर्त पर बेचे कि उसकी क़ीमत फ़सल की कटाई के वक़्त या वज़ीफ़ों की आमद या इस जैसी किसी चीज़ के वक़्त अदा की जाए। इमाम मालिक ने कहा: "यह जायज़ है क्योंकि यह मालूम है।" अबू थौर ने भी यही कहा। अहमद ने कहा: "मुझे उम्मीद है कि इसमें कोई हरज नहीं।" इसी तरह किसी वक़्त

‘Umar said that one can sell with payment due at the time of the payment of the stipend. One group said that it is not permitted because Allah Almighty set times and made them the markers for time periods in sales. Ibn ‘Abbas said that. Ash-Shafi‘i and an-Numan stated that. Ibn al-Mundhir said that the view of Ibn ‘Abbas is sound.	को किसी मुहिम की आमद के साथ मुक़रर करना भी है। इब्र उमर (रज़ि.) ने कहा कि वज़ीफ़ा मिलने के वक़्त अदायगी की शर्त पर बैअ की जा सकती है। एक गिरोह ने कहा कि यह जायज़ नहीं क्योंकि अल्लाह तआला ने औक़ात मुक़रर किए हैं और उन्हें बैअ में मुद्दत के तअय्युन का मेयार बनाया है। इब्र अब्बास (रज़ि.) ने यही कहा, और इमाम शाफ़र्रै और नुमान ने भी यही मौक़िफ़ इख़्तियार किया। इब्र अल-मुंधिर ने कहा कि इब्र अब्बास (रज़ि.) का क़ौल दुरुस्त है।
When the crescent moon is seen to be large, our scholars say that one does not rely on whether it is large or small. It is the product of its night. Muslim related that Abu-l-Bakhtari said, ‘We went out on ‘umrah. When we camped at Baṭn Nakhlah, we saw the new moon. Some of the people said that it was three nights old and some said two nights. We met Ibn ‘Abbas and said, “We saw the new moon and some of the people said that it was three	जब चाँद बड़ा दिखाई दे तो हमारे उलमा कहते हैं कि उसके बड़े या छोटे होने पर एतिबार नहीं किया जाता, बल्कि उसका एतिबार उसी रात के मुताबिक होता है जिसमें वह नज़र आया हो। इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया है कि अबू अल-बख़्तरी ने कहा: “हम उमरा के लिए निकले। जब हम बतन नख़ला में ठहरे तो हमने नया चाँद देखा। लोगों में से कुछ ने कहा कि यह तीन रातों का है और कुछ ने कहा दो रातों का है। हम इब्र अब्बास (रज़ि.) से मिले और कहा: ‘हमने नया चाँद देखा और कुछ

nights old and some said two nights.” He asked, “Which night did you see it?” We told him and he said, “The Messenger of Allah said, ‘Allah has extended this for seeing. It was the night you saw it.’”	लोगों ने कहा कि यह तीन रातों का है और कुछ ने कहा दो रातों का है।’ उन्होंने पूछा: ‘तुमने उसे किस रात देखा था?’ हमने बताया तो उन्होंने कहा: ‘रसूल अल्लाह ने फ़रमाया: अल्लाह ने इसे देखने के लिए बढ़ाया है, वह उसी रात का है जिसमें तुमने उसे देखा।’”
It is not devoutness for you to enter houses by the back.	तुम्हारे लिए यह नेकी नहीं कि तुम घरों में पिछली तरफ़ से दाख़िल हो।
This is mentioned together with talking about the time of the hajj because the questions about the crescent moons and entering houses from their backs were asked together and the ayah was revealed in answer to both of them.	यह बात हज के वक़्त के ज़िक्र के साथ इसलिए बयान की गई है कि हिलाल के बारे में सवाल और घरों में पिछली तरफ़ से दाख़िल होने के बारे में सवाल एक साथ किए गए थे, और यह आयत दोनों के जवाब में नाज़िल हुई।
If the Ansar set out on hajj and then returned for something they would not enter the doors of their houses. After they had adopted ihram for hajj or ‘umrah, they were not allowed to have anything come between them and the sky, so if one of them returned to get something, he would not go inside his	अगर अंसार हज के लिए निकलते और फिर किसी चीज़ के लिए वापस आते तो वे अपने घरों के दरवाज़ों से दाख़िल नहीं होते थे। जब वे हज या उमरा के लिए एहराम बांध लेते तो उनके लिए यह मुनासिब नहीं समझा जाता था कि उनके और आसमान के दरमियान कोई चीज़ हाइल हो। चुनांचे अगर उनमें से कोई किसी

house because the ceiling would come between him and the sky. Instead, he would climb up the outside walls onto the roof and then stand by his room and ask for whatever he needed which would be brought out to him. They used to think that this was piety and devoutness and Allah refuted that, making it clear that piety consists obeying Him.	ज़रूरत के लिए वापस आता तो वह अपने घर के अंदर दाखिल नहीं होता था क्योंकि छत उसके और आसमान के दरमियान हाइल हो जाती। इसके बजाय वह बाहर की दीवारों पर चढ़कर छत पर जाता, फिर अपने कमरे के करीब खड़ा होकर अपनी ज़रूरत की चीज़ मांगता और वह उसे बाहर ला कर दी जाती। वे समझते थे कि यही नेकी और परहेज़गारी है, लेकिन अल्लाह तआला ने इसकी तरदीद की और वाज़ेह किया कि असल नेकी उसकी इताअत में है।
As transmitted by Abu salih, Ibn ‘Abbas said, ‘During the time of the Jahiliyyah, and also at the beginning of Islam, when someone adopted ihram for the hajj and was one of the people who live in houses, he would make a hole in the back of his house and enter and leave through it or put a ladder up and climb up and descend by it. If he lived in a tent, he would enter by the back of the tent unless he was one of the ḥums.’ Az-Zuhri related that the	अबू सालेह की रिवायत के मुताबिक इब्न अब्बास (रज़ि.) ने फ़रमाया: “जाहिलिय्यह के ज़माने में, और इस्लाम के इबतिदाई दौर में भी, जब कोई शख्स हज के लिए एहराम बांधता और वह घरों में रहने वालों में से होता, तो वह अपने घर के पिछले हिस्से में एक सुराख बना लेता और उसी से दाखिल होता और निकलता, या सीढ़ी लगाकर ऊपर चढ़ता और उसी से उतरता। अगर वह खेमे में रहता तो खेमे के पिछले हिस्से से दाखिल होता, सिवाए इसके कि वह हुम्स में से होता।” अज़-ज़ुहरी ने

Prophet adopted ihram for 'umrah in the time of Hdaybiyah and entered his room and one of the Ansar entered after him and made a hole in the wall as was his custom. They asked him, 'Why did you go inside when you are in ihram?' The man replied, 'You entered and so I entered.' The Prophet said, 'I am one of the hams,' meaning those who do not follow that as a din. The man said to him, 'I have the same din as you do,' and the ayah was revealed. Ibn Abbas, Aṭa and Qatadah said that. It is said that the man was Qutbah ibn Amir al-Anṣari. Hams means the tribes of Quraysh, Kinanah, Khuzaah, Thaqif, Jushm, Banu Amir ibn Ṣaṣaah and the Banu Nasr ibn Muawiyah. It derives from their zealously (ḥamasah) in their din.	रिवायत किया है कि नबी ने हुदैबिया के ज़माने में उमरा के लिए एहराम बांधा और अपने कमरे में दाखिल हुए। एक अंसारी भी आपके पीछे दाखिल हुआ और अपनी आदत के मुताबिक दीवार में सुराख किया। लोगों ने उससे पूछा: "जब तुम एहराम में हो तो अंदर क्यों गए?" उसने जवाब दिया: "आप दाखिल हुए तो मैं भी दाखिल हुआ।" नबी ने फ़रमाया: "मैं हुम्स में से हूँ", यानी उन लोगों में से जो इस तरीक़े को दीन नहीं समझते। उस शख्स ने कहा: "मेरा दीन भी आप ही का दीन है", तो इस पर यह आयत नाज़िल हुई। इब्न अब्बास (रज़ि.), अता और क़तादा ने यही बयान किया है। कहा जाता है कि वह शख्स कुत्बह बिन आमिर अंसारी थे। हुम्स से मुराद कुरैश, किनाना, ख़ुज़ा'आ, सक्रीफ़, जुश्म, बनू आमिर बिन सास'आह और बनू नस्र बिन मुआविया के क़बाइल हैं। यह नाम उनके दीन में शिद्दत (हमासत) की वजह से पड़ा।
There is some disagreement about the interpretation of this phrase. What we have already mentioned is said about it and	इस इबारत की तफ़्सीर के बारे में कुछ इख़्तिलाफ़ पाया जाता है। जो कुछ हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं वही इसके बारे में कहा जाता है और वही

it is sound. It is said that it is about delaying the hajj; they would make a month sacred that was not normally sacred by delaying the hajj so that it took place in it and thereby they also made a sacred month no longer sacred by removing the hajj from it. According to this, mentioning houses is based on the disagreement about the obligation in respect of the hajj and its months. Some of this will be mentioned in at-Tawbah, Allah willing. Abu Ubaydah said that the ayah is a metaphor and means: 'It is not devoutness to ask the ignorant, but it is to have fear of Allah and to ask those with knowledge.' This is similar to the words, 'I approached the matter by its door.'	दुरुस्त है। यह भी कहा जाता है कि इससे मुराद हज को मुअख्खर करना है; वे लोग महीनों को आगे-पीछे करके किसी ऐसे महीने को मुक़द्दस बना देते थे जो असल में मुक़द्दस नहीं था, ताकि हज उसमें अदा करें, और इस तरह एक मुक़द्दस महीने को ग़ैर मुक़द्दस बना देते थे क्योंकि उसमें से हज को हटा देते थे। इस बिना पर घरों का ज़िक्र हज और उसके महीनों की फ़र्जियत के बारे में इख़्तिलाफ़ के साथ मुतअल्लिक़ है। इसमें से कुछ बातें इंशाअल्लाह सूरह तौबा में बयान की जाएँगी। अबू उबैदा ने कहा कि यह आयत बतौर इस्तिआरा है, और इसका मतलब है: "नेकी यह नहीं कि तुम जाहिलों से सवाल करो, बल्कि नेकी यह है कि तुम अल्लाह से डरो और अहल-ए-इल्म से सवाल करो।" यह इस क़ौल की तरह है: "मैंने मामले को उसके दरवाज़े से इख़्तियार किया।"
It is related by al-Mahdawi, Makki from Ibn al-Anbari and al-Mawardi from Ibn Zayd that the ayah is a metaphor for having sex with wives, and men are being instructed to have sex from the front and not	अल-महदावी, मक्की ने इब्न अल-अनबारी से और अल-मावर्दी ने इब्न ज़ैद से रिवायत किया है कि यह आयत बतौर इस्तिआरा बीवियों के साथ मुबाशरत के बारे में है, और मर्दों को हुक्म दिया गया है कि वे

the back. Women are called 'houses' because one comes to them as one comes to houses. Ibn Atiyyah said, 'This is unlikely and alters the form of the words.' Al-Hasan said, 'They used to look for omens. If someone went on a journey and did not achieve what he needed, he would come to his house from the back of it because of the ill omen of disappointment. They were told, "There is no devoutness in omens. Devoutness is to be godfearing and trust in Allah.'	सामने से जिमा करें न कि पीछे से। औरतों को "घर" कहा गया है क्योंकि उनके पास उसी तरह आया जाता है जैसे घरों के पास आया जाता है। इब्न अतिय्या ने कहा: "यह क़ौल बर्द है और अल्फ़ाज़ की हैअत को बदल देता है।" हसन ने कहा: "वे लोग फ़ाल निकालते थे। अगर कोई शख्स सफ़र पर जाता और अपनी हाजत पूरी न कर पाता तो वह मायूसी के बदशगुन की वजह से अपने घर के पिछले हिस्से से दाख़िल होता था। उन्हें कहा गया: 'फ़ाल में कोई नेकी नहीं। नेकी तो अल्लाह से डरने और उस पर भरोसा करने में है।'"
The first view is the soundest one because of what al-Bara' related: 'When the Ansar went on hajj and returned, they would not enter the houses by their doors.' He said that one of the Ansar came and entered his house by the door and was asked about that and so the ayah was revealed. This is a text about actual houses. Al-Bukhari and Muslim transmitted it. The other views are derived from something	पहला क़ौल सबसे ज़्यादा दुरुस्त है, क्योंकि बराअ (रज़ि.) की रिवायत के मुताबिक: "जब अंसार हज के लिए जाते और वापस आते तो वे घरों में उनके दरवाज़ों से दाख़िल नहीं होते थे।" उन्होंने कहा कि एक अंसारी आया और अपने घर में दरवाज़े से दाख़िल हुआ, तो उससे इस बारे में पूछा गया, चुनांचे यह आयत नाज़िल हुई। यह हक़ीक़ी घरों के बारे में सरीह नस् है। इसे इमाम बुख़ारी और इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया है। दूसरे अक़वाल आयत के किसी और

else in the ayah. It is also said that in the ayah Allah calls attention to what devoutness is, and it is doing what Allah has commanded. When Allah says to ‘come to houses by their doors’, He is telling people to do things in the manner which Allah has recommended. So the views are sound. ‘Houses’ is the plural of bayt, and it is read as both buyut and biyut.	पहलू से माखूज़ हैं। यह भी कहा गया है कि इस आयत में अल्लाह तआला ने नेकी की हक़ीक़त की तरफ़ तवज्जोह दिलाई है, और वह यह है कि अल्लाह के हुक्म की पैरवी की जाए। जब अल्लाह फ़रमाता है कि “घरों में उनके दरवाज़ों से आओ”, तो इसका मतलब यह है कि लोग काम उसी तरीक़े से करें जो अल्लाह ने मुक़र्रर फ़रमाया है। लिहाज़ा यह तमाम अक़वाल अपने-अपने एतिबार से दुरुस्त हैं। “घर” (बयूत) ‘बैत’ की जम्अ है, और इसे ‘बयूत’ और ‘बुयूत’ दोनों तरह पढ़ा जाता है।
This ayah also makes clear that anything Allah has not prescribed or recommended as an act of devotion is not, in fact, an act of devotion. Ibn Khuwayzimandad said, ‘If it is hard to differentiate between what is devoutness and devotion and what is not, examine the action involved. If it is similar in nature to other legal obligations and sunnahs, then it can be that. If that is not the case, then it is not devoutness or devotion.’ He	यह आयत इस बात को भी वाज़ेह करती है कि जो चीज़ अल्लाह तआला ने इबादत के तौर पर न मुक़र्रर की हो और न उसकी तरगीब दी हो, वह दरअसल इबादत नहीं है। इब्न ख़ुवैज़िमंदाद ने कहा: “अगर यह तुम्हारे लिए मुश्किल हो जाए कि कौन सी चीज़ नेकी और इबादत है और कौन सी नहीं, तो उस अमल को देखो। अगर वह अपनी नौइयत में दूसरे शरई फ़राइज़ और सुन्नतों के मुशाबेह हो तो मुमकिन है कि वह इबादत हो, और अगर ऐसा न हो तो वह न नेकी है न इबादत।” उन्होंने

added, 'That is found in reports from the Prophet.' And he mentioned the hadith of Ibn 'Abbas who said, 'Once, when the Messenger of Allah was speaking, he saw a man standing in the sun and asked about him. They said, 'He is Abu Israil. He made a vow to stand and not sit, not to seek shade or speak, and to fast.' The Prophet said, 'Tell him to speak, seek shade and sit. He should complete his fast.' So the Prophet nullified what was not devotion and had no basis in the Shariah. This confirms that devotion is an action which is somehow similar to other legal obligations and sunnahs.	मज़ीद कहा: "यह बात नबी से मर्वी अहादीस में भी मिलती है।" और उन्होंने इब्न अब्बास (रज़ि.) की हदीस का ज़िक्र किया, जिन्होंने कहा: "एक मर्तबा रसूल अल्लाह खुल्बा दे रहे थे कि आपने एक शख्स को धूप में खड़ा देखा और उसके बारे में पूछा। लोगों ने कहा: 'यह अबू इस्राईल है। उसने नज़र मानी है कि वह खड़ा रहेगा, नहीं बैठेगा, न साया इस्तियार करेगा, न बात करेगा, और रोज़ा रखेगा।' नबी ने फ़रमाया: 'उसे कहो कि बात करे, साया इस्तियार करे और बैठ जाए, अलबत्ता अपना रोज़ा पूरा करे।'" पस नबी ने उन उमूर को बातिल करार दिया जो इबादत नहीं थे और जिनकी शरीअत में कोई अस्ल नहीं थी। इससे यह बात साबित होती है कि इबादत वही अमल है जो किसी न किसी तरह शरई फ़राइज़ और सुन्नतों के मुशाबेह हो।
Fight in the Way of Allah against those who fight you, but do not go beyond the limits. Allah does not love those who go beyond the limits. [2:190]	अल्लाह की राह में उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं, लेकिन हद से न बढ़ो। बेशक अल्लाह हद से बढ़ने वालों को पसंद नहीं करता। [2:190]
Fight in the Way of Allah	अल्लाह की राह में उन लोगों से

against those who fight you	लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं।
This was the first ayah to be revealed with the command to fight. There is no disagreement that fighting was forbidden before the Hijrah by the words of Allah: ‘Repel the bad with something better’ ‘Pardon them and overlook’, ‘Cut yourself off from them – but courteously’ ‘You are not in control of them’ and other similar ayahs which were revealed in Makkah. When the Prophet emigrated to Madinah, he was commanded to fight and this ayah was revealed. Ar-Rabi ibn Anas and others said this. Abu Bakr as-Siddiq, however, said that the first ayah revealed about fighting was the ayah in Surat al-Hajj: ‘Permission is given to those who are fought against because they have been wronged.’ The one in this surah is more frequently cited as being the first.	यह पहली आयत थी जो क़िताल के हुक्म के साथ नाज़िल हुई। इस बात पर कोई इख़िलाफ़ नहीं कि हिजरत से पहले क़िताल ममनूअ था, जैसा कि अल्लाह तआला के इन फ़रमानों से ज़ाहिर है: “बुराई को भलाई से टालो”, “उन्हें माफ़ करो और दरगुज़र करो”, “उनसे अच्छे तरीक़े से किनारा-कशी इख़्तियार करो”, “तुम उन पर मुसल्लत नहीं हो” और इसी तरह की दूसरी आयतें जो मक्का में नाज़िल हुईं। जब नबी मदीना की तरफ़ हिजरत कर गए तो आपको क़िताल का हुक्म दिया गया और यह आयत नाज़िल हुई। रबीअ बिन अनस और दूसरों ने यही कहा है। हालांकि अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) ने फ़रमाया कि क़िताल के बारे में सबसे पहली नाज़िल होने वाली आयत सूरह अल-हज्ज की यह आयत है: “इजाज़त दी गई उन लोगों को जिनसे लड़ाई की जा रही है क्योंकि उन पर जुल्म हुआ है।” लेकिन इस सूरह की आयत को ज़्यादातर पहली आयत क़रार दिया जाता है।
The ayah for the permission to fight was revealed about	क़िताल की इजाज़त वाली यह आयत उमूमी तौर पर लड़ाई के बारे में

fighting in general and the instruction is to fight not only those idolators who fight the Muslims but also those who do not fight. The command refers to the time when the Prophet went out with his Companions to Makkah to perform umrah. When he camped at Hdaybiyyah near Makkah, the idolators prevented him from continuing on into Makkah and he remained there for a month. Hdaybiyyah is the name of a well and that site is named after the well. They made a treaty stipulating that he could return the following year for three days and that there would be no fighting between them for ten years. After concluding this treaty, he returned to Madinah. The following year he made preparations for hajj and the Muslims feared the treachery of the unbelievers and did not like the idea of fighting in the sacred months and in the Haram.	नाज़िल हुई, और इसमें हुक्म दिया गया है कि न सिर्फ़ उन मुशरिकीन से क़िताल किया जाए जो मुसलमानों से लड़ते हैं बल्कि उनसे भी जो नहीं लड़ते। यह हुक्म उस वक़्त से मुतअल्लिक़ है जब नबी ﷺ अपने सहाबा के साथ उमरा अदा करने के लिए मक्का की तरफ़ रवाना हुए। जब आप मक्का के करीब हुदैबिया के मक़ाम पर ठहरे तो मुशरिकीन ने आपको मक्का में दाख़िल होने से रोक दिया, और आप वहाँ एक माह तक मुक़ीम रहे। हुदैबिया एक कुएँ का नाम है और वह जगह उसी के नाम से मशहूर है। वहाँ एक मुआहिदा तय पाया जिसके मुताबिक़ आप अगले साल तीन दिन के लिए वापस आ सकते थे और दोनों फ़रीक़ों के दरमियान दस साल तक कोई जंग नहीं होगी। इस मुआहिदे के बाद आप मदीना वापस लौट आए। अगले साल आपने हज की तैयारी की, और मुसलमानों को काफ़िरों की बदअहदी का ख़ौफ़ था, और वे हुरमत वाले महीनों और हरम में लड़ाई को नापसंद करते थे।
Then this ayah was revealed,	फिर यह आयत नाज़िल हुई, यानी

meaning that it is lawful for you to fight if the unbelievers fight you. So the ayah is connected to the prior mention of hajj and entering houses by the back. After this the Prophet fought those who fought him and refrained from fighting those who refrained from fighting him until the ayah in Surat at-Tawbah was revealed, 'Fight the idolaters,' and this ayah was abrogated. This is the position of the majority of scholars.	तुम्हारे लिए लड़ना जायज़ है अगर काफ़िर तुमसे लड़ें। पस यह आयत हज के साबिका ज़िक्र और घरों में पिछली तरफ़ से दाख़िल होने के ज़िक्र के साथ मर्तबित है। इसके बाद नबी ने उन लोगों से क़िताल किया जो आपसे लड़ते थे और उन से क़िताल से बाज़ रहे जो आपसे नहीं लड़ते थे, यहाँ तक कि सूरह तौबा की आयत नाज़िल हुई: "मुशरिकीन से क़िताल करो", और इस आयत को मंसूख कर दिया गया। यही अक्सर उलमा का मौक़िफ़ है।
Ibn Zayd and ar-Rabi, however, say that this ayah was abrogated by Allah's words: 'Fight the idolaters totally' in which he was commanded to fight all the unbelievers. Ibn Abbas, Umar ibn Abd al-Aziz, and Mujahid said that it is an ayah whose judgement remains operative and means: 'Fight those who fight you and do not transgress by killing women, children, monks and the like' as will be explained. Abu Jafar an-Nahhas said that this is the	अलबत्ता इब्र ज़ैद और रबीअ का कहना है कि यह आयत अल्लाह तआला के इस फ़रमान से मंसूख हो गई: "मुशरिकीन से पूरी तरह क़िताल करो", जिसमें तमाम काफ़िरों से लड़ने का हुक्म दिया गया। जबकि इब्र अब्बास (रज़ि.), उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह.) और मुजाहिद (रह.) का कहना है कि यह आयत मुहकम है और इसका हुक्म बाक़ी है, और इसका मतलब यह है: "उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं और हद से तजावुज़ न करो, जैसे औरतों, बच्चों, राहिबों वग़ैरह को क़त्ल

sounder position in terms of both the Sunnah and in terms of logic. As for the Sunnah, there is a hadith reported by Ibn Umar that, during one of his expeditions, the Messenger of Allah saw a woman who had been killed and he abhorred that and forbade the killing of women and children. As for logic, it applies to children and those like them, such as monks, the chronically ill, old men and hirelings, who clearly should not be killed. When Abu Bakr sent Yazid ibn Abi Sufyan to Syria, he commanded that he should not do harm to certain groups. Malik and others transmitted this. Scholars put those who should not be killed into six categories.	करना”, जैसा कि आगे वज़ाहत होगी। अबू जाफ़र अन-नहहास ने कहा कि सुन्नत और अक़ल दोनों के एतिबार से यही क़ौल ज़्यादा दुरुस्त है। सुन्नत के एतिबार से, इब्न उमर (रज़ि.) की रिवायत है कि एक ग़ज़वा के दौरान रसूल अल्लाह ने एक मक़तूल औरत को देखा तो उसे नापसंद फ़रमाया और औरतों और बच्चों को क़त्ल करने से मना किया। और अक़ल के एतिबार से भी, बच्चे और उन जैसे अफ़राद जैसे राहिब, दाइमी मरीज़, बूढ़े लोग और मज़दूर वाज़ेह तौर पर क़त्ल के मुस्तहिक्क नहीं होते। जब अबू बक्र (रज़ि.) ने यज़ीद बिन अबी सुफ़यान को शाम की तरफ़ भेजा तो उन्हें हुक्म दिया कि कुछ गिरोहों को नुक़सान न पहुँचाएँ। इसे इमाम मालिक और दूसरों ने रिवायत किया है। उलमा ने उन लोगों को जिन्हें क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए, छह क़िस्मों में तक़सीम किया है।
Women. But if they fight, they should be fought. Sahnun said, ‘In battle and out of it because of the general nature of Allah’s words: “Fight against those who fight you.” A woman can have an immense effect on the	औरतें। लेकिन अगर वे लड़ें तो उनसे भी लड़ा जाएगा। सहनून ने कहा: “चाहे मैदान-ए-जंग में हों या उसके बाहर, क्योंकि अल्लाह तआला के इस फ़रमान की आमियत है: ‘उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं।’

fighting, including supplying assistance and encouraging fighting. Women go out with their hair undone, shouting encouragement and censuring flight. So it is permitted to kill them. If they are captured, however, then enslavement is more beneficial since they are more easily converted and it is difficult for them to run away which is not the case with men.'	औरत जंग में बड़ा असर डाल सकती है, जैसे मदद फ़राहम करना और लोगों को लड़ाई पर उभारना। औरतें खुले बालों के साथ निकलती हैं, जोश दिलाती हैं और भागने वालों को मलामत करती हैं, इसलिए उन्हें क़त्ल करना जायज़ है। लेकिन अगर वे कैद हो जाएँ तो उन्हें गुलाम बनाना ज़्यादा मुफ़ीद है, क्योंकि वे आसानी से इस्लाम क़बूल कर सकती हैं और उनके लिए भागना मुश्किल होता है, जो मर्दों के बरअक्स है।"
Children. Children should not be killed and that is a firm prohibition. If a child fights, however, then he can be killed.	बच्चे। बच्चों को क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए और यह एक क़तई ममनूअत है। हालांकि अगर कोई बच्चा लड़े तो उसे क़त्ल किया जा सकता है।
Monks. Monks should be neither killed nor enslaved. They are left to live on the property which they own. This is when they live apart from the people of disbelief because of the command which Abu Bakr gave to Yazid ibn Abi Sufyan, 'You will find some people who claim that they have confined themselves for the sake of Allah. Leave them with	राहिब। राहिबों को न क़त्ल किया जाएगा और न ही गुलाम बनाया जाएगा। उन्हें उनकी मिल्कियत में रहने दिया जाएगा। यह उस सूरत में है जब वे काफ़िरों से अलग-थलग रहते हों, जैसा कि अबू बक्र (रज़ि.) ने यज़ीद बिन अबी सुफ़यान को हुक्म दिया था: "तुम कुछ लोगों को पाओगे जो दावा करते हैं कि उन्होंने अपने आपको अल्लाह के लिए वक्फ़ कर रखा है, उन्हें उनके हाल पर छोड़ दो

what they claim.’ If, however, they are with the unbelievers in churches, they can be killed. As for nuns, Ashhab thinks that they should not be killed. Sahnun said, ‘Being a nun does not alter the basic ruling about her as a woman.’ Qadi Abu Bakr ibn al-Arabi said, ‘I think that the sound view is that of Ashhab and nuns are included in the directive of Abu Bakr.’	जिसका वे दावा करते हैं।” लेकिन अगर वे काफ़िरों के साथ गिरजों में हों तो उन्हें क़त्ल किया जा सकता है। जहाँ तक राहिबात (नन) का तअल्लुक है, अशहब का खयाल है कि उन्हें क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए। सहनून ने कहा: “राहिबा होना उसके बारे में बुनियादी हुक्म को नहीं बदलता जो एक औरत के बारे में है।” क़ाज़ी अबू बक्र इब्न अल-अरबी ने कहा: “मेरी राय में दुरुस्त मौक़िफ़ अशहब का है, और राहिबात भी अबू बक्र (रज़ि.) की हिदायत में शामिल हैं।”
The chronically ill. Sahnun says that they should be killed. Ibn Ḥabib says that they should not be killed. The sound position is that we consider their states. If there is potential harm in them, they should be killed. Otherwise, they should be left alone.	दायमी बीमार। सहनून कहते हैं कि उन्हें क़त्ल किया जाना चाहिए। इब्न हबीब कहते हैं कि उन्हें क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए। दुरुस्त मौक़िफ़ यह है कि उनकी हालत को देखा जाए। अगर उनसे किसी नुक़सान का अंदेशा हो तो उन्हें क़त्ल किया जाए, वरना उन्हें छोड़ दिया जाए।
Old men. Malik says that they should not be killed and that is the position of the majority of fuqaha’. If an old man is senile and unable to fight and not consulted for his opinion or	बूढ़े मर्द। इमाम मालिक कहते हैं कि उन्हें क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए, और यही अक्सर फ़ुक़हा का मौक़िफ़ है। अगर कोई बूढ़ा शख्स कमज़ोर हो, लड़ने से आजिज़ हो और न

taking part in defence, he should not be killed. Malik and Abu Hanifah say that. Ash-Shafi'i has two positions: one is that of the majority and the second is that old men and monks should be killed. The sound position is the first one because of what Abu Bakr said to Yazid. No one opposes it and there is a consensus to back it up. Also it is not permitted to kill anyone who does not fight or help the enemy, like women. As for those harm is feared in respect of planning, advice or monetary support, if they are captured, the ruler can choose between five options: killing, an act of good will, ransom, enslavement or agreeing to become a dhimmi in return for the payment of jizyah.	उससे राय ली जाती हो और न वह दिफ़ा में हिस्सा लेता हो, तो उसे क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए। इमाम मालिक और इमाम अबू हनीफ़ा का यही क़ौल है। इमाम शाफ़ई के दो क़ौल हैं: एक वही जो जमहूर का है, और दूसरा यह कि बूढ़ों और राहिबों को क़त्ल किया जाए। दुरुस्त क़ौल पहला है, क्योंकि अबू बक्र (रज़ि.) ने यज़ीद को यही हिदायत दी थी, और इसकी कोई मुखालफ़त नहीं, बल्कि इस पर इज्मा है। इसी तरह किसी ऐसे शख्स को क़त्ल करना जायज़ नहीं जो न लड़ता हो और न दुश्मन की मदद करता हो, जैसे औरतें। अलबत्ता जिन लोगों से मंसूबाबंदी, मशवरा या माली मदद के ज़रिये नुक़सान का अंदेशा हो, अगर वे गिरफ़्तार हो जाएँ तो हाकिम के पास पाँच इख़्तियार होते हैं: क़त्ल करना, एहसान के तौर पर छोड़ देना, फ़िद्या लेना, गुलाम बनाना, या जिज़्या के बदले उन्हें ज़िम्मी बनने पर आमादा करना।
Hirelings and agricultural workers. Malik says that they should not be killed. Ash-Shafi'i says that agricultural workers, hirelings, and old men should	मज़दूर और किसान। इमाम मालिक कहते हैं कि उन्हें क़त्ल नहीं किया जाना चाहिए। इमाम शाफ़ई कहते हैं कि किसानों, मज़दूरों और बूढ़ों को

be killed unless they agree to pay the jizyah. The first view is sounder because of what the Prophet said in the hadith reported by Rabah ibn ar-Rabi, 'Join Khalid ibn al-Walid. He is not to kill children or hirelings.' Umar ibn al-Khattab said, 'Fear Allah regarding children and agricultural workers who do not fight you.' Umar ibn Abd al-Aziz did not kill agricultural workers. Ibn al-Mundhir mentioned that.	क़त्ल किया जाएगा, इल्ला यह कि वे जिज़्या अदा करने पर राज़ी हो जाएँ। पहला क़ौल ज़्यादा दुरुस्त है, क्योंकि नबी ने रबाह बिन रबीअ की रिवायत की हुई हदीस में फ़रमाया: "ख़ालिद बिन वलीद के साथ जाओ, वह न बच्चों को क़त्ल करे और न मज़दूरों को।" उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि.) ने फ़रमाया: "बच्चों और उन किसानों के बारे में अल्लाह से डरो जो तुमसे नहीं लड़ते।" उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह.) भी किसानों को क़त्ल नहीं करते थे। इब्न अल-मुंधिर ने इसका ज़िक्र किया है।
Ashhab mentioned that the ayah refers to those who were at Hdaybiyyah who were commanded to fight those who fought them. What is sound is that it is addressed to all Muslims: it commands each of them to fight those who fight them. Do you not see how Allah made the matter clear in Surat at-Tawbah when He says: 'Fight those of the unbelievers who are near to you,' What was meant first are the people of Makkah and it was specified to	अशहब ने ज़िक्र किया है कि यह आयत हुदैबिया के उन लोगों के बारे में है जिन्हें हुक्म दिया गया था कि वे उन से लड़ें जो उनसे लड़ते हैं। हालांकि दुरुस्त बात यह है कि यह तमाम मुसलमानों से ख़िताब है: इसमें हर एक को हुक्म दिया गया है कि वह उन से लड़े जो उससे लड़ते हैं। क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह तआला ने सूरह तौबा में इस बात को वाज़ेह किया जब फ़रमाया: "उन काफ़िरों से लड़ो जो तुम्हारे क़रीब हैं।" इब्तिदा में इससे मुराद अहल-ए-मक्का थे और सबसे पहले उन्हीं से

begin with them. When Allah conquered Makkah, then it was directed to those nearby who were causing harm until eventually the call became universal and the word reached all areas, no unbeliever remaining. That continues until the Day of Rising, supported by the words of the Prophet, 'There is good in the forelocks of horses until the Day of Rising: reward and spoils.' It is said that its end will be the descent of Jesus son of Mary which is in agreement with the previous ḥadith because his descent is one of the signs of the Final Hour.	शुरू करने की तख्तीस की गई। जब अल्लाह तआला ने मक्का को फ़तह कर दिया तो फिर हुक्म उन करीबी लोगों की तरफ़ मुतवज्जेह हुआ जो नुक़सान पहुँचा रहे थे, यहाँ तक कि यह दावत आम हो गई और हर जगह पहुँच गई, यहाँ तक कि कोई काफ़िर बाक़ी न रहा। यह सिलसिला क़यामत तक जारी रहेगा, जैसा कि नबी के इस फ़रमान से मालूम होता है: "क़यामत तक घोड़ों की पेशानियों में भलाई है: अन्न और ग़नीमत।" यह भी कहा जाता है कि इसका इख़िताम हज़रत ईसा इब्र मरियम (अलैहिस्सलाम) के नुज़ूल पर होगा, और यह बात साबिका हदीस के मुताबिक़ है, क्योंकि उनका नुज़ूल क़यामत की निशानियों में से एक है।
But do not go beyond the limits.	लेकिन हद से तजावुज़ न करो।
This is a firm judgement. As for the apostates, the only options available concerning them are execution or repentance. The same applies to people involved in deviation and misguidance: the only options afforded them are	यह एक क़तई हुक्म है। जहाँ तक मुरतदीन का तअल्लुक़ है, उनके बारे में सिर्फ़ दो ही रास्ते हैं: या तो क़त्ल किया जाए या वे तौबा करें। यही हुक्म गुमराही और इनहिराफ़ में मुबतला लोगों के लिए भी है कि उनके लिए भी यही दो रास्ते हैं: क़त्ल

execution or repentance. If someone conceals a false belief and then it appears in him, as happens with a zindiq, he should be killed and is not asked to repent. As for those who rebel against just rulers, they must be fought until they return to the truth.	या तौबा। अगर कोई शख्स बातिल अकीदा छुपाए रखे और फिर वह ज़ाहिर हो जाए, जैसा कि ज़िन्दीक़ के मामले में होता है, तो उसे क़त्ल किया जाएगा और उससे तौबा का मुतालबा नहीं किया जाएगा। जहाँ तक उन लोगों का तअल्लुक़ है जो आदिल हुक्मरानों के खिलाफ़ बगावत करें, तो उनसे उस वक़्त तक लड़ा जाएगा जब तक वे हक़ की तरफ़ वापस न आ जाएँ।
Some people have said that this phrase means: 'Do not go beyond the limits by fighting for other than the Face of Allah, out of fanaticism, for instance, or to gain fame.' In other words, 'Fight in the Way of Allah against those who fight you. Fight in support of the din so that Allah's Word is uppermost.' It is said that it means: do not fight those who do not fight. In that case it would be abrogated by the command to fight all the unbelievers, and Allah knows best.	कुछ लोगों ने कहा है कि इस जुमले का मतलब यह है: "हद से तजावुज़ न करो, यानी अल्लाह की रज़ा के अलावा किसी और मक़सद के लिए न लड़ो, मसलन असबियत या शोहरत हासिल करने के लिए।" दूसरे अल्फ़ाज़ में: "अल्लाह की राह में उन लोगों से लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं, दीन की मदद के लिए लड़ो ताकि अल्लाह का कलिमा बुलंद हो जाए।" यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है: उन लोगों से न लड़ो जो तुमसे नहीं लड़ते। इस सूरत में यह हुक्म तमाम काफ़िरों से क़िताल के हुक्म के ज़रिये मंसूख समझा जाएगा, और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
Kill them wherever you come	उन्हें जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो

across them and expel them from where they expelled you. Fitnah is worse than killing. Do not fight them in the Masjid al-Haram until they fight you there. But if they do fight you, then kill them. That is how the unbelievers should be repaid. [2:191]	और उन्हें वहाँ से निकालो जहाँ से उन्होंने तुम्हें निकाला है। फ़ित्ना क़त्ल से बढ़कर है। और मस्जिद-ए-हराम में उनसे क़िताल न करो जब तक कि वे वहाँ तुमसे क़िताल न करें। फिर अगर वे तुमसे लड़ें तो तुम भी उन्हें क़त्ल करो। यही काफ़िरों की सज़ा है। [2:191]
But if they cease, Allah is Ever-Forgiving, Most Merciful. [2:192]	लेकिन अगर वे बाज़ आ जाएँ तो बेशक अल्लाह बहुत बख़्शने वाला, निहायत रहम करने वाला है। [2:192]
Kill them wherever you come across them.	उन्हें जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो।
This is evidence for killing captives, and that topic will be explained in Surat al-Anfal, Allah willing.	यह कैदियों के क़त्ल के वाज़े पर दलील है, और इस मौज़ू की वज़ाहत इंशाअल्लाह सूरह अल-अनफ़ाल में की जाएगी।
and expel them from where they expelled you	और उन्हें वहाँ से निकालो जहाँ से उन्होंने तुम्हें निकाला है।
According to at-Tabari this is addressed to the Muhajirun and 'they' refers to the unbelievers of Quraysh.	तबरी के मुताबिक यह ख़िताब मुहाजिरीन से है और 'वह' से मुराद कुरैश के काफ़िर हैं।

Fitnah is worse than killing.	फ़ित्ना क़त्ल से बढ़कर है।
The fitnah to which they are subjecting you – trying to make you return to disbelief – is worse than killing. Mujahid said it refers to the believers, so the meaning is that being killed is better for a believer than being subjected to fitnah. Others said that fitnah here means their association of others with Allah and their disbelief in Him and it is a great crime and worse than the killing which they criticise you for. There is evidence that the ayah was revealed about Amr ibn al-Hadrami when he was killed by Waqid ibn Abdullah at-Tamimi at the end of the sacred month of Rajab, an incident which will be explained later. At-Tabari and others said that.	वह फ़ित्ना जिसमें वे तुम्हें मुबतला कर रहे हैं—यानी तुम्हें दोबारा कुफ़्र की तरफ़ लौटाने की कोशिश—क़त्ल से ज़्यादा सख़्त है। मुजाहिद ने कहा कि इससे मुराद मोमिनीन हैं, लिहाज़ा मतलब यह है कि एक मोमिन के लिए क़त्ल होना इससे बेहतर है कि उसे फ़ित्ना में डाला जाए। बाज़ दीगरों ने कहा कि यहाँ फ़ित्ना से मुराद उनका अल्लाह के साथ शिर्क करना और उसका इनकार करना है, और यह एक बड़ा जुर्म है और उस क़त्ल से भी बदतर है जिस पर वे तुम्हें मलामत करते हैं। इस बात की दलील है कि यह आयत अम्र बिन अल-हद्रमी के बारे में नाज़िल हुई जब उन्हें वाकिद बिन अब्दुल्लाह अत-तमिमी ने माह-ए-हराम रजब के आख़िर में क़त्ल किया था, जिस वाकिआ की वज़ाहत बाद में की जाएगी। तबरी और दूसरों ने यही कहा है।
Do not fight them in the Masjid al-Haram until they fight you there.	और मस्जिद-ए-हराम में उनसे क़िताल न करो जब तक कि वे वहाँ तुमसे क़िताल न करें।
Scholars take two positions concerning this ayah. One is	इस आयत के बारे में उलमा के दो

that it is abrogated. The second is that it is an ayah containing a firm judgment. Mujahid says that it is an ayah of judgment and that it is not permitted to fight anyone in the Masjid al-Haram unless they fight you there. Tawus said that as well, and indeed it is what is intimated by the text of the ayah. It is a sound position and Abu Hanifah and his people adopted it. In the Sahih Collection, Ibn Abbas reported that the Messenger of Allah said on the day when Makkah was conquered, 'This land was made sacred on the day Allah created the heavens and the earth and it will remain sacred as Allah has decreed until the Day of Rising. Fighting was not lawful in it for anyone before me and it was only lawful for me for one hour of one day and it will remain sacred until the Day of Rising.'	मौकिफ़ हैं। एक यह कि यह मंसूख है। दूसरा यह कि यह एक मुहकम आयत है। मुजाहिद कहते हैं कि यह हुक्म वाली आयत है और मस्जिद-ए-हराम में किसी से क़िताल करना जायज़ नहीं जब तक कि वे वहाँ तुमसे क़िताल न करें। ताऊस ने भी यही कहा, और यही बात आयत के ज़ाहिर से भी मालूम होती है। यह एक मज़बूत मौकिफ़ है और इमाम अबू हनीफ़ा और उनके असहाब ने भी इसे इस्तिथार किया। सहीह बुखारी व मुस्लिम में इब्न अब्बास (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ने मक्का की फ़तह के दिन फ़रमाया: "इस सरज़मीन को अल्लाह ने उस दिन से हराम करार दिया है जिस दिन उसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया, और यह क़यामत तक अल्लाह के हुक्म से हराम रहेगी। मुझ से पहले किसी के लिए इसमें क़िताल जायज़ न था, और मेरे लिए भी सिर्फ़ एक दिन के एक लम्हे के लिए जायज़ किया गया, और यह क़यामत तक हराम ही रहेगी।"
Qatadah said that the ayah is abrogated by Allah's words: 'When the sacred months are	क़तादा ने कहा कि यह आयत अल्लाह तआला के इस फ़रमान से मंसूख हो गई: "जब हुरमत वाले

over, kill the idolaters wherever you find them.' Muqatil said the same. So this means that it is possible to initiate killing in the Haram and evidence for that position can be found in the fact that Surat at-Tawbah, where this ayah occurs, was revealed about two years after Surat al-Baqarah and after the Prophet entered Makkah and had Ibn Khaṭal, who was clinging to the drapes of the Kabah, killed there.	महीने गुज़र जाँ तो मुशरिकीन को जहाँ पाओ क़त्ल करो।" मुक़ातिल ने भी यही कहा। इसके मुताबिक यह मतलब बनता है कि हरम में भी क़िताल का आगाज़ करना जायज़ हो सकता है, और इस मौक़िफ़ के हक़ में यह दलील दी जाती है कि सूरह तौबा, जिसमें यह आयत है, सूरह अल-बक़रह के तक्ररीबन दो साल बाद नाज़िल हुई, और उसके बाद जब नबी मक्का में दाख़िल हुए तो इब्र ख़तल को, जो काबा के पर्दों से चिपका हुआ था, वहीं क़त्ल करवा दिया गया।
Ibn Khuwayzimandad said that the phrase 'Do not fight them in the Masjid al-Haram' is abrogated because the consensus is that people should be fought if they attack, even if they occupy Makkah. If they stop people from performing hajj, then it is a legal obligation to fight them, even if they do not start the fighting. Makkah is the same as everywhere else in that respect.	इब्र ख़ुवैज़िमंदद ने कहा कि इबारत "उन से मस्जिद अल-हराम में क़िताल न करो" मन्सूख हो चुकी है, क्योंकि इस बात पर इज्मा है कि अगर लोग हमला करें तो उनसे लड़ा जाएगा, ख़्वाह वे मक्का ही में क्यों न हों। अगर वे लोगों को हज अदा करने से रोकें तो उनके ख़िलाफ़ क़िताल करना शरई तौर पर वाजिब है, चाहे वे खुद लड़ाई की इब्तिदा न करें। इस मामले में मक्का का हुक्म दूसरे मुक़ामात जैसा ही है।
It is said that it is a Haram which should be esteemed. Do	कहा जाता है कि यह एक हरम है जिसकी तअज़ीम की जानी चाहिए।

you not see that the Messenger of Allah sent out Khalid ibn al-Walid in the year of the Conquest, telling him, 'Reap them with your sword until you meet me on Safa.' Al-Abbas came and said, 'Quraysh are finished! There will be no Quraysh after today!' Do you not see what Allah said about the respect owed to it, that anything found there should not be picked up without it being announced, and yet that is the same with it and other places?' It is possible that it is abrogated by His words: 'Fight them until there is no more fitnah.'	क्या तुम नहीं देखते कि रसूल अल्लाह मुहम्मद ने फ़तह के साल खालिद बिन अल-वलीद को भेजा और उनसे फ़रमाया: "उन्हें अपनी तलवार से काटते जाओ यहाँ तक कि तुम सफ़ा पर मुझसे आ मिलो।" अल-अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब आए और कहा: "कुरैश ख़त्म हो गए! आज के बाद कोई कुरैश बाक़ी नहीं रहेगा!" क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह ने इसकी हु़रमत के बारे में क्या फ़रमाया है कि वहाँ पाई जाने वाली चीज़ को बिना एलान के नहीं उठाया जाए, और यही हुक्म इसके साथ दूसरे मुक़ामात के लिए भी है? मुमकिन है कि यह अल्लाह के इस फ़रमान से मन्सूख हो गया हो: "उनसे लड़ो यहाँ तक कि कोई फ़ितना बाक़ी न रहे।"
Ibn al-Arabi said, 'I was in Jerusalem on a Friday at the madrasah of Abu Uqbah al-Hanafi while Qadi az-Zanjani was giving a lesson to us. While we were there, a man with a radiant countenance with rags on his back entered. He gave the greeting of scholars and went to the front of the	इब्र अल-अरबी ने कहा: "मैं जुमआ के दिन यरुशलम में अबू उक्बह अल-हनफ़ी के मदरसा में था जबकि क़ाज़ी अज़-ज़ंजानी हमें दर्स दे रहे थे। इसी दौरान एक शख्स, जिसका चेहरा नूरानी था और पीठ पर फटे पुराने कपड़े थे, दाखिल हुआ। उसने अहल-ए-इल्म के तरीक़े पर सलाम किया और चरवाहे की क़मीस पहने

gathering wearing a shepherd's shirt. Qadi az-Zanjani asked, "Who is the master?" He answered, "A man whom scoundrels looted yesterday while I was making for this sacred Haram. I am a man from the people of Saghan, a seeker of knowledge." The Qadi immediately said, "Question him!" It was their custom to honour men of knowledge by immediately questioning them. The lot [for the question posed] that came up was the case of an unbeliever who seeks sanctuary in the Haram: may he be killed or not? The man gave a fatwa that he should not be killed. He was asked for his proof and said that it was the words of Allah: "Do not fight them in the Masjid al-Haram until they fight you there." It can also be recited as "Do not kill them." If it is recited as that, then it is a clear text forbidding that. If it is recited as "Do not fight them," then it is an admonition because, if Allah forbids fighting which is a cause of	मजलिस के आगे आ बैठा। क़ाज़ी अज़-ज़ंजानी ने पूछा: 'उस्ताद कौन हैं?' उसने जवाब दिया: 'एक ऐसा शख्स जिसे कल बदकारों ने लूट लिया जब मैं इस मुक़द्दस हरम की तरफ जा रहा था। मैं सघान के लोगों में से एक तालिब-ए-इल्म हूँ।' क़ाज़ी ने फ़ौरन कहा: 'इससे सवाल करो!' अहल-ए-इल्म की तअज़ीम का यही तरीक़ा था कि फ़ौरन उनसे सवाल किया जाता था। जो मसअला सामने आया वह यह था कि एक काफ़िर अगर हरम में पनाह ले तो क्या उसे क़त्ल किया जाए या नहीं? उस शख्स ने फ़तवा दिया कि उसे क़त्ल न किया जाए। उससे दलील पूछी गई तो उसने कहा कि यह अल्लाह तआला के इस फ़रमान की बुनियाद पर है: 'उनसे मस्जिद अल-हराम में क़िताल न करो जब तक वे तुमसे वहाँ लड़ाई न करें।' इसे इस तरह भी पढ़ा जा सकता है: 'उन्हें क़त्ल न करो।' अगर इसे इस तरह पढ़ा जाए तो यह सरीह नस् है जो इससे मना करती है। और अगर 'उनसे क़िताल न करो' पढ़ा जाए तो यह बतौर तनबीह है, क्योंकि जब अल्लाह क़िताल से मना करता है जो क़त्ल का सबब है तो यह खुद क़त्ल की हुरमत पर वाज़ेह दलील है।
---	---

killing, it is clear evidence of the prohibition of killing itself.’ The Qadi countered him by supporting ash-Shafi i and Malik even though he normally did not espouse their school. So he stated, “This ayah is abrogated by His words: ‘kill the idolaters wherever you find them’.” The man from Saghan replied, “This is not fitting for the position and knowledge of the Qadi. This ayah which you used to counter is general to all places and that which I used for argument is specific. It is not permitted for anyone to say that the generally undefined abrogates the specific.” Qadi az-Zanjani was stumped. Ibn al-Arabi said, ‘If an unbeliever seeks sanctuary in the Haram, there is no way to kill him because of the text of the ayah and the firm Sunnah that forbids fighting in it. However, the hadd punishment must be carried out on the fornicator and killer. If, however, the unbeliever initiates fighting, then he is killed according to	क्राज़ी ने इसका रद्द करते हुए इमाम शाफ़ी और इमाम मालिक के क़ौल की ताईद की, हालाँकि वे आम तौर पर उनके मस्लक के क़ाइल न थे। उन्होंने कहा: ‘यह आयत अल्लाह के इस फ़रमान से मन्सूख है: “मुश्रिकों को जहाँ पाओ क़त्ल करो।”’ सघान के उस शख्स ने जवाब दिया: ‘यह क़ाज़ी के मंसब और इल्म के शायान-ए-शान नहीं। जिस आयत से आपने इस्तिदलाल किया वह आम है, और जिस से मैंने दलील ली वह ख़ास है। किसी के लिए यह जायज़ नहीं कि वह कहे कि आम, ख़ास को मन्सूख कर देता है।’ इस पर क़ाज़ी अज़-ज़ंजानी लाजवाब हो गए। इब्न अल-अरबी ने कहा: ‘अगर कोई काफ़िर हरम में पनाह ले ले तो आयत के सरीह हुक्म और उस मज़बूत सुन्नत की वजह से, जो वहाँ क़िताल से मना करती है, उसे क़त्ल करने का कोई रास्ता नहीं। अलबत्ता ज़ानी और क़ातिल पर हद का नफ़ाज़ ज़रूरी है। लेकिन अगर काफ़िर खुद लड़ाई की इत्तिदा करे तो क़ुरआन के नस् के मुताबिक़ उसे क़त्ल किया जाएगा।”’
--	---

the text of the Quran.'	
As for the argument they use about the killing of Ibn Khatal and his fellows, that is not a proper argument. That occurred at a time in which Makkah was not a Haram because it was an abode of war and unbelief and so the blood of people could be shed during the time it was not a Haram and in which fighting was permitted. It is confirmed and correct that the first view is sounder, and Allah knows best.	जहाँ तक उस दलील का ताल्लुक है जो वे अब्दुल्लाह बिन खतल और उसके साथियों के क़त्ल के बारे में पेश करते हैं, तो यह कोई मज़बूत दलील नहीं है। यह वाक़िआ उस वक़्त पेश आया जब मक्का हरम नहीं था, क्योंकि वह दारुल-हरब और कुफ़्र का मरकज़ था, लिहाज़ा उस ज़माने में लोगों का ख़ून बहाना जायज़ था जब वह हरम नहीं था और वहाँ क़िताल की इजाज़त थी। यह बात साबित और दुरुस्त है कि पहला क़ौल ज़्यादा सही है, और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
Some scholars say that this ayah applies in the case of someone who rebels against the ruler but does not apply to unbelievers. Unbelievers are killed in every case when they fight. Rebels are only fought with defence in mind and should not be pursued if they retreat, or finished off if they are wounded. This will be discussed in Surat al-Hujurat.	बाज़ उलमा का कहना है कि यह आयत उस शख्स के बारे में है जो हाकिम के खिलाफ़ बगावत करे, लेकिन यह काफ़िरों पर लागू नहीं होती। काफ़िरों को हर हाल में क़त्ल किया जाता है जब वे लड़ाई करें। जबकि बाग़ियों से सिर्फ़ दिफ़ा के तौर पर लड़ा जाता है, और अगर वे पीछे हट जाएँ तो उनका पीछा नहीं किया जाता, और न ही अगर वे ज़ख्मी हों तो उन्हें ख़त्म किया जाता है। इस पर सूरह अल-हुजुरात में मज़ीद बहस की जाएगी।

But if they cease,	लेकिन अगर वे बाज़ आ जाएँ,
If they stop fighting you because they believe and become Muslims, then Allah will forgive them all that they did before and show mercy to all of them by pardoning them as Allah says elsewhere: ‘Say to those who disbelieve that if they stop they will be forgiven what is past.’	अगर वे तुम से लड़ना बंद कर दें क्योंकि वे ईमान ले आएँ और मुसलमान हो जाएँ, तो अल्लाह उनके साबिका तमाम आमाल को माफ़ फ़रमा देगा और उन सब पर रहम करेगा, उन्हें बख़्श देगा जैसा कि अल्लाह ने एक और जगह फ़रमाया है: “उन काफ़िरों से कह दो कि अगर वे बाज़ आ जाएँ तो जो कुछ गुज़र चुका है वह उनके लिए माफ़ कर दिया जाएगा।”
Fight them until there is no more fitnah and the din belongs to Allah alone. If they cease, there should be no enmity towards any but wrongdoers. [2:193]	उनसे लड़ो यहाँ तक कि कोई फ़ितना बाक़ी न रहे और दीन ख़ालिस अल्लाह ही का हो जाए। फिर अगर वे बाज़ आ जाएँ तो ज़्यादती सिर्फ़ ज़ालिमों के खिलाफ़ होनी चाहिए। [2:193]
Fight them until there is no more fitnah and the din belongs to Allah alone.	उनसे लड़ो यहाँ तक कि कोई फ़ितना बाक़ी न रहे और दीन ख़ालिस अल्लाह ही का हो जाए।
This is a command to fight every idolater in every place according to those who say that it abrogates the previous ayahs. According to those who say	यह हर जगह हर मुशरिक से क़िताल करने का हुक्म है, उन लोगों के नज़दीक जो कहते हैं कि यह साबिका आयात को मन्सूख कर देता है। और जो लोग कहते हैं कि यह

that it does not abrogate other ayahs, it means: 'Fight those about whom Allah says: "if they fight you"'. The former is the more likely meaning. It is an unqualified command to fight without any precondition of hostilities being initiated by the unbelievers. The evidence for that is in the words of Allah: and the din belongs to Allah alone.' The Prophet said, 'I was commanded to fight people until they say, "There is no god but Allah." The ayah and hadith both indicate that the reason for fighting is disbelief because Allah says: until there is no more fitnah, meaning disbelief in this case. So the goal is to abolish disbelief and that is clear.	दूसरी आयात को मन्सूख नहीं करता, उनके नज़दीक इसका मतलब है: "उन लोगों से लड़ो जिनके बारे में अल्लाह ने फ़रमाया है: 'अगर वे तुमसे लड़ें'।" पहला मअनी ज़्यादा राजिह मालूम होता है। यह एक मुतलक़ हुक्म है जिसमें इस बात की कोई शर्त नहीं कि काफ़िर पहले लड़ाई शुरू करें। इसकी दलील अल्लाह के इस फ़रमान में है: "और दीन ख़ालिस अल्लाह ही का हो जाए।" नबी करीम ने फ़रमाया: "मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं लोगों से उस वक़्त तक लड़ूँ जब तक वे यह न कह दें: 'अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं।'" आयत और हदीस दोनों इस बात पर दलालत करती हैं कि क़िताल की इलत कुफ़्र है, क्योंकि अल्लाह फ़रमाता है: "यहाँ तक कि कोई फ़ितना बाक़ी न रहे", और इससे मुराद यहाँ कुफ़्र है। लिहाज़ा मक़सद कुफ़्र को ख़त्म करना है, और यह बात वाज़ेह है।
Ibn Abbas, Qatadah, ar-Rabi, as-Suddi and others said that fitnah here means shirk and the subsequent injury to the believers caused by it. The root of fitnah is testing and trial,	अब्दुल्लाह बिन अब्बास, कतादा, अर-रबी, अस-सुद्दी और दीगर उलमा ने कहा कि यहाँ "फ़ितना" से मुराद शिर्क है और उसके नतीजे में मोमिनीन को पहुँचने वाली अज़ियत

derived from the term for testing silver when it is put in the fire to separate the impurities from the pure metal.	भी शामिल है। फ़ितना की अस्ल आजमाइश और इम्तिहान है, और यह उस इस्तिलाह से माखूज़ है जो चाँदी को आग में डालकर उसे परखने के लिए इस्तेमाल होती है ताकि खोट को ख़ालिस धात से अलग किया जा सके।
If they cease, there should be no enmity towards any but wrongdoers.	फ़िर अगर वे बाज़ आ जाएँ तो ज़ालिमों के सिवा किसी के खिलाफ़ कोई दुश्मनी नहीं होनी चाहिए।
If they cease, there should be no enmity towards any but wrongdoers. If they stop and become Muslim, or submit by paying jizyah in the case of the people of the Book. Otherwise they should be fought and they are wrongdoers and only transgress against themselves. What is done to the wrongdoers is called enmity since it is the requital of enmity. Wrongdoing and injustice involve enmity and the requital of enmity is also called enmity. It is as Allah says: ‘The repayment of a bad action is one equivalent to it.’ The wrongdoers are	अगर वे बाज़ आ जाएँ तो ज़ालिमों के सिवा किसी के खिलाफ़ कोई दुश्मनी नहीं होनी चाहिए। अगर वे रुक जाएँ और मुसलमान हो जाएँ, या अहल-ए-किताब की सूरत में जिज़्या अदा करके मुतीअ हो जाएँ। वरना उनसे क़िताल किया जाएगा, और वही ज़ालिम हैं और दरअसल अपने ही ऊपर ज़्यादती करते हैं। ज़ालिमों के साथ जो कुछ किया जाता है उसे दुश्मनी कहा जाता है क्योंकि वह दरअसल दुश्मनी का बदला होता है। जुल्म और नाइंसाफ़ी में दुश्मनी शामिल होती है, और दुश्मनी के बदले को भी दुश्मनी कहा जाता है। जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है: “बुराई का बदला उसी के बराबर

either those who initiate fighting or those who remain entrenched in disbelief and fitnah.	बुराई है।" ज़ालिम वे हैं जो या तो खुद लड़ाई की इत्तिदा करते हैं या फिर कुफ़्र और फ़ितना पर क़ायम रहते हैं।
Sacred month in return for sacred month – sacred things are subject to retaliation. So if anyone oversteps the limits against you, overstep against him the same as he did to you. But have fear of Allah. Know that Allah is with those who are godfearing. [2:194]	हुरमत वाला महीना हुरमत वाले महीने के बदले में है, और हुरमत वाली चीज़ों में भी बदला लिया जा सकता है। पस जो कोई तुम पर ज़्यादती करे, तुम भी उस पर उसी तरह ज़्यादती करो जिस तरह उसने तुम पर की हो। लेकिन अल्लाह से डरते रहो, और जान लो कि अल्लाह मुत्तक़ीन के साथ है। [2:194]
Sacred month in return for sacred month –	हुरमत वाला महीना हुरमत वाले महीने के बदले में है।
The reason for this being revealed was reported by Ibn Abbas, Qatadah, Mujahid, Miqsam, as-Suddi, ar-Rabi, ad-Dahhak and others. They said that it was revealed during the 'Fulfilled Umrah'. When the idolaters prevented the Prophet from completing the Umrah in the Year of al-Hudaybiyah, Allah promised him that he would enter Makkah, and he	अब्दुल्लाह बिन अब्बास, कतादा, मुजाहिद, मुक्सम, अस-सुद्दी, अर-रबी, अद-दहहाक और दीगर ने बयान किया है कि यह आयत "उमरह-ए-क़ज़ा" के मौके पर नाज़िल हुई। जब मुशरिकीन ने नबी करीम को सुलह हुदैबिया के साल उमरह मुकम्मल करने से रोक दिया, तो अल्लाह ने आप से वादा फ़रमाया कि आप मक्का में दाख़िल होंगे, चुनाँचे आप 7 हिजरी में दाख़िल हुए

did so in 7 AH and completed the practices of umrah and the ayah was revealed. Al-Hasan related that the idolaters said to the Prophet, “Have you ceased fighting in the sacred month, Muḥammad?” “Yes” he replied. They wanted to fight and the ayah was revealed by which Allah allowed him to fight against them. The first interpretation, however, is better known.	और उमरह के आमाल मुकम्मल किए, और यह आयत नाज़िल हुई। हसन बसरी से रिवायत है कि मुशरिकीन ने नबी से कहा: “ऐ मुहम्मद! क्या आप ने हुरमत वाले महीने में क़िताल छोड़ दिया है?” आप ने फ़रमाया: “हाँ।” वे आप से लड़ना चाहते थे, तो यह आयत नाज़िल हुई जिसके ज़रिये अल्लाह ने आप को उनके खिलाफ़ क़िताल की इजाज़त दी। हालांकि पहला क़ौल ज़्यादा मशहूर है।
Sacred things are subject to retaliation.	हुरमत वाली चीज़ों में भी बदला लिया जा सकता है।
Hurumat is the plural of hurmah. Allah means the sacredness of the sacred month, the sacred land and the sacredness of ihram. Hurmah denotes something which is inviolable. Retaliation (qisas is to make things equal, so in this instance the compensation for you for when they stopped you in 6 AH is to make up the umrah in 7 AH. So this is connected to what precedes it. It is said that it is separate and that it refers to the state of	हुरुमात, हुरमह की जमा है। अल्लाह का इरादा यहाँ हुरमत वाले महीने की हुरमत, हरम की सरज़मीन की हुरमत और एहराम की हुरमत से है। हुरमह उस चीज़ को कहते हैं जो क़ाबिल-ए-पामाली न हो। क़िसास का मतलब बराबरी क़ायम करना है, लिहाज़ा इस मक़ाम पर इसका मतलब यह है कि जब उन्होंने तुम्हें 6 हिजरी में रोका तो उसके बदले में तुम 7 हिजरी में उमरह अदा करो। इस तरह यह आयत अपने मा क़बल से मरबूत है। यह भी कहा गया है कि यह अलग हुक्म है और इससे मुराद

affairs at the beginning in Islam which was, that if something sacred was violated, they were entitled to the like of the transgression committed against them. Then this was abrogated by the ayahs of fighting.	इस्लाम के इब्तिदाई दौर का वह तरीका है कि जब किसी हुरमत वाली चीज़ की खिलाफ़वर्ज़ी की जाती थी तो उन्हें उसी जैसी ज़्यादती का बदला लेने का हक़ होता था। फिर बाद में यह हुक्म आयात-ए-क्रिताल के ज़रिये मन्सूख कर दिया गया।
One group say that the ayah deals with enmity within the community of Muhammad and other crimes and so it is not abrogated. When someone is the victim of transgression in respect of his property or through physical injury, he can retaliate with the like of what was done to him. This is between creatures. There is nothing between the human being and Allah in that respect. Ash-Shafi i and others say that, and there is one transmission to that effect from Malik. A group of Malikis say that matters of retaliation are up to the judges and not the individual. Property is dealt with according to the words of the Prophet: ‘Surrender trusts to those who	एक गिरोह का कहना है कि यह आयत उम्मत-ए-मुहम्मद के अंदर बाहमी ज़्यादती और दीगर जराइम के बारे में है, लिहाज़ा यह मन्सूख नहीं है। जब किसी शख्स के साथ उसके माल में या जिस्मानी तौर पर ज़्यादती की जाए तो वह उसी के बराबर बदला ले सकता है। यह मामला मखलूक के दरमियान है, इसमें बंदे और अल्लाह के दरमियान कोई तअल्लुक नहीं। इमाम शाफ़ी और दीगर इसी के क़ाइल हैं, और इमाम मालिक से भी एक रिवायत इसी मफ़हूम में मन्कूल है। मालिकिया के एक गिरोह का कहना है कि क्रिसास के मामलात अफ़राद के इख़्तियार में नहीं बल्कि क़ाज़ी के सुपुर्द होते हैं। अमवाल के बारे में नबी का यह फ़रमान दलील है: “अमानतें उनके सुपुर्द करो जिन्होंने तुम्हें अमानत दी, और उससे ख़ियानत न करो जिसने

entrusted them to you and do not betray those who betrayed you.’ Ad-Daraqutni transmitted it. If someone deposits a trust with someone who betrays him, he is not permitted to betray him in return and attain his due from the one he trusted. This is the well known position of their school. Abu Hanifah held that view as well because of this hadith as well as the words of the Almighty: ‘Allah commands you to return to their owners the things you hold on trust.’ That is the position of Aṭa al-Khurasani. Qudamah ibn al-Haytham said, ‘I asked Aṭa ibn Maysarah al-Khurasani, “A man owes me something. He denies it and denies my proof. Can I retaliate by taking from his property?” He answered, “Do you think that if he had sex with your slave-girl, you would do what he did?”’	तुमसे ख़ियानत की।” इस हदीस को दारकुत्नी ने रिवायत किया है। अगर कोई शख्स किसी के पास अमानत रखे और वह उसमें ख़ियानत करे तो उसके लिए जायज़ नहीं कि वह भी बदले में ख़ियानत करे और इस तरह अपना हक़ हासिल करे। यही उनके मस्लक का मशहूर क़ौल है। इमाम अबू हनीफ़ा का भी यही मौक़िफ़ है, इस हदीस और अल्लाह तआला के इस फ़रमान की बुनियाद पर: “बेशक अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अमानतें उनके हक़दारों तक पहुँचाओ।” यह अता अल-खुरासानी का भी क़ौल है। कुदामा बिन अल-हैथम ने कहा: “मैंने अता बिन मैसरा अल-खुरासानी से पूछा: ‘एक शख्स मेरा मक़रूज़ है, वह इनकार करता है और मेरी दलील को भी झुठलाता है, क्या मैं उसके माल में से लेकर बदला ले सकता हूँ?’ उन्होंने जवाब दिया: ‘क्या तुम यह पसंद करोगे कि अगर वह तुम्हारी लौंडी के साथ ऐसा करे तो तुम भी वही करो जो उसने किया?’”
What is sound is that it is permitted for him to do that provided that he can obtain his	सही बात यह है कि उसके लिए ऐसा करना जायज़ है, बशर्ते कि वह अपना हक़ इस तरह हासिल करे कि उसे

property without being considered to be a thief. That is the school of ash-Shafi i. Ad-Dawudi related this from Malik and Ibn al-Mundhir said that as well. Ibn al-Arabi preferred that and said that it is not treachery, but rather obtaining one's right. The Messenger of Allah said, 'Help your brother, wronging or wronged.' Taking what is owed from the wrongdoer is part of helping him. When Hind bint Utbah, the wife of Abu Sufyan, said to the Prophet, 'Abu Sufyan is a stingy, mean man. He does not give me and my son enough maintenance unless I take it from his property without his knowledge. Do I do anything wrong?' He answered, 'Take what is enough for you and your son in a correct manner.' So he allowed her to take, but only the amount strictly due to her. All of this is confirmed in the Sahih. The words in this ayah cut off the dispute.	चोर न समझा जाए। यह इमाम शाफ़ी का मसलक है। अद-दावूदी ने इसे इमाम मालिक से रिवायत किया है, और इब्न अल-मुन्धिर ने भी यही कहा है। इब्न अल-अरबी ने इसी को तरजीह दी और कहा कि यह ख़ियानत नहीं बल्कि अपना हक़ हासिल करना है। रसूल अल्लाह मुहम्मद ने फ़रमाया: "अपने भाई की मदद करो, ख़्वाह वह ज़ालिम हो या मज़लूम।" ज़ालिम से अपना हक़ ले लेना भी उसकी मदद करने में शामिल है। जब हिंद बिनत उतबा, जो अबू सुफ़यान की बीवी थीं, ने नबी से कहा: "अबू सुफ़यान एक कंजूस आदमी हैं, वह मुझे और मेरे बेटे को काफ़ी ख़र्च नहीं देते, मगर मैं उनके माल में से उनकी जानकारी के बिना ले लेती हूँ, क्या मैं गुनाहगार हूँ?" तो आप ने फ़रमाया: "अपने और अपने बेटे के लिए मअरूफ़ के मुताबिक जितना काफ़ी हो ले लिया करो।" पस आप ने उन्हें लेने की इजाज़त दी, लेकिन सिर्फ़ उतनी मात्रा जो उनका हक़ था। यह तमाम बातें सहीह अहादीस में साबित हैं। और इस आयत के अल्फ़ाज़ इस इख़्तिलाफ़ को ख़त्म कर देते हैं।
--	---

They disagree about someone taking property which is not of the same sort as the property he is owed. It is said that he can only do that based on the ruling of a judge. Ash-Shafi i has two views. The sounder of the two is that he may take it based on analogy with taking it from the same sort of property. The second view is that he should not take it because it is a different sort of property. Some say that he calculates the value of what he is owed and takes an equivalent amount. This is sound based on what we explained of the proof.	वे इस बात में इख़्तिलाफ़ करते हैं कि अगर कोई शख्स ऐसा माल ले जो उस माल की ज़िंस से मुख़्तलिफ़ हो जिसका वह हक़दार है, तो क्या यह जायज़ है। कहा गया है कि वह ऐसा सिर्फ़ क़ाज़ी के फैसले की बुनियाद पर ही कर सकता है। इमाम शाफ़ी के इस बारे में दो क़ौल हैं। उनमें से ज़्यादा सही यह है कि वह क्रियास की बुनियाद पर उसे ले सकता है, जैसे कि उसी ज़िंस के माल में से लेने की इजाज़त है। दूसरा क़ौल यह है कि उसे नहीं लेना चाहिए क्योंकि वह मुख़्तलिफ़ ज़िंस का माल है। कुछ उलमा कहते हैं कि वह अपने हक़ की क़ीमत का अंदाज़ा लगाकर उसके बराबर मात्रा ले ले। यह बात हमारे बयान किए गए दलीलों की रोशनी में ज़्यादा दुरुस्त मालूम होती है।
In dealing with taking, does one take into account what someone owes of debts and other things? Ash-Shafi i says that you do not, but simply take what you are owed. Malik said that a person takes into consideration his position in relation to other debtors when	ले लेने के मामले में, क्या इस बात का लिहाज़ रखा जाएगा कि किसी पर क़र्ज़ या दीगर वाजिबात भी हैं? इमाम शाफ़ी का कहना है कि ऐसा लिहाज़ नहीं रखा जाएगा, बल्कि सिर्फ़ अपना हक़ लिया जाएगा। जबकि इमाम मालिक ने कहा कि जब कोई शख्स मुफ़लिस हो तो दूसरे क़र्ज़ख़्वाहों के

someone is bankrupt. Allah knows best.	मुक़ाबले में अपनी हैसियत को मद्देनज़र रखा जाएगा। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
So if anyone oversteps the limits against you, overstep against him the same as he did to you.	पस जो कोई तुम पर ज़्यादती करे, तुम भी उस पर उसी तरह ज़्यादती करो जिस तरह उसने तुम पर की हो।
It is agreed that this ayah is general and undefined and retaliation can either be done directly, if that is possible, or by obtaining a legal judgment. People disagree about whether ordinary compensation is included under this and whether it can be called ‘overstepping’ or not. Some say that there are no metaphors in the Quran and that this is overstepping, but permitted overstepping (udwan), as that is a normal linguistic usage in Arabic. Others say that there are metaphors in the Quran and ‘overstepping’ here is used in that way. Scholars disagree about someone who destroys or ruins animals or goods which cannot be weighed or	इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि यह आयत आम और मुतलक़ है, और बदला या तो बराह-ए-रास्त लिया जा सकता है अगर मुमकिन हो, या फिर क़ानूनी फैसले के ज़रिये। लोगों का इस बात में इख़िलाफ़ है कि आया आम मुआवज़ा भी इसमें शामिल है और क्या इसे “ज़्यादती” कहा जा सकता है या नहीं। कुछ का कहना है कि कुरआन में मज़ाज़ (इस्तिआरा) नहीं होता और यहाँ “ज़्यादती” अपने हक़ीक़ी मअनी में है, लेकिन यह जायज़ ज़्यादती (उदवान) है, क्योंकि अरबी ज़बान में इसका ऐसा इस्तेमाल मशहूर है। जबकि कुछ दीगर का कहना है कि कुरआन में मज़ाज़ भी होता है और यहाँ “ज़्यादती” उसी मअनी में इस्तेमाल हुई है। उलमा का उस शख्स के बारे में भी इख़िलाफ़ है जो ऐसे जानवरों या सामान को तलफ़ कर दे जिन्हें नापा या तोला

measured. Ash-Shafi i, Abu Hanifah and his people and a group of scholars say that he owes the equivalent of that and one pays no attention to price unless there is nothing equivalent available, based on this ayah as well as: 'If you want to retaliate, retaliate to the same degree as the injury done to you.'	नहीं जा सकता। इमाम शाफ़ी, इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब, नीज़ उलमा के एक गिरोह का कहना है कि उस पर उसी के बराबर चीज़ लाज़िम होगी, और क़ीमत का एतिबार नहीं किया जाएगा, अल्ला यह कि उस जैसी चीज़ दस्तयाब न हो। इसकी दलील यही आयत है और यह फ़रमान भी: "अगर तुम बदला लो तो उसी क़दर लो जितना तुम पर जुल्म किया गया हो।"
It is said that this principle should be applied to all things, even broken bowls, since the Prophet said, 'A vessel for a vessel and food for food' regarding an incident when one of his wives broke a bowl of food belonging to another wife. Abu Dawud transmitted from Musaddad from Yahya, and from Muhammad ibn al-Muthanna from Khalid from Humayd from Anas that the Messenger of Allah was with one of his wives when another of the Mothers of the Believers sent a servant with a bowl of food. She struck it with her hand and broke the bowl. The	कहा जाता है कि इस उसूल को हर चीज़ पर लागू किया जाना चाहिए, यहाँ तक कि टूटे हुए बर्तनों पर भी, क्योंकि नबी करीम ने फ़रमाया: "बर्तन के बदले बर्तन और खाने के बदले खाना", एक वाक़िआ के बारे में जब आप की एक ज़ौजा ने दूसरी ज़ौजा के खाने का बर्तन तोड़ दिया था। अबू दाऊद ने मुसद्दद से, उन्होंने यह्या से, और मुहम्मद बिन अल-मुथन्ना से, उन्होंने खालिद से, उन्होंने हुमैद से, और उन्होंने अनस बिन मालिक से रिवायत किया कि रसूल अल्लाह अपनी एक ज़ौजा के पास थे कि उम्महातुल मोमिनीन में से एक ने एक ख़ादिम के ज़रिये खाने का बर्तन भेजा। उस (ज़ौजा) ने अपने हाथ से

Messenger of Allah picked up the two pieces and put them together and began to collect the food in them, saying, 'Your mother is jealous.' He said, 'Eat,' and they ate until a bowl in her house was brought. He kept the messenger and the bowl until they had finished and then gave the unbroken bowl to the messenger and kept the broken one. Abu Dawud related from Musaddad from Yahya from Fulayt al-Amiri (whom Abu Dawud says is Aflat ibn Khalifah) from Jasarah bint Dajajah that Aishah said, 'I never saw a woman make food like Safiyyah. She prepared food for the Messenger of Allah and sent it to him. I could not keep myself from breaking the vessel. I asked, "Messenger of Allah, what is the expiation for what I did?" He answered, "A vessel like the vessel, and food like the food."' The evidence is that the Prophet made a man who freed half of his slave also pay for the half owned by his	उसे मारा और बर्तन तोड़ दिया। रसूल अल्लाह ने दोनों टुकड़ों को उठाकर जोड़ा और उसमें खाना जमा करने लगे और फ़रमाया: "तुम्हारी माँ को ग़ैरत आ गई है।" फिर फ़रमाया: "खाओ", चुनाँचे लोगों ने खाया यहाँ तक कि उसके घर से एक सही बर्तन लाया गया। आप ने क़ासिद और बर्तन को रोके रखा यहाँ तक कि लोग खा चुके, फिर सही बर्तन क़ासिद को दे दिया और टूटा हुआ अपने पास रख लिया। इसी तरह अबू दाऊद ने मुसद्दद से, उन्होंने यहा से, उन्होंने फ़लैत अल-आमिरी (जिनके बारे में अबू दाऊद कहते हैं कि वे अफ़लत बिन ख़लीफ़ा हैं) से, उन्होंने जसरह बिनत दजाजा से रिवायत किया कि आइशा रज़ि.अ. ने कहा: "मैंने कभी किसी औरत को सफ़िय्या रज़ि.अ. की तरह खाना बनाते नहीं देखा। उन्होंने रसूल अल्लाह के लिए खाना तैयार किया और भेजा। मैं अपने आप को न रोक सकी और बर्तन तोड़ दिया। मैंने पूछा: 'या रसूल अल्लाह! जो मैंने किया उसका कफ़़ारा क्या है?' आप ने फ़रमाया: 'बर्तन के बदले बर्तन, और खाने के बदले खाना।'" दलील यह भी है कि नबी ने उस शख्स को जिसने अपने
---	--

partner and not just the cost of half of the slave. There is no disagreement between scholars that there is parity in food, drinks and things that are weighed since he said, 'Food for food.'	गुलाम का आधा हिस्सा आज़ाद किया था, यह हुक्म दिया कि वह अपने शरीक के हिस्से की क़ीमत भी अदा करे, न कि सिर्फ़ गुलाम के आधे हिस्से की क़ीमत। उलमा के दरमियान इस बात में कोई इख़िलाफ़ नहीं कि खाने, मशरूबात और तोली जाने वाली अशिया में बराबरी (क़िसास/मुआवज़ा) लाज़िम है, क्योंकि आप ने फ़रमाया: "खाने के बदले खाना।"
There is no disagreement between scholars that this ayah is the basis for parity in retaliation. If someone kills someone, he is killed by the same method he used when he killed, and that is the position of the majority, as long as the victim was not killed by an iniquitous act such as sodomy or drinking wine. In that case, the killer is killed with the sword. One view of the Shafi is is that he is killed in the same way in any case. Ibn al-Majishun said that if someone kills by fire or poison, he is not killed by the same method because the Prophet said, 'Only	उलमा के दरमियान इस बात में कोई इख़िलाफ़ नहीं कि यह आयत क़िसास में बराबरी की अस्ल बुनियाद है। अगर कोई किसी को क़त्ल करे तो उसे उसी तरीक़े से क़त्ल किया जाएगा जिस तरीक़े से उसने क़त्ल किया, और यही ज़महूर का मौक़िफ़ है, बशर्ते कि मक़तूल को किसी फ़ासिद फ़ेअल जैसे लिवातत या शराब पिलाने के ज़रिये क़त्ल न किया गया हो। ऐसी सूरत में क़ातिल को तलवार से क़त्ल किया जाएगा। इमाम शाफ़ी के एक क़ौल के मुताबिक़ हर हाल में उसे उसी तरीक़े से क़त्ल किया जाएगा। इब्न अल-माजिशून ने कहा कि अगर कोई आग या ज़हर के ज़रिये क़त्ल करे तो उसे उसी तरीक़े

Allah punishes with fire.’ Poison is internal fire.	से क़त्ल नहीं किया जाएगा, क्योंकि नबी करीम ने फ़रमाया: “आग के ज़रिये सज़ा देना सिर्फ़ अल्लाह का हक़ है।” और ज़हर को बातिनी आग करार दिया गया है।
As for retaliation with a staff, Malik said in one transmission that killing with a staff is prolonged and amounts to torture and so he should be killed by the sword. Ibn Wahb related that from him and Ibn al-Qasim also said that. Another transmission says that he is killed with it, even if it entails that. That is the view of ash-Shafi i. Ashhab and Ibn Nafi related that Malik said that someone who kills with stones or a staff is killed with them provided that the blow will be a fatal one, but not if it requires multiple blows. He should not be shot with arrows or stoned because that entails torture. Abd al-Malik said that. Ibn al-Arabi said, ‘What is sound among the views of our scholars is that similarity is mandatory unless that falls	जहाँ तक लाठी के ज़रिये क्रिसास का ताल्लुक है, तो इमाम मालिक से एक रिवायत में है कि लाठी से क़त्ल करना तूल खींचता है और अज़ियत का सबब बनता है, इसलिए ऐसे क़ातिल को तलवार से क़त्ल किया जाएगा। इब्न वहब ने यह रिवायत उनसे नक़ल की है और इब्न अल-क़ासिम ने भी यही कहा है। एक दूसरी रिवायत के मुताबिक उसे उसी तरीक़े से क़त्ल किया जाएगा, चाहे उसमें ऐसी कैफ़ियत पैदा हो। यही इमाम शाफ़ी का मौक़िफ़ है। अशहब और इब्न नाफ़े ने इमाम मालिक से रिवायत किया है कि जो शख्स पत्थरों या लाठी से क़त्ल करे, उसे उन्हीं के ज़रिये क़त्ल किया जाएगा बशर्ते कि एक ही ज़र्ब मोहलक हो, न कि कई ज़र्बों की ज़रूरत पड़े। लेकिन उसे तीरों से न मारा जाए और न संगसार किया जाए, क्योंकि इसमें अज़ियत है। यह बात अब्दुल मालिक ने कही है। इब्न अल-अरबी ने कहा: “हमारे

under the definition of torture. Then it is abandoned in favour of the sword.’ Our scholars agree that when someone cuts off a hand or foot or gouges out an eye, intending torture by that, then that is done to him, as the Prophet did to those who killed the herdsmen. But if that occurred through defence or by a striking blow, then he is killed by the sword.	उलमा के अक़वाल में दुरुस्त बात यह है कि मुमासलत लाज़िम है, जब तक कि वह अज़ियत के दायरे में दाख़िल न हो जाए। फिर ऐसी सूरत में उसे छोड़कर तलवार को इख़्तियार किया जाएगा।” हमारे उलमा इस पर मुत्तफ़िक्क हैं कि अगर कोई किसी का हाथ या पाँव काट दे या आँख निकाल दे, और उसका मक़सद अज़ियत देना हो, तो उसके साथ भी वही किया जाएगा, जैसा कि नबी करीम ने उन लोगों के साथ किया जिन्होंने चरवाहों को क़त्ल किया था। लेकिन अगर यह काम दिफ़ा में या किसी ज़र्ब के नतीजे में हुआ हो तो फिर क़ातिल को तलवार से क़त्ल किया जाएगा।
One group take a different view regarding all of this and say that retaliation is only taken by the sword. That is the school of Abu Hanifah, ash-Shafi i and an-Nakha i. Their proof for that is what is related from the Prophet: ‘There is no retaliation except with iron (i.e. a blade).’ There is also the prohibition against mutilation and the words of the Prophet, ‘Only the	एक ग़िरोह इन तमाम उमूर में मुख़्तलिफ़ राय रखता है और कहता है कि क़िसास सिर्फ़ तलवार के ज़रिये लिया जाएगा। यह इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ी और अन-नखई का मस्लक है। उनकी दलील नबी करीम से मनकूल यह हदीस है: “क़िसास सिर्फ़ लोहे (यानी धारदार हथियार) के ज़रिये है।” नीज़ मुसला (आज़ा काटने) की मुमानअत और नबी का यह फ़रमान भी है: “आग के

Lord of the Fire punishes with fire.'	ज़रिये सज़ा देना सिर्फ़ आग के रब का हक़ है।"
What is sound is the view of the majority based on what the imams related from Anas ibn Mālik about a girl who was discovered with her head crushed between two stones. They asked her, 'Who did this to you? So-and-so? So-and-so?' until they mentioned a Jew and she nodded with her head. The Jew was seized and he confessed, so the Messenger of Allah ordered that his head be crushed with stones. One version states that the Messenger of Allah killed him with two stones. This is a clear explicit text. It is what is demanded by Allah's words: 'If you want to retaliate, retaliate to the same degree as the injury done to you.' As for the evidence used from the hadith of Jabir, hadith scholars consider it to be weak. It is not related by a sound path. If it had been sound, we would say that it is mandatory. When	सही बात जमहूर का मौक़िफ़ है, इस दलील की बुनियाद पर जो उलेमा ने अनस बिन मालिक से रिवायत की है कि एक लड़की मिली जिसका सिर दो पत्थरों के दरमियान कुचला गया था। उससे पूछा गया: "यह तुम्हारे साथ किसने किया? फ़लाँ ने? फ़लाँ ने?" यहाँ तक कि एक यहूदी का नाम लिया गया तो उसने सर के इशारे से हाँ कहा। उस यहूदी को गिरफ़्तार किया गया और उसने एतिराफ़ कर लिया, तो रसूल अल्लाह मुहम्मद ने हुक्म दिया कि उसका सिर भी पत्थरों से कुचला जाए। एक रिवायत में है कि रसूल अल्लाह ने उसे दो पत्थरों के ज़रिये क़त्ल करवाया। यह एक वाज़ेह और सरीह नस् है। यही अल्लाह तआला के इस फ़रमान का तक्राज़ा भी है: "अगर तुम बदला लो तो उसी क़दर लो जितना तुम पर जुल्म किया गया हो।" जहाँ तक जाबिर बिन अब्दुल्लाह की हदीस से इस्तिदलाल किया जाता है, तो मुहद्दीसीन उसे ज़ईफ़ करार देते हैं, क्योंकि यह सहीह सनद से मर्वी नहीं। अगर यह सहीह होती तो हम इसे

someone kills with a metal weapon, he is killed with it. This is indicated by the hadith of Anas: ‘A Jew crushed a girl’s head between two stones and so the Messenger of Allah had his head crushed between two stones.’	लाज़िम करार देते। जब कोई शख्स लोहे के हथियार से क़त्ल करे तो उसे भी उसी के ज़रिये क़त्ल किया जाएगा। इस पर भी अनस (रज़ि.) की हदीस दलालत करती है: “एक यहूदी ने एक लड़की का सिर दो पत्थरों के दरमियान कुचल दिया, तो रसूल अल्लाह ने उसका सिर भी दो पत्थरों के दरमियान कुचलवा दिया।”
We say that the prohibition against mutilation is applied when the perpetrator does not mutilate. If he mutilates, then we do that to him as is indicated by the hadith of the Uranis. It is sound and transmitted by the imams. His words, ‘Only the Lord of the Fire punishes with fire’ apply when he himself has not burned. If he has burned, then he is burned as is indicated by the generality of the words of the Quran. Ash-Shafi i said, ‘When a person deliberately throws someone into a fire, then he too is thrown into a fire until he dies.’ Al-Waqidi mentioned this in his Mukhtasar from Malik. It is	हम कहते हैं कि मुसला (आज़ा काटने) की मुमानअत उस वक़्त लागू होती है जब मुजरिम खुद मुसला न करे। अगर वह मुसला करे तो उसके साथ भी वही किया जाएगा, जैसा कि उरनीन की हदीस से मालूम होता है, जो सहीह है और उलेमा ने उसे रिवायत किया है। आप का यह फ़रमान: “आग के ज़रिये सज़ा देना सिर्फ़ आग के रब का हक़ है” उस सूरत में है जब खुद मुजरिम ने आग के ज़रिये न जलाया हो। अगर उसने जलाया हो तो उसे भी जलाया जाएगा, जैसा कि कुरआन के उमूमी हुक्म से ज़ाहिर है। इमाम शाफ़ी ने कहा: “जब कोई शख्स जान-बूझ कर किसी को आग में डाले तो उसे भी आग में डाला जाएगा यहाँ तक कि वह मर जाए।” अल-वाकिदी ने यह बात

also the view of Muhammad ibn Abd al-Hakam. Ibn al-Mundhir said, ‘Many of the people of knowledge say that there is retaliation against a man who strangles another man. That is opposed by Muhammad ibn al-Hasan. He said, “If he strangles him so that he dies, throws him into a well and he dies, or throws him from a mountain or a roof and he dies, there is no retaliation. His male relatives owe blood-money. If he is known for that and strangles more than one person, then he is killed.”’ Ibn al-Mundhir said, ‘When the Prophet took retaliation from the Jew who crushed the girl’s head with stones, it was on this basis.’	अपनी मुख्तसर में इमाम मालिक से नक़ल की है। यह मुहम्मद बिन अब्द अल-हकम का भी क़ौल है। इब्न अल-मुन्धिर ने कहा: “अहल-ए-इल्म में से बहुत से लोग कहते हैं कि जो शख्स किसी का गला घोट कर क़त्ल करे, उससे भी क़िसास लिया जाएगा। इसकी मुखालफ़त मुहम्मद बिन अल-हसन ने की है। उन्होंने कहा: ‘अगर वह किसी का गला घोट दे और वह मर जाए, या उसे कुएँ में फेंक दे और वह मर जाए, या उसे पहाड़ या छत से गिरा दे और वह मर जाए तो क़िसास नहीं होगा बल्कि उसके असबा पर दियत लाज़िम होगी। अलबत्ता अगर वह इस काम के लिए मशहूर हो और एक से ज़्यादा लोगों को गला घोट कर मार चुका हो तो उसे क़त्ल किया जाएगा।” इब्न अल-मुन्धिर ने मज़ीद कहा: “नबी करीम ने उस यहूदी से क़िसास लिया जिसने लड़की का सिर पत्थरों से कुचल दिया था, और यह इसी उसूल पर मबनी था।”
Someone else related this view from Abu Hanifah and said, ‘Abu Hanifah has an aberrant view and stated that if someone kills by strangulation, poison,	किसी और ने यह राय इमाम अबू हनीफ़ा से मंसूब करते हुए कहा: “अबू हनीफ़ा की एक शाज़ राय है कि अगर कोई किसी को गला घोट

throwing someone from a mountain or into a well, or with a piece of wood, he is not killed and retaliation is not taken from him unless he killed with a sharpened blade, stone or wood, or is known for strangling and throwing people [to their death]. His male relatives must pay blood-money.’ This is contrary to the Book and the Sunnah. It is innovating something which is not the business of the community. It is a means of removing the retaliation which Allah has prescribed for people. This is inevitable.	कर, ज़हर दे कर, पहाड़ से गिरा कर या कुएँ में फेंक कर, या लकड़ी के ज़रिये क़त्ल करे तो उसे क़त्ल नहीं किया जाएगा और उससे क़िसास नहीं लिया जाएगा, अल्ला यह कि उसने तेज़ धार हथियार, पत्थर या लकड़ी के ज़रिये क़त्ल किया हो, या वह गला घोटने और लोगों को हलाक करने के लिए मशहूर हो। ऐसी सूरत में उसके असबा पर दियत लाज़िम होगी।” यह मौक़िफ़ किताब व सुन्नत के खिलाफ़ है और ऐसा क़ौल पेश करना है जो उम्मत के दायरे में नहीं आता। यह उस क़िसास को ख़त्म करने का ज़रिया बनता है जिसे अल्लाह ने लोगों के लिए मुकर्रर किया है, और यह अम्र क़ाबिल-ए-क़बूल नहीं।
They disagree about someone who imprisons a man and then another man does the killing. Ata said that the killer is killed and the prisoner imprisoned until he dies. Malik said, ‘If he imprisons him wanting to kill him, then they are both killed.’ The view of ash-Shafi i, Abu Thawr and an-Numan said that the one who imprisoned is	वे इस बारे में इख़िलाफ़ रखते हैं कि अगर एक शख्स किसी को कैद कर दे और फिर दूसरा शख्स उसे क़त्ल कर दे तो क्या हुक्म होगा। अता ने कहा कि क़ातिल को क़त्ल किया जाएगा और कैद करने वाले को कैद रखा जाएगा यहाँ तक कि वह मर जाए। इमाम मालिक ने कहा: “अगर उसने उसे क़त्ल के इरादे से कैद किया हो तो दोनों को क़त्ल किया

punished. Ibn al-Mundhir preferred that.	जाएगा।" जबकि इमाम शाफ़ी, अबू थौर और अन-नुमान का कहना है कि कैद करने वाले को सज़ा दी जाएगी। इब्न अल-मुन्धिर ने इसी क़ौल को तरजीह दी है।
The view of Ata is sound and demanded by the Revelation. Ad-Daraqutni related from Ibn Umar that the Prophet said, 'When one man holds a man while another kills him, then the killer and the one who held him are both killed.' Sufyan ath-Thawri related it from Ismail ibn Umayyah from Nafi from Ibn Umar, and Ibn Jurayj from Ismail mursal.	अता का क़ौल सही है और वही भी उसी का तक्काज़ा करती है। दारकुत्नी ने अब्दुल्लाह बिन उमर से रिवायत किया है कि नबी करीम ने फ़रमाया: "जब एक शख्स किसी को पकड़ कर रखे और दूसरा उसे क़त्ल करे तो क़ातिल और पकड़ने वाला दोनों क़त्ल किए जाएँगे।" सुफ़यान अस-सौरी ने इसे इस्माईल बिन उमय्या से, उन्होंने नाफ़े से, और उन्होंने इब्न उमर से रिवायत किया है, जबकि इब्न जुरैज ने इसे इस्माईल से मुरसल रिवायत किया है।
'Overstepping' is going beyond the limits as Allah says: 'Those who overstep Allah's limits.' The upshot of the ayah is that, if anyone wrongs you, you may take your right according to the way you were wronged, and if someone insults you, you may respond with what he said but may not go beyond what he said. So if someone insults you,	"ज़्यादती" का मतलब हुदूद से तजावुज़ करना है, जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है: "जो लोग अल्लाह की हदों से तजावुज़ करते हैं।" इस आयत का ख़ुलासा यह है कि अगर कोई तुम पर जुल्म करे तो तुम उसी तरह अपना हक़ ले सकते हो जिस तरह तुम पर जुल्म किया गया, और अगर कोई तुम्हें गाली दे तो तुम भी वैसा ही जवाब दे सकते हो,

you may insult him, but not insult his parents, son or relatives. You are not permitted to lie about him even if he lies about you. Disobedience may not be countered by disobedience. For instance, if someone says to you, 'You unbeliever!' you are permitted to say, 'You are the unbeliever.' But if he says, 'Adulterer!' then your retaliation is to say, 'You liar, bearer of false witness!' If you were to say, 'Adulterer!' then you would be a liar and sin in the lie. About someone who puts you off when he is wealthy without excuse and says, 'Wrongdoer! Consumer of people's wealth!' The Prophet said, 'The evasiveness of someone with sufficient means to pay makes his honour forfeit and his punishment lawful.' His honour is by what we explained and his punishment is imprisonment. Ibn Abbas said, 'This was revealed before Islam was strong and Muslims who were	लेकिन उसकी हद से आगे नहीं बढ़ सकते। पस अगर कोई तुम्हें गाली दे तो तुम उसे जवाब दे सकते हो, लेकिन उसके माँ-बाप, बेटे या रिश्तेदारों को गाली नहीं दे सकते। तुम्हें उसके बारे में झूठ बोलने की इजाज़त नहीं, चाहे वह तुम पर झूठ बाँधे। नाफ़रमानी का जवाब नाफ़रमानी से नहीं दिया जा सकता। मिसाल के तौर पर अगर कोई तुम से कहे: "ऐ काफ़िर!" तो तुम कह सकते हो: "तू ही काफ़िर है।" लेकिन अगर वह कहे: "ज़ानी!" तो तुम्हारा जवाब यह होगा: "तू झूठा है, झूठी गवाही देने वाला!" अगर तुम भी उसे "ज़ानी" कहोगे तो तुम झूठे हो जाओगे और गुनाह के मुर्तकिब होगे। इसी तरह अगर कोई मालदार शख्स बिना उज़्र तुम्हें टालता रहे और तुम कहो: "ज़ालिम! लोगों का माल खाने वाला!" तो यह दुरुस्त है। नबी करीम ने फ़रमाया: "मालदार आदमी का टालमटोल करना उसकी इज़्ज़त को मुबाह कर देता है और उसकी सज़ा को जायज़ बना देता है।" उसकी इज़्ज़त के बारे में वही है जो हमने बयान किया, और उसकी सज़ा कैद है। अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने कहा: "यह आयत उस वक़्त नाज़िल हुई
--	---

injured were commanded to repay with the like of the injury received, be patient or pardon. Then that was abrogated by Allah's words: "Fight the idolators totally." It is said that it was abrogated by taking it to the ruler and it is not lawful for anyone to take retaliation from anyone without the ruler's permission.	जब इस्लाम अभी मज़बूत नहीं हुआ था, और जिन मुसलमानों पर जुल्म होता था उन्हें हुक्म दिया गया था कि वे उसी जैसा बदला लें, या सब्र करें या माफ़ कर दें। फिर इसे अल्लाह तआला के इस फ़रमान से मन्सूख कर दिया गया: 'मुशरिकों से पूरी तरह जंग करो।' यह भी कहा गया है कि यह हुक्म हाकिम के ज़रिये नाफ़िज़ करने से मुतअल्लिक है, और किसी के लिए यह जायज़ नहीं कि वह हाकिम की इजाज़त के बग़ैर खुद किसी से बदला ले।
Spend in the Way of Allah. Do not cast yourselves into destruction. And do good: Allah loves good-doers. [2:195]	अल्लाह की राह में खर्च करो और अपने आप को हलाकत में न डालो, और नेकी करो; बेशक अल्लाह नेकी करने वालों से मुहब्बत करता है। [2:195]
Spend in the Way of Allah. Do not cast yourselves into destruction.	अल्लाह की राह में खर्च करो और अपने आप को हलाकत में न डालो।
Spend in the Way of Allah. Do not cast yourselves into destruction. Al-Bukhari related from Hudhayfah that this whole ayah was revealed about	अल्लाह की राह में खर्च करो और अपने आप को हलाकत में न डालो। इमाम बुखारी ने हुदैफ़ा बिन यमान से रिवायत किया है कि यह पूरी आयत खर्च करने के बारे में नाज़िल हुई।

spending. Aslam Abi Imran said, 'We raided Constantinople when Abd ar-Rahman ibn al-Walad was in charge of the group. The Byzantines were keeping their backs to the wall of the city. A man attacked the enemy and the people said, "Easy! Easy! Do not cast yourselves into destruction." Abu Ayyub said, "Glory be to Allah! This ayah was revealed about us, the Ansar. When Allah gave His Prophet victory and made His din victorious, we said, 'We will stay in our property and put it right,' and then Allah revealed, 'Spend in the Way of Allah.' The expression 'Do not cast yourselves into destruction' referred to staying at home to tend to one's property and abandoning jihad." Abu Ayyub continued to do jihad in the Way of Allah until he was buried in Constantinople. His tomb is there.' So Abu Ayyub informed us that casting oneself into destruction is abandoning jihad	असलम अबू इमरान ने कहा: "हमने कुस्तुन्तुनिया पर हमला किया जब अब्दुर्रहमान बिन अल-वलीद लश्कर के अमीर थे। रूमी शहर की दीवार के साथ अपनी पीठ लगाए हुए थे। एक आदमी ने दुश्मन पर हमला कर दिया तो लोगों ने कहा: 'आहिस्ता! आहिस्ता! अपने आप को हलाकत में न डालो!' अबू अय्यूब अंसारी ने कहा: 'सुब्हान अल्लाह! यह आयत हमारे बारे में नाज़िल हुई थी, यानी अंसार के बारे में। जब अल्लाह ने अपने नबी को फ़तह दी और अपने दीन को ग़ालिब किया तो हमने कहा: हम अपनी जायदादों में ठहर जाएँ और उन्हें दुरुस्त करें। तब अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया: "अल्लाह की राह में खर्च करो।" और "अपने आप को हलाकत में न डालो" से मुराद यह था कि आदमी अपने माल में लग कर जिहाद को छोड़ दे।" अबू अय्यूब (रज़ि.) अल्लाह की राह में जिहाद करते रहे यहाँ तक कि वे कुस्तुन्तुनिया में दफ़न हुए, और उनकी क़ब्र वहीं है। इस तरह अबू अय्यूब (रज़ि.) ने हमें बताया कि अपने आप को हलाकत में डालने का मतलब अल्लाह की राह में जिहाद को तर्क करना है, और यह आयत
---	---

in Allah's cause and that the ayah was revealed about that. The like of that is related from Hudhayfah, al-Hasan, Qatadah, Mujahid and ad-Dahhak.	इसी बारे में नाज़िल हुई। इसी तरह की रिवायत हुदैफ़ा बिन यमान, हसन बसरी, कतादा, मुजाहिद और अद-दहहाक से भी मनकूल है।
At-Tirmidhi related this report from Yazid ibn Abi Habib from Abu Imran Aslam. He said, 'We were in the city of the Greeks. They came out against us in a single rank. The same number or more of the Muslims went out against them. Uqbah ibn Amir was in charge of the Egyptians and Fadalah ibn Ubayd was in charge of the Syrians. A man from the Muslims attacked the Greek ranks until he penetrated them. The people shouted and said, "Glory be to Allah! He is casting himself into destruction!" Abu Ayyub al-Ansari stood and said, "People! You interpret this ayah in this way when this ayah was revealed about us, the Ansar! When Allah exalted Islam and its helpers were numerous, we said secretly to one another	इमाम तिरमिज़ी ने यह रिवायत यज़ीद बिन अबी हबीब से, उन्होंने अबू इमरान अस्लम से नक़ल की। वे कहते हैं: "हम रूमियों के शहर में थे। वे हमारे मुक़ाबले के लिए एक सफ़ में निकले। मुसलमानों की भी उतनी ही या उससे ज़्यादा तादाद उनके मुक़ाबले निकली। उक्बा बिन आमिर मिस्रियों के अमीर थे और फ़दाला बिन उबैद शामियों के अमीर थे। मुसलमानों में से एक शख्स ने रूमी सफ़ों पर हमला किया यहाँ तक कि वह उनके अंदर घुस गया। लोगों ने आवाज़ लगाई: 'सुब्हान अल्लाह! यह तो अपने आप को हलाकत में डाल रहा है!' अबू अय्यूब अंसारी खड़े हुए और कहा: 'लोगो! तुम इस आयत की यह तफ़सीर करते हो, हालाँकि यह आयत हमारे बारे में नाज़िल हुई थी, यानी अंसार के बारे में! जब अल्लाह ने इस्लाम को इज़्ज़त दी और उसके मददगार बहुत हो गए तो हमने आपस में, रसूल अल्लाह से अलग होकर, कहा: "हमारा माल ज़ाया हो

apart from the Messenger of Allah, ‘Our property is lost. Allah has exalted Islam and it has many helpers. We should stay in our property and put right what has been lost of it.’ So Allah revealed to His Prophet that which refuted what we said: ‘Spend in the Way of Allah. Do not cast yourselves into destruction.’ The actual destruction was staying in one’s property, tending to it, and abandoning expeditions.” Abu Ayyub continued to fight in the Way of Allah until he was buried in Greek territory.’ Abu Isa said that it is a sound gharib hasan hadith.	गया है। अल्लाह ने इस्लाम को इज्जत दी है और उसके मददगार बढ़ गए हैं, लिहाज़ा हमें चाहिए कि हम अपने माल की तरफ़ मुतवज्जेह हों और जो कुछ ज़ाया हो गया है उसे दुरुस्त करें।” तो अल्लाह ने अपने नबी पर वह नाज़िल फ़रमाया जो हमारी बात की तरदीद करता था: “अल्लाह की राह में ख़र्च करो और अपने आप को हलाकत में न डालो।” पस हलाकत दरअसल अपने माल में मशगूल हो जाना, उसकी देखभाल करना और जिहाद को छोड़ देना था।” अबू अय्यूब (रज़ि.) अल्लाह की राह में जिहाद करते रहे यहाँ तक कि वे रूमी सरज़मीन में दफ़न हुए। इमाम तिमिज़ी (अबू ईसा) ने कहा कि यह हदीस सहीह, ग़रीब और हसन है।
Hudhayfah ibn al-Yaman, Ibn Abbas, Ikrimah, Ata, Mujahid and the majority of people say that ‘do not cast yourselves into destruction’ refers to not spending in the Way of Allah and fearing poverty so that a man says, ‘I do not have anything that I can spend.’ Al-Bukhari believed this since he	हुदैफ़ा बिन यमान, अब्दुल्लाह बिन अब्बास, इकरिमा, अता, मुजाहिद और जमहूर उलमा का कहना है कि “अपने आप को हलाकत में न डालो” से मुराद अल्लाह की राह में ख़र्च न करना और फ़क्र का ख़ौफ़ है, यहाँ तक कि आदमी कहे: “मेरे पास कुछ नहीं जिसे मैं ख़र्च करूँ।” इमाम बुख़ारी का भी यही रुज़ान था, क्योंकि उन्होंने इसके अलावा कोई और क़ौल

did not mention anything else. Allah knows best. Ibn Abbas said, ‘Spend in the Way of Allah, even if you do not have a share or portion. No one should say, “I do not have anything.”’ The same is reported from as-Suddi: ‘Spend, even a hobble. Do not cast yourself into destruction and say, “I have nothing.”’	ज़िक्र नहीं किया। और अल्लाह ही बेहतर जानता है। अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने कहा: “अल्लाह की राह में खर्च करो, चाहे तुम्हारे पास कोई हिस्सा या मात्रा न हो। कोई यह न कहे: ‘मेरे पास कुछ नहीं है।’” इसी तरह अस-सुद्दी से रिवायत है: “खर्च करो, चाहे एक रस्सी ही क्यों न हो। अपने आप को हलाकत में न डालो और यह न कहो: ‘मेरे पास कुछ नहीं है।’”
There is a third view stated by Ibn Abbas. It is that when the Messenger of Allah commanded people to go out in jihad, some of the desert Arabs present in Madinah went to him and said, ‘What shall we use for provision? By Allah, we have no provisions and no one will feed us.’ So Allah revealed, ‘Spend in the Way of Allah,’ i.e. the wealthy should spend in the Way of Allah to obey Allah. Do not cast yourselves to destruction,’ i.e. do not refrain from giving sadaqah so that you are destroyed. That is also what Muqatil said. The meaning of	अब्दुल्लाह बिन अब्बास से एक तीसरा क़ौल भी मन्कूल है। वह यह है कि जब रसूल अल्लाह मुहम्मद ने लोगों को जिहाद के लिए निकलने का हुक्म दिया तो मदीना में मौजूद कुछ देहाती आपके पास आए और कहने लगे: “हम ज़ाद-ए-राह कहाँ से लाएँ? अल्लाह की क़सम! हमारे पास कुछ नहीं है और न कोई हमें खिलाने वाला है।” तो अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई: “अल्लाह की राह में खर्च करो”, यानी मालदार लोग अल्लाह की इताअत में उसकी राह में खर्च करें। “और अपने आप को हलाकत में न डालो”, यानी सदक़ा देने से रुक न जाओ, वरना तुम हलाक हो जाओगे। यही बात

what Ibn Abbas said about not refraining from giving sadaqah is: ‘Do not refrain from giving to the weak. If they stay behind you, the enemy will defeat you and you will be destroyed.’	मुक़ातिल ने भी कही है। अब्दुल्लाह बिन अब्बास के इस क़ौल का मतलब कि सद्का देने से न रुको, यह है: “कमज़ोरों को देने से बाज़ न आओ, क्योंकि अगर वे तुम्हारे पीछे रह गए तो दुश्मन तुम पर ग़ालिब आ जाएगा और तुम हलाक हो जाओगे।”
A fourth view is related from al-Bara’ ibn Azib about this ayah. He was asked, ‘Is it a man who attacks a squadron?’ He answered, ‘No, but it is a man who commits a sin and then says, “I have disobeyed Allah too much. There is no point in repenting,” and he despairs of Allah and after that devotes himself to disobedience.’ So destruction is despairing of Allah. Ubaydah as-Salmani said that.	अल-बराअ बिन आज़िब से इस आयत के बारे में एक चौथा क़ौल भी मन्कूल है। उनसे पूछा गया: “क्या इससे मुराद वह शख्स है जो किसी लश्कर पर हमला करे?” उन्होंने जवाब दिया: “नहीं, बल्कि इससे मुराद वह शख्स है जो गुनाह करता है और फिर कहता है: ‘मैंने बहुत ज़्यादा अल्लाह की नाफ़रमानी कर ली है, अब तौबा का कोई फ़ायदा नहीं’, और वह अल्लाह से नाउम्मीद हो जाता है और उसके बाद नाफ़रमानी में लग जाता है।” पस हलाकत का मतलब अल्लाह से नाउम्मीद होना है। यही बात उबैदा अस-सलमानी ने भी कही है।
Zayd ibn Aslam said that it means: ‘Do not travel in jihad without provision. People did that and it led to them being cut off on the road or being a	ज़ैद बिन अस्लम ने कहा कि इसका मतलब यह है: “जिहाद के लिए बिना ज़ाद-ए-राह के सफ़र न करो। लोग ऐसा करते थे जिसकी वजह से वे रास्ते में मुहताज हो जाते या लोगों पर

burden on the people. This is a fifth view.	बोझ बन जाते थे।" यह पाँचवाँ क़ौल है।
The 'Way of Allah' (sabilullah) here means jihad and refers to all the ways of doing it. Al-Mubarrad says that 'your hands' [the Arabic is bi-aydikum, literally 'by your hands'] means 'yourselves'. The part designates the whole. This is a common usage in the Quran. It is also said that this is a sort of metaphor. A person puts his hand to something when he undertakes to do it personally, and someone involved in fighting has his weapons in his hand. The expression is also used for something that a person fails to do. 'Destruction' (tahlukah) is a verbal noun derived from the verb meaning 'to destroy' (halaka). It is also said that it means: 'Do not take what will destroy you.' Az-Zajjaj and others said that. It means: if you do not spend, then you disobey Allah and are destroyed. It is also said that it	"सबीलुल्लाह" से यहाँ मुराद जिहाद है और उसके तमाम तरीक़े इसमें शामिल हैं। अल-मुबर्द कहते हैं कि "बि-अयदीकुम" (यानी "अपने हाथों से") से मुराद "तुम खुद" हो, यानी जज़ के ज़रिये कुल मुराद लिया गया है, जो कुरआन में आम उस्तूब है। यह भी कहा गया है कि यह एक क़िस्म का मज़ाज़ है, क्योंकि इंसान जब किसी काम को खुद अंजाम देता है तो उसे अपने हाथ से अंजाम देता है, और लड़ने वाला अपने हथियार हाथ में रखता है। यह ताबीर उस चीज़ के लिए भी इस्तेमाल होती है जिसे इंसान छोड़ दे। "तहलुका" (हलाकत) मसदर है, जो "हलाक होना" से निकला है। यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है: "ऐसी चीज़ इस्तिyार न करो जो तुम्हें हलाक कर दे।" अज़-ज़ज्जाज और दीगर ने यही कहा है। इसका मतलब यह है कि अगर तुम ख़र्च न करो तो अल्लाह की नाफ़रमानी करोगे और हलाक हो जाओगे। यह भी कहा गया है कि इसका मतलब यह है कि अपने माल को न रोको, क्योंकि बिलआख़िर

means: do not hold on to your property as others are certainly going to inherit it and you will be ‘destroyed’ by being deprived of the use of your property. Another meaning is: do not hold on to your property because, by doing so, you will miss out on its restitution in this world and the reward for giving it away in the Next World. It is also said that it means: do not spend from what is unlawful so that it comes back on you and you are destroyed. Something similar is related from Ikrimah. He said that this is like another ayah: ‘Do not have recourse to bad things when you give.’ It is general and includes all that was mentioned since the expression allows that.	दूसरे लोग उसके वारिस बन जाएँगे और तुम उसके फ़ायदे से महरूम होकर “हलाक” हो जाओगे। एक और मअनी यह है कि अपने माल को न रोको, क्योंकि ऐसा करने से तुम दुनिया में उसके बदले से और आखिरत में उसके अज़्र से महरूम रह जाओगे। यह भी कहा गया है कि इसका मतलब यह है कि हराम माल से खर्च न करो, वरना वह तुम पर वबाल बनेगा और तुम हलाक हो जाओगे। इसी तरह की बात इकरिमा से भी मनकूल है। उन्होंने कहा कि यह दूसरी आयत की तरह है: “खर्च करते वक़्त नापाक चीज़ों की तरफ़ क़स्द न करो।” यह मफ़हूम आम है और इन तमाम बातों को शामिल है, क्योंकि आयत के अल्फ़ाज़ इसकी गुंजाइश रखते हैं।
Scholars disagree about a man attacking another man in battle and about attacking the enemy on his own. Al-Qasim ibn Mukhaymarah, al-Qasim ibn Muḥammad and Abd al-Malik among our scholars say that	उलमा इस बात में इख़िलाफ़ रखते हैं कि जंग में एक आदमी का दूसरे पर हमला करना या अकेले दुश्मन पर टूट पड़ना कैसा है। अल-क़ासिम बिन मुखैमिरा, अल-क़ासिम बिन मुहम्मद और अब्दुल मलिक हमारे उलमा में से कहते हैं कि अगर कोई

there is no harm in a man attacking a large army alone when he is strong and has a sincere intention. If he is not strong, that is tantamount to suicide. It is said that, when someone seeks martyrdom and has a sincere intention, he is permitted to attack because his aim is to attack the enemy. That is clear in the words of the Almighty: ‘Among the people there are some you give up everything, desiring the good pleasure of Allah.’ Ibn Khuwayzimandad said, ‘If a man attacks a hundred, or an entire army, or a group of thieves and bandits, or Kharijites, there are two possibilities. If he knows and thinks it is probable that he will kill the one he attacks and survive, that is good. If he knows and thinks it probable that he will be killed, but will cause great harm or open a path which the Muslims can use, then it is also permitted.’ I have heard that when the Muslim army met the Persians, a group	आदमी ताक़तवर हो और उसकी नीयत ख़ालिस हो तो उसका तन्हा बड़े लश्कर पर हमला करना जायज़ है। अगर वह ताक़तवर न हो तो यह खुद को हलाकत में डालने के मुतरादिफ़ है। यह भी कहा गया है कि जब कोई शहादत का तलबगार हो और उसकी नीयत ख़ालिस हो तो उसके लिए हमला करना जायज़ है, क्योंकि उसका मक़सद दुश्मन पर ज़र्ब लगाना होता है। इसकी ताईद अल्लाह तआला के इस फ़रमान से होती है: “और लोगों में से कुछ ऐसे हैं जो अल्लाह की रज़ा के लिए अपनी जान बेच देते हैं।” इब्न ख़ुवैज़िमंदद ने कहा: “अगर कोई शख्स सौ अफ़राद, या पूरे लश्कर, या डाकुओं और लुटेरों के गिरोह, या ख़वारिज़ पर हमला करे तो इसमें दो सूरतें हैं: अगर उसे ग़ालिब गुमान हो कि वह अपने मुखालिफ़ को क़त्ल कर देगा और खुद बच जाएगा तो यह अच्छा है। और अगर उसे ग़ालिब गुमान हो कि वह खुद क़त्ल हो जाएगा लेकिन बड़ा नुक़सान पहुँचाएगा या मुसलमानों के लिए कोई रास्ता खोल देगा, तो यह भी जायज़ है।” मैंने सुना है कि जब मुसलमानों का लश्कर फ़ारसियों से मुक़ाबला हुआ तो
--	---

of the Muslim cavalry bolted from the elephants. One of their men made a clay elephant and made his horse familiar with it. In the morning his horse did not shy away from the elephants. He attacked the leading elephant. He was told, 'It will kill you.' He said, 'There is no harm if I am killed and the Muslims are victorious.' The same was true in the Battle of Yamamah when the Banu Hanifah fortified themselves in the walled garden and one of the Muslims said, 'Put me in the catapult and shoot me at them.' They did that and he fought them alone and opened the gate.	मुसलमानों के घुड़सवारों का एक गिरोह हाथियों से बदक गया। उनमें से एक शख्स ने मिट्टी का हाथी बनाया और अपने घोड़े को उससे मानूस किया। सुबह जब वह मैदान में गया तो उसका घोड़ा हाथियों से नहीं घबराया। उसने आगे के हाथी पर हमला किया। उसे कहा गया: "यह तुम्हें मार डालेगा।" उसने कहा: "अगर मैं मारा भी जाऊँ और मुसलमान गालिब आ जाएँ तो कोई हरज नहीं।" इसी तरह जंग यमामा में जब बनू हनीफ़ा क़िला-बंद बाग़ में महसूर हो गए तो एक मुसलमान ने कहा: "मुझे मंजनिक में रख कर उन पर फेंक दो।" चुनाँचे ऐसा किया गया, वह अकेला उनसे लड़ा और दरवाज़ा खोल दिया।
Part of this is what is related that a man said to the Prophet: 'What do you think if I am killed in the Way of Allah with steadfastness and in expectation of the reward?' He answered, 'You will have the Garden.' He dived into the enemy until he was killed. We find in Sahih Muslim from	इस ज़िम्न में वह रिवायत भी आती है कि एक शख्स ने नबी करीम से पूछा: "आप का क्या ख़याल है अगर मैं अल्लाह की राह में साबित क़दमी और अज़्र की उम्मीद के साथ क़त्ल हो जाऊँ?" आप ने फ़रमाया: "तुम्हारे लिए जन्नत है।" फिर वह दुश्मन में घुस गया यहाँ तक कि क़त्ल हो गया। हमें सहीह मुस्लिम में अनस बिन मालिक से रिवायत मिलती है कि

Anas ibn Malik that in the Battle of Uhud the Messenger of Allah was left with only seven of the Ansar and two men of Quraysh. When the enemy approached, he said, 'Whoever turns them away from us will have the Garden,' or 'will be my companion in the Garden.' One of the Ansar went forward and fought until he was killed. Then they advanced again and again he said, 'Whoever turns them away from us will have the Garden' or 'will be my companion in the Garden.' Another of the Ansar went forward and fought until he was killed. This continued until all seven were killed and the Prophet said, 'We have not done justice to our Companions.'	राज़वा-ए-उहुद के दिन रसूल अल्लाह के साथ सिर्फ़ सात अंसारी और कुरैश के दो आदमी रह गए थे। जब दुश्मन करीब आया तो आप ने फ़रमाया: "जो उन्हें हम से हटा देगा उसके लिए जन्नत है" या फ़रमाया: "वह जन्नत में मेरा साथी होगा।" एक अंसारी आगे बढ़ा और लड़ता रहा यहाँ तक कि शहीद हो गया। फिर दुश्मन दोबारा बढ़ा तो आप ने फिर यही फ़रमाया: "जो उन्हें हम से हटा देगा उसके लिए जन्नत है" या "वह जन्नत में मेरा साथी होगा।" एक और अंसारी आगे बढ़ा और लड़ता रहा यहाँ तक कि शहीद हो गया। इसी तरह यह सिलसिला जारी रहा यहाँ तक कि सातों शहीद हो गए। फिर नबी करीम ने फ़रमाया: "हमने अपने साथियों के साथ इंसाफ़ नहीं किया।"
Muhammad ibn al-Hasan said, 'If one man attacks a thousand idolaters on his own, there is no harm in that provided he hopes to survive or inflict great damage on the enemy. If that is	मुहम्मद बिन अल-हसन ने कहा: "अगर एक आदमी अकेला हज़ार मुशरिकीन पर हमला करे तो इसमें कोई हरज नहीं, बशर्ते कि उसे उम्मीद हो कि वह बच जाएगा या दुश्मन को बड़ा नुक़सान पहुँचाएगा।"

not the case, then it is disliked because he exposes himself to destruction without any benefit for the Muslims. If his intention is to encourage Muslims to follow him, it may be permitted because of the benefit for the Muslims involved. If he intends to terrify the enemy and show them the resolve of the Muslims, it may also be permitted.'	अगर ऐसा न हो तो यह मकरूह है, क्योंकि वह अपने आप को बिना किसी फ़ायदे के हलाकत में डाल रहा है। अगर उसकी नीयत यह हो कि मुसलमानों को उसकी पैरवी पर उभारे तो इसमें मुसलमानों के फ़ायदे की वजह से इजाज़त हो सकती है। और अगर उसका मक़सद दुश्मन को ख़ौफ़ज़दा करना और मुसलमानों के अज़्म को ज़ाहिर करना हो तो यह भी जायज़ हो सकता है।"
If that will help the Muslims, strengthen the din of Allah and weaken the unbelievers, then it is the noble station which Allah praises when He says: 'Allah has bought from the believers their selves and their wealth in return for them having the Garden. They fight in the way of Allah, and they kill and are killed.' There are others ayahs in which Allah praises those who expend themselves in that way. The same applies to the ruling of commanding what is correct and forbidding what is bad when one hopes that it will help the din and a person	अगर इसमें मुसलमानों की मदद हो, अल्लाह के दीन को ताक़त मिले और काफ़िरों को कमज़ोर किया जाए तो यह वह बुलंद मक़ाम है जिसकी अल्लाह ने तारीफ़ की है जब वह फ़रमाता है: "बेशक अल्लाह ने मोमिनों से उनकी जानें और उनके माल ख़रीद लिए हैं, इसके बदले कि उनके लिए जन्नत है। वे अल्लाह की राह में लड़ते हैं, पस वे क़त्ल करते हैं और क़त्ल किए जाते हैं।" इसी तरह की और भी आयतें हैं जिनमें अल्लाह ने ऐसे लोगों की तारीफ़ की है जो अपनी जानें इस राह में खपा देते हैं। इसी तरह अम्र बिल-मअरूफ़ और नह्य अनिल-मुनकर का हुक्म भी है, जब किसी को उम्मीद हो कि इससे

strives to achieve that until he is killed: he is in the ranks of the martyrs. Allah says: 'Command what is right and forbid what is wrong and be steadfast in the face of all that happens to you. That is certainly the most resolute course to follow.' Ikrimah related from Ibn Abbas that the Prophet said, 'The best of martyrs is Hamzah ibn Abd al-Muttalib and a man who speaks the truth in the presence of a tyrannical ruler who kills him.' This will be discussed in Al Imran, Allah willing.	दीन को फ़ायदा होगा, और वह उसके हासिल के लिए कोशिश करता रहे यहाँ तक कि क़त्ल कर दिया जाए, तो वह शुहदा के दर्जे में होता है। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "नेकी का हुक्म दो और बुराई से रोको और जो कुछ तुम्हें पेश आए उस पर सब्र करो, बेशक यही बड़ी हिम्मत के कामों में से है।" इकरिमा ने अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत किया कि नबी करीम ने फ़रमाया: "सबसे अफ़ज़ल शहीद हमज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब हैं, और वह शख्स जो किसी ज़ालिम हाकिम के सामने हक़ बात कहे और वह उसे क़त्ल कर दे।" इसकी मज़ीद तफ़सील इंशा अल्लाह सूरह आल-इमरान में आएगी।
And do good: Allah loves good-doers.	और नेकी करो; बेशक अल्लाह नेकी करने वालों से मुहब्बत करता है।
Spend in obedience and have a good opinion of Allah that He will repay you for doing it. It is said that it means: do good in your actions by obeying Allah. That is related from some Companions.	इता'अत में ख़र्च करो और अल्लाह के बारे में अच्छा गुमान रखो कि वह तुम्हें उसका बदला देगा। यह भी कहा गया है कि इसका मतलब है: अपने आमाल में नेकी करो, अल्लाह की इता'अत के ज़रिये। यह कुछ

	सहाबा से मनकूल है।
Perform the Hajj and ‘umrah for Allah. If you are forcibly prevented, make whatever sacrifice is feasible. But do not shave your heads until the sacrificial animal has reached the place of sacrifice. If any of you are ill or have a head injury, the expiation is fasting or sadaqah or sacrifice when you are safe and well again. Anyone who comes out of ihram between ‘umrah and hajj should make whatever sacrifice is feasible. For anyone who cannot, there is three days’ fast on hajj, and seven on your return – that is ten in all. That is for anyone whose family does not live near the Masjid al-Haram. Be fearful of Allah and know that Allah is fierce in retribution. [2:196]	हज और उमरा अल्लाह के लिए पूरे करो। अगर तुम रोक दिए जाओ तो जो कुर्बानी मयस्सर हो वह पेश करो। और अपने सिरों को न मुंडो जब तक कि कुर्बानी अपनी जगह तक न पहुँच जाए। अगर तुम में से कोई बीमार हो या उसके सिर में तकलीफ़ हो तो उसका फ़िदया रोज़ा या सदक़ा या कुर्बानी है। फिर जब तुम अमन में हो जाओ तो जो शख्स उमरा के बाद हज तक इहराम से बाहर आए, वह जो कुर्बानी मयस्सर हो पेश करे। और जो न पाए वह हज के दिनों में तीन रोज़े रखे और वापसी पर सात—यह पूरे दस हैं। यह उसके लिए है जिसके घर वाले मस्जिद अल-हराम के करीब न रहते हों। अल्लाह से डरो और जान लो कि अल्लाह सख्त सज़ा देने वाला है। [2:196]
Perform the Hajj and ‘umrah for Allah.	हज और उमरा अल्लाह के लिए अदा करो।
Scholars disagree about what	उलमा इस के मआनी में इख़िलाफ़

this means [as the verb used normally means ‘to complete’]. It is said it means: perform them, doing both of them, as the verb is used elsewhere to mean this. This is according to the position of those who consider umrah to be obligatory. Those who do not consider it to be obligatory say that it means complete them once you have begun them. When someone assumes ihram, he is obliged to complete the act for which he has entered it and not invalidate it. Ash-Shabi and Ibn Zayd stated that. ‘Ali ibn Abi Talib said that ‘completing them’ is to assume ihram for them from the abode of one’s people. That is related from ‘Umar ibn al-Khattab and Sad ibn Abi Waqqas. ‘Imran ibn Husayn did that. Sufyun ath-Thawri said that ‘completing them’ is to set out intending them and not trade or anything else. That is strengthened by His words, ‘for Allah’. ‘Umar said that ‘completing them’ is to do each	रखते हैं [क्योंकि यहाँ जो फ़ेल इस्तेमाल हुआ है वह आम तौर पर “पूरा करने” के मआनी देता है]। कहा गया है कि इसका मतलब यह है कि उन्हें अदा करो, यानी दोनों को बजा लाओ, क्योंकि यह फ़ेल कुछ जगहों पर इसी मआनी में भी इस्तेमाल होता है। यह उन लोगों के नज़दीक है जो उमरा को वाजिब करार देते हैं। और जो लोग उमरा को वाजिब नहीं समझते, वे कहते हैं कि इसका मतलब यह है कि जब तुम उनका आगाज़ कर लो तो उन्हें मुकम्मल करो। जब कोई शख्स एहराम बाँध लेता है तो उस पर लाज़िम हो जाता है कि जिस इबादत के लिए उसने एहराम बाँधा है उसे पूरा करे और उसे बातिल न करे। यह अश-शाबी और इब्न ज़ैद का क़ौल है। अली बिन अबी तालिब ने फ़रमाया कि “उन्हें मुकम्मल करना” यह है कि अपने वतन ही से उनके लिए एहराम बाँधा जाए। यह क़ौल उमर बिन ख़त्ताब और सअद बिन अबी वक़्कास से भी मर्वी है, और इमरान बिन हुसैन ने इसी पर अमल किया। सुफ़यान अस-सौरी ने कहा कि “उन्हें मुकम्मल करना” यह है कि ख़ालिस उनकी नियत से सफ़र किया जाए, न कि
--	---

of them separately without tamattu' or qiran. Ibn Habib said that. Muqatil said that 'completing them' means not to make inappropriate things lawful in them. That was because they used to commit shirk in their ihram and would say, 'At Your service, O Allah! At Your service! You have no partner except a partner that is Yours. You control him and he does not control You.' Therefore He said to complete them without mixing anything else in them.	तिजारत या किसी और मक़सद के लिए। इसकी ताईद अल्लाह के इस फ़रमान से होती है: "अल्लाह के लिए।" उमर बिन ख़त्ताब ने यह भी कहा कि "उन्हें मुकम्मल करना" यह है कि हर एक को अलग-अलग अदा किया जाए, तमत्तु या किरान के बग़ैर। इब्न हबीब ने यह नक़ल किया है। मुक़ातिल ने कहा कि "उन्हें मुकम्मल करना" का मतलब यह है कि उनमें किसी नामुनासिब चीज़ को जायज़ न किया जाए। इसकी वजह यह थी कि लोग एहराम की हालत में शिर्क करते थे और कहते थे: "लब्बैक अल्लाहुम्मा लब्बैक! तेरा कोई शरीक नहीं, सिवाए उस शरीक के जो तेरा ही है, तू उसका मालिक है और वह तेरा मालिक नहीं।" लिहाज़ा अल्लाह तआला ने हुक्म दिया कि उन्हें इस तरह मुकम्मल करो कि उनमें किसी और चीज़ की आमेज़िश न हो।
As for what is related from Ali and what Imran ibn Husayn did in assuming ihram before the miqats that the Messenger of Allah established, Abdullah ibn Masud and a group of the Salaf supported it. It is confirmed that 'Umar assumed ihram	अली बिन अबी तालिब से जो रिवायत मन्कूल है और इमरान बिन हुसैन का जो अमल है कि उन्होंने उन मीक़ातों से पहले एहराम बाँधा जो रसूल अल्लाह मुहम्मद ने मुक़र्रर फ़रमाए थे, उसकी ताईद अब्दुल्लाह बिन मसऊद और सलफ़ के एक गिरोह ने

from Jerusalem and that al-Aswad, Alqamah, Abd ar-Rahman and Abu Ishaq assumed ihram from their houses. Ash-Shafi'i made an allowance for doing that. Abu Dawud and ad-Daraqutni related from Umm Salamah said that the Messenger of Allah said, 'If someone assumes ihram for hajj or 'umrah from Jerusalem, he leaves his sins like the day his mother bore it.' One variant has: 'he is forgiven past and future sins.' Abu Dawud transmitted it and said, 'May Allah show mercy to Waki! He assumed ihram from Jerusalem,' i.e. for Makkah. This contains permission to assume ihram before the miqat.	की है। यह भी साबित है कि उमर बिन खत्ताब ने बैतुल मुक़द्दस से एहराम बाँधा, और अल-अस्वद, अलक़मा, अब्दुर्रहमान और अबू इस्हाक़ ने अपने घरों ही से एहराम बाँधा। इमाम शाफ़ी ने भी इसकी इजाज़त दी है। इमाम अबू दाऊद और दारकुली ने उम्मे सलमा से रिवायत किया है कि रसूल अल्लाह ने फ़रमाया: "जो शख्स बैतुल मुक़द्दस से हज या उमरा का एहराम बाँधे, वह अपने गुनाहों से उस दिन की तरह पाक हो जाता है जिस दिन उसकी माँ ने उसे जना था।" एक रिवायत में है: "उसके पिछले और आने वाले गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।" इमाम अबू दाऊद ने इसे रिवायत किया और कहा: "अल्लाह वक़ीअ पर रहम करे! उन्होंने मक्का के लिए बैतुल मुक़द्दस से एहराम बाँधा था।" यह सब इस बात की दलील है कि मीक़ात से पहले एहराम बाँधना जायज़ है।
Malik disliked anyone adopting ihram before the miqat. He related that from 'Umar ibn al-Khattab who objected to 'Imran ibn Husayn adopting ihram from Basra and 'Uthman objected to Ibn 'Umar adopting	इमाम मालिक मीक़ात से पहले एहराम बाँधने को नापसंद करते थे। उन्होंने यह राय उमर बिन खत्ताब से नक़ल की है, जिन्होंने इमरान बिन हुसैन के बसरा से एहराम बाँधने पर एतराज़ किया, और उस्मान बिन

ihram before the miqat. Ahmad and Ishaq said that the correct thing is to start at the miqats. Part of the argument for this view is that the Messenger of Allah established the miqats and specified them, thereby clarifying something previously undefined about the Hajj. The Prophet did not adopt ihram for hajj from his house, but did so at the miqat he established for his community. What the Prophet did is the best, Allah willing. That is also what was done by most of the Companions and the Tabiun after them.	अफ़फ़ान ने अब्दुल्लाह बिन उमर के मीक़ात से पहले एहराम बाँधने पर एतराज़ किया। इमाम अहमद बिन हम्बल और इस्हाक़ बिन राहवयह ने कहा कि दुरुस्त तरीक़ा यह है कि मीक़ात ही से एहराम बाँधा जाए। इस राय की दलील यह है कि रसूल अल्लाह मुहम्मद ने मीक़ातों को मुक़र्रर फ़रमाया और उनकी तअय्युन की, इस तरह हज के एक गैर-मुतअय्यन पहलू को वाज़ेह कर दिया। नबी करीम ने अपने घर से हज का एहराम नहीं बाँधा, बल्कि उसी मीक़ात से बाँधा जो आपने अपनी उम्मत के लिए मुक़र्रर फ़रमाया था। जो अमल नबी ने किया वही अफ़ज़ल है, इंशा अल्लाह। यही तरीक़ा अकसर सहाबा और उनके बाद ताबिईन का भी रहा है।
The people holding the first view argue that it is better because ‘A’ishah said, ‘The Messenger of Allah was not given a choice between two things but that he chose the easier of them,’ and the ḥadith of Umm Salamah, along with what was mentioned from the Companions who saw the	पहली राय रखने वाले कहते हैं कि यह बेहतर है, क्योंकि आइशा सिद्दीका ने फ़रमाया: “रसूल अल्लाह को जब भी दो चीज़ों में इख़्तियार दिया जाता तो आप उनमें से आसान को इख़्तियार फ़रमाते थे।” और उम्मे सलमा की हदीस भी इसी पर दलालत करती है, नीज़ उन सहाबा की रिवायतें भी जिन्होंने देखा कि

Messenger of Allah adopt ihram for hajj from the miqat. They knew what he intended and knew that his ihram from the miqat was to make things easier for his community.	रसूल अल्लाह मुहम्मद ने हज के लिए मीकात से एहराम बाँधा। वे जानते थे कि आप का मक़सद क्या था, और यह भी समझते थे कि आपका मीकात से एहराम बाँधना अपनी उम्मत के लिए आसानी पैदा करने के लिए था।
The imams have related that the Messenger of Allah set the miqat for the people of Madinah at Dhu-l-Hulayfah, for the people of Syria at al-Juhfah, for the people of Najd at Qarn and for the people of Yemen at Yalamlam. Those sites were for them and for other people who came to them intending hajj and 'umrah. Those who were closer to Makkah than them would assume ihram from where they started so that the people of Makkah did so in Makkah. The people of knowledge agree on the literal meaning of this hadith and acting on it. There is absolutely no disagreement about it. They disagree about the miqat of the people of Iraq and those who take their miqat.	उलमा ने रिवायत किया है कि रसूल अल्लाह मुहम्मद ने अहल-ए-मदीना के लिए मीकात जुल-हुलैफ़ा मुकर्रर फ़रमाया, अहल-ए-शाम के लिए अल-जुहफ़ा, अहल-ए-नज्द के लिए करन अल-मनाज़िल और अहल-ए-यमन के लिए यलमलम। ये मक़ामात उनके लिए और उन तमाम लोगों के लिए हैं जो वहाँ से गुज़रते हुए हज और उमरा का इरादा करें। और जो लोग इन से भी मक्का के करीब हों, वे अपने मक़ाम से एहराम बाँधें, यहाँ तक कि अहल-ए-मक्का मक्का ही से एहराम बाँधते हैं। अहल-ए-इल्म इस हदीस के ज़ाहिरी मआनी और उस पर अमल करने पर मुत्तफ़िक़ हैं, और इसमें कोई इख़िलाफ़ नहीं। अलबत्ता अहल-ए-इराक़ के मीकात के बारे में इख़िलाफ़ है। इमाम अबू दाऊद और इमाम तिर्मिज़ी ने अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत

Abu Dawud and at-Tirmidhi related from Ibn ‘Abbas that the Prophet set the miqat for the people of the east at al-Aqiq. At-Tirmidhi said that it is a hasan hadith. It is also related that ‘Umar set the miqat for the people of Iraq at Dhat ‘Irq. We find in Abu Dawud from Aishah that the Messenger of Allah set Dhat ‘Irq as the miqat for the people of Iraq. This is sound. Those who relate that ‘Umar set it was because it was conquered in his time and then neglected. It was, in fact, the Messenger of Allah who set it as he set al-Juhfah for the people of Syria although at that time all of Syria was a land of unbelief as was the case with Iraq and other lands at that time. Iraq and Syria were only conquered in the time of ‘Umar. That is undisputed. Abu ‘Umar said, ‘Every Iraqi or easterner adopted ihram from Dhat ‘Irq. All say that ihram is assumed from the miqat. They believe, however, that al-Aqiq is more proper than Dhat ‘Irq	किया कि नबी ने मशरिक़ वालों के लिए मीक़ात अल-अक़ीक़ मुक़र्रर फ़रमाया। इमाम तिरमिज़ी ने कहा कि यह हदीस हसन है। यह भी रिवायत है कि उमर बिन ख़त्ताब ने अहल-ए-इराक़ के लिए ज़ात इरक़ को मीक़ात मुक़र्रर किया। और आइशा सिद्दीका से इमाम अबू दाऊद ने रिवायत किया है कि रसूल अल्लाह ने अहल-ए-इराक़ के लिए ज़ात इरक़ को मीक़ात मुक़र्रर फ़रमाया, और यही सही है। जिन्होंने यह कहा कि इसे उमर (रज़ि.) ने मुक़र्रर किया, उसकी वजह यह है कि इराक़ उनके ज़माने में फ़तह हुआ और फिर यह बात लोगों से ओझल हो गई, वरना हक़ीक़त में इसे नबी ही ने मुक़र्रर फ़रमाया था, जैसे आपने शाम के लिए जुहफ़ा को मीक़ात मुक़र्रर फ़रमाया, हालाँकि उस वक़्त शाम कुफ़्र की सरज़मीन था, जैसा कि इराक़ और दूसरे इलाक़े भी उस वक़्त थे। इराक़ और शाम दोनों उमर (रज़ि.) के ज़माने में फ़तह हुए, और इस पर कोई इख़्तिलाफ़ नहीं। अबू उमर ने कहा: “हर इराक़ी या मशरिक़ी शख्स ज़ात इरक़ से एहराम बाँधता है। सब इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि एहराम मीक़ात ही से बाँधा
--	--

although Dhat ‘Irq is also their miqat.’	जाएगा, अलबत्ता वे समझते हैं कि अल-अक्रीक ज़ात इरक़ से ज़्यादा अफ़ज़ल है, अगरचे ज़ात इरक़ भी उनका मीक़ात है।”
Scholars agree that if someone adopts ihram before he reaches the miqat he is in ihram. Those who forbid that think that adopting ihram at the miqat is better out of their dislike of someone making difficult for himself something which Allah has made easier for him, as well as the fact that it might lead to an innovation in respect of ihram. If he does that, however, all of them confirm his ihram since he has added something and not decreased it.	उलमा इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि अगर कोई शख्स मीक़ात पर पहुँचने से पहले एहराम बाँध ले तो वह एहराम ही में शुमार होगा। जो लोग इसको मना करते हैं, वह यह समझते हैं कि मीक़ात पर एहराम बाँधना ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि वह इस बात को नापसंद करते हैं कि कोई शख्स अपने ऊपर ऐसी चीज़ को मुश्किल बनाए जिसे अल्लाह ने उसके लिए आसान रखा है, और इस लिए भी कि इससे एहराम के मामले में बिदअत पैदा होने का अंदेशा है। हालांकि अगर कोई ऐसा कर ले तो सब उलमा उसके एहराम को दुरुस्त करार देते हैं, क्योंकि उसने कोई कमी नहीं की बल्कि इज़ाफ़ा ही किया है।
This ayah is evidence for ‘umrah being obligatory because Allah commands it to be completed as He commands hajj to be completed. As-Subayyi ibn Mabad said, ‘I went to ‘Umar and said, “I was	यह आयत इस बात की दलील है कि उमरा फ़र्ज़ है, क्योंकि अल्लाह तआला ने उसे मुकम्मल करने का हुक्म दिया है जिस तरह हज को मुकम्मल करने का हुक्म दिया है। अस-सुबयई बिन मअबद ने कहा: “मैं उमर के पास गया और अर्ज़ किया:

a Christian and became Muslim. I find that hajj and ‘umrah are prescribed for me and so I adopted ihram for both of them.” ‘Umar said to him, ‘You have been guided to the Sunnah of the Prophet.’ Ibn al-Mundhir observed that he did not object to what he said and his assumption that they were obligatory for him. ‘Ali ibn Abi Talib, Ibn ‘Umar and Ibn Abbas all said that they were both obligatory. Ad-Daraqutni related from Ibn Jurayj from Nafi that Abdullah ibn ‘Umar used to say, ‘Allah has not created anyone who does not owe hajj and ‘umrah if he is able to find a way to do them. If anyone does more than that, it is good and voluntary.’ He said, ‘I did not hear him say anything about the people of Makkah.’ Ibn Jurayj said that ‘Ikrimah reported that Ibn ‘Abbas said, “‘Umrah is obligatory, as is hajj, for those who find a way to perform it.’	‘मैं ईसाई था फिर मुसलमान हो गया। मैं देखता हूँ कि हज और उमरा दोनों मुझ पर फ़र्ज़ किए गए हैं, इसलिए मैंने दोनों के लिए एहराम बाँध लिया।” तो उमर ने उससे कहा: “तुम्हें नबी ﷺ की सुन्नत की तरफ हिदायत दी गई है।” इब्न अल-मुंधिर ने कहा कि उन्होंने उसकी बात पर कोई एतराज़ नहीं किया और न ही उसके इस खयाल पर कि ये दोनों उस पर फ़र्ज़ हैं। अली बिन अबी तालिब, इब्न उमर और इब्न अब्बास सब का कहना था कि ये दोनों फ़र्ज़ हैं। दारकुतनी ने इब्न जुरैज के वासिते से नाफ़े से रिवायत किया कि अब्दुल्लाह बिन उमर कहा करते थे: “अल्लाह ने किसी ऐसे शख्स को पैदा नहीं किया जिस पर हज और उमरा लाज़िम न हों, बशर्ते कि वह उनकी अदायगी की इस्तिताअत रखता हो। और अगर कोई इससे ज़्यादा करे तो वह नेकी और नफ़ली है।” उन्होंने कहा: “मैंने उनसे अहल-ए-मक्का के बारे में कुछ नहीं सुना।” इब्न जुरैज ने कहा कि इकरिमा ने रिवायत किया कि इब्न अब्बास ने फरमाया: “उमरा भी फ़र्ज़ है, जैसे हज फ़र्ज़ है, उस शख्स पर जो उसे अदा करने की
--	---

	इस्तिताअत रखता हो।”
Among the Tabiun who believed that it was obligatory were ‘Ata’, Tawus, Mujahid, al-Hasan, Ibn Sirin, ash-Shabi, Said ibn Jubayr, Abu Burdah, Masruq, Abdullah ibn Shaddad, ash-Shafi, Ahmad, Ishaq, Abu ‘Ubayd, and Ibn al-Jahm among the Malikis. Ath-Thawri said, ‘We heard that it is mandatory.’ Zayd ibn Thabit was asked about doing ‘umrah before hajj and said, ‘Two prayers: you are not harmed by starting with either of them.’ Ad-Daraqutni mentioned it. It is related marfu’ from Muhammad ibn Sirin from Zayd ibn Thabit that the Messenger of Allah said, ‘Hajj and ‘umrah are two obligations. There is no harm in beginning with either of them.’	ताबिईन में से जिन हज़रात का यह क़ौल था कि उमरा फ़र्ज़ है, उनमें अता, ताऊस, मुजाहिद, हसन बसरी, इब्न सीरीन, शाबी, सईद बिन जुबैर, अबू बुरदा, मस्रूक, अब्दुल्लाह बिन शद्दाद, शाफ़िई, अहमद, इसहाक, अबू उबैद और मालिकिया में से इब्न अल-जहम शामिल हैं। सौरि ने कहा: “हमने सुना है कि यह वाजिब है।” ज़ैद बिन साबित से हज से पहले उमरा करने के बारे में पूछा गया तो उन्होंने कहा: “यह दो नमाज़ों की तरह हैं, तुम्हें इनमें से किसी एक से इब्तिदा करने में कोई हरज नहीं।” दारकुतनी ने इसे ज़िक्र किया है। और मुहम्मद बिन सीरीन के वासिते से ज़ैद बिन साबित से मरफूअन रिवायत है कि रसूल अल्लाह ने फ़रमाया: “हज और उमरा दो फ़र्ज़ इबादतें हैं, इनमें से किसी एक से इब्तिदा करने में कोई हरज नहीं है।”
Malik, however, said, Umrah is sunnah. But we do not know of anyone who made an allowance for abandoning it.’ That is also the position of an-Nakhai and the People of Opinion (ray)	मालिक ने, हालांकि, यह कहा कि उमरा सुन्नत है, लेकिन हम किसी ऐसे शख्स को नहीं जानते जिसने इसे छोड़ने की इजाज़त दी हो। इब्न अल-मुंधिर की रिवायत के मुताबिक यही

according to what Ibn al-Mundhir related. Some people of Qazwin and Baghdad report from Abu Hanifah that he considered it obligatory (wajib) like the hajj, and that it is a confirmed sunnah. Ibn Masud and Jabir ibn ‘Abdullah also said that. Ad-Daraqutni related from Muhammad ibn Zakariyya from Abu Kulayb Muḥammad ibn al-‘Ala’ from ‘Abd ar-Rahim ibn Sulayman from Hajjaj from Muhammad ibn al-Munkadir that Jabir ibn ‘Abdullāh said, ‘A man asked the Messenger of Allah about prayer, zakah and hajj and whether they were mandatory. He said that they were. Then he asked about whether ‘umrah was mandatory. He answered, “No, but it is better for you to perform ‘umrah.”’ Yahya ibn Ayyub related it mawquf from Sajjaj and Ibn Jurayj from Ibn al-Munkadir from Jabir. This is the argument of those who do not make it mandatory in the Sunnah. They said that there is no evidence in the ayah of its	मौकिफ़ नखई और अहल-ए-राय का भी है। क़ज़वीन और बग़दाद के कुछ लोगों ने अबू हनीफ़ा से यह नक़ल किया है कि वह इसे हज की तरह वाजिब क़रार देते थे, और यह भी कि यह सुन्नत-ए-मुअक्कदा है। इब्न मसऊद और जाबिर बिन अब्दुल्लाह से भी यही मन्कूल है। दारकुतनी ने मुहम्मद बिन ज़करिया के वासिते से अबू कुलैब मुहम्मद बिन अल-अला से, उन्होंने अब्दुर रहीम बिन सुलैमान से, उन्होंने हज्जाज से, उन्होंने मुहम्मद बिन अल-मुनक़दर से रिवायत किया कि जाबिर बिन अब्दुल्लाह ने कहा: “एक शख्स ने रसूलुल्लाह से नमाज़, ज़कात और हज के बारे में पूछा कि क्या यह फ़र्ज़ हैं? आप ने फ़रमाया कि हाँ। फिर उसने पूछा कि क्या उमरा फ़र्ज़ है? आप ने फ़रमाया: ‘नहीं, लेकिन तुम्हारे लिए उमरा करना बेहतर है।’” यहा बिन अय्यूब ने इसे सज्जाज और इब्न जुरैज के वासिते से इब्न अल-मुनक़दर से, जाबिर से मवकूफ़न रिवायत किया है। यह उन लोगों की दलील है जो सुन्नत की रोशनी में उमरा को फ़र्ज़ नहीं कहते। उनका कहना है कि इस आयत में उमरा के फ़र्ज़ होने की कोई वाज़ेह दलील नहीं, क्योंकि
--	--

mandatory nature because Allah connected it to completion, not to initiation, whereas with the prayer and zakah He does by saying: 'Establish the prayer and pay zakah' and with the hajj as well when He says: 'Hajj to the House is a duty owed to Allah by all mankind.' When He mentions 'umrah, He commands that it should be completed. If one were to make ten hajj's or ten 'umrah's, it is obligatory to complete all of them. The ayah is about obligation and completion, not obligation and initiation. Allah knows best.	अल्लाह तआला ने इसे "पूरा करने" के साथ मुतअल्लिक किया है, न कि "शुरू करने" के साथ। जबकि नमाज़ और ज़कात के बारे में फ़रमाया: "नमाज़ कायम करो और ज़कात अदा करो" और हज के बारे में फ़रमाया: "लोगों पर अल्लाह के लिए बैतुल्लाह का हज फ़र्ज़ है।" लेकिन जब उमरा का ज़िक्र किया तो उसके पूरा करने का हुक्म दिया। अगर कोई शख्स दस हज या दस उमरे भी करे तो उन सब को मुकम्मल करना वाजिब है। लिहाज़ा आयत का ताल्लुक वुजूब-ए-तक्मील से है, न कि वुजूब-ए-इब्तिदा से। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
Those who disagree about its mandatory nature say that the pillar of hajj is standing at 'Arafah and there is no equivalent standing in 'umrah. If it had been like the sunnah of the hajj, it would be necessary for it to have equivalent actions as is the case with the sunnah prayer which has the same actions as the obligatory	जो लोग उमरा के फ़र्ज़ होने से इख़्तिलाफ़ करते हैं, वह कहते हैं कि हज का रुक्न अरफ़ा में वुकूफ़ है, जबकि उमरा में उसके बराबर कोई वुकूफ़ नहीं है। अगर उमरा भी हज की सुन्नत की तरह होता, तो उसमें भी उसी तरह के आमाल का होना ज़रूरी होता, जैसे सुन्नत नमाज़ में वही आमाल होते हैं जो फ़र्ज़ नमाज़ में होते हैं।

prayer.	
Ash-Shabi and Abu Hawwah recite ‘al-umratu’, indicating that it is not mandatory while the main body of the community recite ‘al-umrata’, indicating that it is mandatory. The copy of Ibn Masud’s Qur’an has ‘Perform the hajj and ‘umrah to the House of Allah.’ and also ‘Establish the hajj and ‘umrah to the House of Allah.’ The point of mentioning Allah here is that the Arabs used to intend the hajj for meeting, public display, vying with one another, disagreement, settling needs and attending markets. None of that involves obeying Allah and there is no intention or act of nearness. Allah therefore commanded that people have the intention to perform the obligation and fulfil the need. After that there is scope for commerce.	शाबी और अबू हुव्वा “अल-उमरातु” पढ़ते हैं, जिससे इशारा मिलता है कि यह फ़र्ज़ नहीं है, जबकि जमहूर “अल-उमराता” पढ़ते हैं, जो इसके फ़र्ज़ होने की तरफ इशारा करता है। इब्न मसऊद के मुसहफ़ में ये अल्फ़ाज़ हैं: “अल्लाह के घर के लिए हज और उमरा अदा करो”, और यह भी है: “अल्लाह के घर के लिए हज और उमरा क़ायम करो।” यहाँ अल्लाह का ज़िक्र करने की हिकमत यह है कि अरब लोग हज को मुलाक़ात, इज़हार-ए-शान, एक दूसरे पर सबक़त ले जाने, बाहमी इख़िलाफ़ात, ज़रूरतें पूरी करने और बाज़ारों में शिरकत के लिए करते थे। इनमें से कोई चीज़ अल्लाह की इताअत या कुर्बत की नियत पर मबनी नहीं होती थी। इसलिए अल्लाह तआला ने हुक्म दिया कि लोग फ़र्ज़ की अदायगी और ज़रूरत की तकमील की नियत से हज करें। इसके बाद तिजारत की भी गुंजाइश है।
There is no disagreement among scholars about the fact that someone who attends the	उलमा के दरमियान इस बात पर कोई इख़िलाफ़ नहीं कि जो शख्स हज या उमरा के आमाल अदा करे,

hajj or 'umrah practices must make an intention to do so. Part of the completion of any act of worship is the presence of the intention, which is an obligation in itself. It is an obligation just as ihram is, since, when the Prophet mounted, he said, 'At Your service for both hajj and 'umrah.' Ar-Rabi mentioned in the book of al-Buwayti that ash-Shafi'i said, 'If a man says the talbiyah and does not intend hajj or 'umrah, he is not performing hajj or 'umrah. If he makes the intention and does not say the talbiyah until he has finished the practices, his hajj is complete.' The argument is based on the words of the Prophet, 'Actions are according to intentions.' If someone does the same as 'Ali did when he made his ihram the same as that of the Prophet, that intention satisfies the requirement because it was based on the prior intention of someone else, which is not the	उसके लिए नियत करना ज़रूरी है। किसी भी इबादत की तकमील का एक हिस्सा नियत की मौजूदगी है, और यह खुद एक मुस्तक़िल फ़र्ज़ है। यह उसी तरह फ़र्ज़ है जैसे एहराम, क्योंकि जब नबी ने सवारी पर सवार होकर तलबिया कहा तो फ़रमाया: "लَبَّيْكَ هَجَّجْنَا وَاعْمَرْنَا" (मैं हाज़िर हूँ हज और उमरा दोनों के लिए)। अर-रबीअ ने किताब अल-बुवैती में ज़िक्र किया कि इमाम शाफ़िई ने फ़रमाया: "अगर कोई शख्स तलबिया कहे मगर हज या उमरा की नियत न करे तो वह न हज अदा कर रहा है न उमरा। और अगर वह नियत कर ले मगर तलबिया न कहे यहाँ तक कि आमाल मुकम्मल कर ले तो उसका हज मुकम्मल है।" इसकी दलील नबी का यह फ़रमान है: "आमाल का दारोमदार नियतों पर है।" अगर कोई शख्स वैसा ही करे जैसा अली ने किया था, जब उन्होंने अपना एहराम नबी के एहराम के मुताबिक किया, तो यह नियत काफ़ी है, क्योंकि वह किसी दूसरे की साबिका नियत पर मबनी थी। यह सूरत नमाज़ में नहीं होती।
---	--

case in the prayer.	
Scholars disagree about adolescents and slaves who perform hajj and then become adults or are freed before they stand at ‘Arafah. Malik said, ‘There is no way for them to abandon ihram just as there is no way with anyone else, since Allah says: ‘Complete the hajj and ‘umrah for Allah.’ No one who abandons ihram completes his hajj or ‘umrah. Abu Hanifah said, ‘It is permitted for a child who reaches puberty before the standing at ‘Arafah to renew his ihram. If he continues in his original hajj, however, it does not satisfy the hajj of Islam.’ His argument is that since he was not subject to the obligation when he assumed ihram for the hajj, but then hajj became obligatory when he reached puberty, it is impossible for him to be distracted from a specific obligation by something supererogatory and neglect his obligation. This is like	उलमा के दरमियान इस बारे में इख़्तिलाफ़ है कि अगर कोई नाबालिग या गुलाम हज करे और फिर अरफ़ात में वुकूफ़ से पहले बालिग हो जाए या आज़ाद हो जाए तो उसका क्या हुक्म है। इमाम मालिक ने कहा: “उनके लिए एहराम छोड़ने की कोई सूरत नहीं, जैसे किसी और के लिए नहीं, क्योंकि अल्लाह तआला फ़रमाता है: ‘हज और उमरा को अल्लाह के लिए मुकम्मल करो।’ जो शख्स एहराम छोड़ दे वह अपना हज या उमरा मुकम्मल नहीं करता।” अबू हनीफ़ा ने कहा: “अगर कोई बच्चा अरफ़ात में वुकूफ़ से पहले बालिग हो जाए तो उसके लिए एहराम की तजदीद जायज़ है। हालांकि अगर वह अपने पहले वाले हज ही को जारी रखे तो यह हज्जतुल-इस्लाम के लिए काफ़ी नहीं होगा।” उनकी दलील यह है कि जब उसने एहराम बाँधा तो उस पर हज फ़र्ज़ नहीं था, लेकिन बुलूग़ात के बाद हज उस पर फ़र्ज़ हो गया, लिहाज़ा यह मुमकिन नहीं कि वह एक मख़सूस फ़र्ज़ से हटकर किसी नफ़ल अमल में मशगूल रहे और अपने फ़र्ज़ को छोड़ दे। यह उस

someone who begins a supererogatory prayer and then the iqamah for a prescribed prayer is given and he fears that he will miss it, so he stops the supererogatory and enters into the prescribed.	शरू की तरह है जो नफ़ल नमाज़ शुरू करे, फिर फ़र्ज़ नमाज़ की इक़ामत हो जाए और उसे अंदेशा हो कि वह फ़र्ज़ नमाज़ से महरूम हो जाएगा, तो वह नफ़ल छोड़ कर फ़र्ज़ नमाज़ में शामिल हो जाता है।
Ash-Shafi i says that when a child adopts ihram and then reaches puberty before standing at 'Arafah, he stands there in ihram and satisfies the hajj of Islam. The same is true of a slave. He said that if a slave is freed at Muzdalifah, or a child reaches puberty there, if they return to 'Arafah after their emancipation or puberty and manage to stand there before dawn, they have satisfied the hajj of Islam and they do not owe a sacrifice. I prefer for them to exercise caution and sacrifice. I do not believe that is definitive.	इमाम शाफ़िई कहते हैं कि जब कोई बच्चा एहराम बाँधे और फिर अरफ़ात में वुकूफ़ से पहले बालिग हो जाए तो वह उसी एहराम में अरफ़ात में वुकूफ़ करे और उसका हज्जतुल-इस्लाम अदा हो जाता है। गुलाम के बारे में भी यही हुक्म है। उन्होंने कहा कि अगर कोई गुलाम मुज़दलिफ़ा में आज़ाद हो जाए, या बच्चा वहीं बालिग हो जाए, फिर वह आज़ादी या बुलूग़त के बाद अरफ़ात वापस जाए और तुलूअ-ए-फ़ज्र से पहले वहाँ वुकूफ़ कर ले तो उनका हज्जतुल-इस्लाम अदा हो जाएगा और उन पर कुर्बानी लाज़िम नहीं होगी। अलबत्ता मैं एहतियात के तौर पर उनके लिए कुर्बानी को पसंद करता हूँ, लेकिन मैं इसे क़तई लाज़िम नहीं समझता।
He cited as proof for not renewing ihram the hadith of Ali when he arrived from Yemen having adopted ihram	उन्होंने एहराम की तजदीद न करने पर बतौर दलील अली की उस हदीस को पेश किया, जब वह यमन से हज

for the hajj. The Messenger of Allah asked him, ‘What did you adopt ihram for?’ He answered, ‘I said, “At Your service, O Allah, for an ihram which is the same as the ihram of Your Prophet. The Messenger of Allah said, ‘I adopted ihram for the hajj and have driven sacrificial camels.’ Ash-Shafi i said, ‘The Messenger of Allah did not object to what he said nor did he command him to renew his intention for ifrad, tamattu ‘or qiran.’	के लिए एहराम बाँध कर आए थे। रसूलुल्लाह ने उनसे पूछा: “तुमने किस चीज़ के लिए एहराम बाँधा है?” उन्होंने जवाब दिया: “मैंने कहा: ‘ऐ अल्लाह! मैं हाज़िर हूँ ऐसे एहराम के साथ जो तेरे नबी के एहराम के मुताबिक हो।” रसूलुल्लाह ने फ़रमाया: “मैंने हज के लिए एहराम बाँधा है और कुर्बानी के जानवर साथ लाया हूँ।” इमाम शाफ़िई ने कहा: “रसूलुल्लाह ने उनकी बात पर कोई एतराज़ नहीं किया और न ही उन्हें यह हुक्म दिया कि वह इफ़राद, तमत्तु’ या क़िरान में से किसी के लिए अपनी नियत की तजदीद करें।”
Malik said about a Christian who becomes Muslim on the night of ‘Arafah and adopts ihram for the hajj: ‘He has satisfied the hajj of Islam.’ The same is true of a slave who is freed or a child who reaches puberty, when they are not already in ihram and do not owe a sacrifice. Sacrifice becomes obligatory for someone who wants to go on hajj but does not adopt ihram from the miqat. Abu Hanifah	मालिक ने उस ईसाई के बारे में कहा जो अरफ़ा की रात मुसलमान हो जाए और हज के लिए एहराम बाँध ले: “उसका हज्जतुल-इस्लाम अदा हो गया।” यही हुक्म उस गुलाम का भी है जो आज़ाद हो जाए या उस बच्चे का जो बालिग हो जाए, बशर्ते कि वह पहले से एहराम में न हों, और उन पर कोई कुर्बानी लाज़िम नहीं होती। कुर्बानी उस शख्स पर लाज़िम होती है जो हज का इरादा करे मगर मीक़ात से एहराम न बाँधे। अबू हनीफ़ा के नज़दीक गुलाम पर

said that slaves owe a sacrifice. In their view, they are like a free man in respect of going past the miqat. That is not the case with a child or a Christian. They were not obliged to assume ihram to enter Makkah because they do not owe the obligation. When an unbeliever becomes Muslim, or a child reaches puberty, they have the same ruling as the people of Makkah and neither owes anything for missing the miqat.	कुर्बानी लाज़िम होती है, क्योंकि उनके नज़दीक वह मीकात से गुज़रने के मामले में आज़ाद आदमी की तरह है। लेकिन यह हुक्म बच्चे या ईसाई के लिए नहीं है, क्योंकि उन पर मक्का में दाखिल होने के लिए एहराम बाँधना लाज़िम नहीं था, इसलिए कि उन पर यह फ़र्ज़ ही नहीं था। जब कोई काफ़िर मुसलमान हो जाए या बच्चा बालिग हो जाए तो उनका हुक्म अहल-ए-मक्का जैसा हो जाता है, और मीकात को छोड़ देने की वजह से उन पर कोई चीज़ लाज़िम नहीं होती।
If you are forcibly prevented,	अगर तुम्हें ज़बरदस्ती रोक दिया जाए,
Ibn al-Arabi says that this ayah is problematical but, in fact, there is nothing problematical about it as we will explain. Being prevented refers to any obstacle which stops you doing what you intended with respect to going on hajj, whatever that obstacle might be, whether it is an enemy, the injustice of a ruler, illness, highway robbers or anything else that might stop a person from fulfilling his	इब्र अल-अरबी कहते हैं कि यह आयत बजाहिर मुश्किल मालूम होती है, लेकिन हक़ीक़त में इसमें कोई इशकाल नहीं जैसा कि हम वज़ाहत करेंगे। "रोक दिया जाना" हर उस रुकावट को शामिल है जो इंसान को हज के लिए जाने और अपने इरादे को पूरा करने से रोक दे, चाहे वह दुश्मन हो, किसी हाकिम का जुल्म हो, बीमारी हो, डाकू हों या कोई और चीज़ जो इंसान को अपने मक़सद की तकमील से बाज़ रखे। उलमा का इस

intention. Scholars disagree about the actual obstacle referred to in the ayah and have two views. One is stated by Alqamah, ‘Urwah ibn az-Zubayr and others which is that it refers to illness and not to an enemy. But it is also said that it is only an enemy which is meant, and that is the view of Ibn Abbas, Ibn ‘Umar, Anas and ash-Shafi‘i. Ibn al-Arabi said that is the opinion our scholars prefer, while linguists prefer illness if the verb uhhira is used and the enemy if the verb husira is used.	बात में इख़िलाफ़ है कि आयत में असल रुकावट से क्या मुराद है, और इस बारे में दो राय हैं। एक राय अलक़मा, उरवा बिन जुबैर और दूसरे हज़रात की है कि इससे मुराद बीमारी है न कि दुश्मन। जबकि एक क़ौल यह भी है कि इससे सिर्फ़ दुश्मन मुराद है, और यह इब्न अब्बास, इब्न उमर, अनस और इमाम शाफ़िई का मौक़िफ़ है। इब्न अल-अरबी कहते हैं कि हमारे उलमा इसी राय को तरज़ीह देते हैं, जबकि लुग़ात के माहिरीन के नज़दीक अगर लफ़ज़ “उह्सिरा” इस्तेमाल हो तो उससे मुराद बीमारी होती है, और अगर “हुसिरा” हो तो उससे मुराद दुश्मन होता है।
What Ibn al-Arabi related as the choice of our scholars is related by Ashab alone. He is opposed by the rest of the people of Malik in this case who say that uhsira is used for illness and husira for the enemy. Al-Baji stated that in al-Muntaqa. Abu Ishaq az-Zajjaj related that that is the view of all linguists. Abu ‘Ubaydah and al-Kisa i said the	इब्न अल-अरबी कहते हैं कि यह आयत बजाहिर मुश्किल मालूम होती है, लेकिन हक़ीक़त में इसमें कोई इश्काल नहीं जैसा कि हम वज़ाहत करेंगे। “रोक दिया जाना” हर उस रुकावट को शामिल है जो इंसान को हज़ के लिए जाने और अपने इरादे को पूरा करने से रोक दे, चाहे वह दुश्मन हो, किसी हाकिम का जुल्म हो, बीमारी हो, डाकू हों या कोई और चीज़ जो इंसान को अपने मक़सद की

same, but we find the reverse in Ibn Faris. One group, including Abu ‘Umar, said that uhsira is used for both. This is the position of Malik in the Muwatta’ where he uses uhsira for both.	तकमील से बाज़ रखे। उलमा का इस बात में इख़्तिलाफ़ है कि आयत में असल रुकावट से क्या मुराद है, और इस बारे में दो राय हैं। एक राय अलक़मा, उरवा बिन जुबैर और दूसरे हज़रात की है कि इससे मुराद बीमारी है न कि दुश्मन। जबकि एक क़ौल यह भी है कि इससे सिर्फ़ दुश्मन मुराद है, और यह इब्र अब्बास, इब्र उमर, अनस और इमाम शाफ़िई का मौक़िफ़ है। इब्र अल-अरबी कहते हैं कि हमारे उलमा इसी राय को तरज़ीह देते हैं, जबकि लुग़ात के माहिरीन के नज़दीक अगर लफ़्ज़ “उहसिरा” इस्तेमाल हो तो उससे मुराद बीमारी होती है, और अगर “हुसिरा” हो तो उससे मुराद दुश्मन होता है।
Al-Farra’ said that they both have the same meaning: for illness and the enemy. Abu Nasr al-Qushayri said, ‘The Shafi is claim that uhsira is used for the enemy and husira for illness. What is sound is that they are both used for both.’ Al-Khalil ibn Aḥmad and others state their difference from the Shafi is. Al-Khalil	अल-फर्रा ने कहा कि दोनों का एक ही मअनी है: बीमारी और दुश्मन दोनों के लिए। अबू नसर अल-कुशैरी ने कहा: “शाफ़िईया का दावा है कि ‘उहसिर’ दुश्मन के लिए और ‘हुसिर’ बीमारी के लिए इस्तेमाल होता है, लेकिन सही बात यह है कि दोनों अल्फ़ाज़ दोनों मआनी में इस्तेमाल होते हैं।” अल-खलील बिन अहमद और दूसरे अहल-ए-इल्म ने इस बारे

said, Husira is used when a man is detained. Uhsira is used for someone on hajj who is prevented from completing the practices due to illness or the like.' He used husira for the enemy and uhsira for illness. This agrees with what Ibn Abbas said, in other words that 'forcibly prevented' is by the enemy. Ibn as-Sakkit said, 'Illness prevents (uhsira) someone from travelling or from something he needs to do. The enemy prevents (husira) a person when they restrict and encircle him.' Most linguists say that Form I (husira) is used for the enemy and Form IV (uhsira) for illness.	में शाफ़िईया से इख़्तिलाफ़ किया है। अल-खलील ने कहा: "‘हुसिर’ उस वक्त इस्तेमाल होता है जब किसी आदमी को रोक लिया जाए, जबकि ‘उहसिर’ उस शख्स के लिए इस्तेमाल होता है जो हज में हो और बीमारी या उस जैसी किसी वजह से मनासिक मुकम्मल करने से रोक दिया जाए।" इस तरह उन्होंने ‘हुसिर’ को दुश्मन के लिए और ‘उहसिर’ को बीमारी के लिए मखसूस किया। यह क़ौल इब्न अब्बास के उस मौक़िफ़ के मुताबिक है कि "रोक दिया जाना" दुश्मन की वजह से होता है। इब्न अस-सक्कीत ने कहा: "बीमारी इंसान को सफ़र करने या किसी काम से रोक देती है (उहसिर), जबकि दुश्मन इंसान को घेर कर और महदूद कर के रोक देता है (हुसिर)।" अक्सर अहल-ए-लुगत का कहना है कि बाब-ए-अव्वल (हुसिर) दुश्मन के लिए और बाब-ए-चहारुम (उहसिर) बीमारी के लिए इस्तेमाल होता है।
Since the root meaning is to be confined, the Hanafis say that the person who is prevented is someone who is prevented from reaching Makkah after he has adopted ihram, whether	चूँकि अस्ल मअनी "महसूर होना" है, इसलिए अहनाफ़ कहते हैं कि "महसूर" वह शख्स है जो एहराम बाँधने के बाद मक्का पहुँचने से रोक दिया जाए, चाहे यह रुकावट बीमारी

that is due to illness, the enemy, or something else. They cite the general meaning of the word and say, 'The fact that "safety" is mentioned later in the ayah indicates that it is not about illness. The Prophet said, "A common cold is security from leprosy." He also said, "If someone praises Allah before a sneezer does, he is safe from toothache, earache and colic." Ibn Mājah transmitted that in the Sunan.' They said, 'We consider that being detained by the enemy is prevention as it is analogous with illness and has the same ruling. It is not based on the literal meaning of the ayah.' Ibn 'Umar, Ibn az-Zubayr, Ibn Abbas, ash-Shafi'i and the People of Madinah say that what is meant by the ayah is being prevented by the enemy because the ayah was revealed in 6 AH during the 'umrah of Hudaibiyah when the idolaters prevented the Messenger of Allah from reaching Makkah. Ibn 'Umar said, 'We set out with the

की वजह से हो, दुश्मन की वजह से हो या किसी और सबब से। वह लफ़्ज़ के उम्मी मअनी से इस्तिदलाल करते हैं और कहते हैं: "आयत में बाद में 'अमन' का ज़िक्र इस बात की दलील है कि यहाँ मुराद बीमारी नहीं है।" नबी ने फ़रमाया: "जुकाम कोढ़ से हिफ़ाज़त है।" और यह भी फ़रमाया: "अगर कोई छींकने वाले के 'अल्हम्दुलिल्लाह' कहने से पहले अल्लाह की हम्द बयान करे तो वह दाँत के दर्द, कान के दर्द और क़ौलंज से महफूज़ रहता है।" इब्न माजह ने इसे अपनी सुन्नन में रिवायत किया है।

वह कहते हैं: "हम दुश्मन की तरफ से रोक दिए जाने को भी 'अहसार' शुमार करते हैं, क्योंकि यह बीमारी के मुशाबेह है और उसका हुक्म भी वही है। यह सिर्फ़ आयत के ज़ाहिरी लफ़्ज़ पर महफूज़ नहीं है।" इब्न उमर, इब्न जुबैर, इब्न अब्बास, इमाम शाफ़ि'ई और अहल-ए-मदीना का कहना है कि आयत में मुराद दुश्मन की तरफ से रोका जाना है, क्योंकि यह आयत 6 हिजरी में उमरा-ए-हुदैबिया के मौके पर नाज़िल हुई जब मुशरिकीन ने रसूलुल्लाह को मक्का पहुँचने से रोक दिया था। इब्न उमर ने

Messenger of Allah and the unbelievers of Quraysh blocked the way to the House. The Prophet sacrificed his animals and shaved his head. This is indicated by His words, “when you are safe,” not “when you are free.” Allah knows best.	कहा: “हम रसूलुल्लाह के साथ निकले और कुरैश के काफ़िरों ने हमें बैतुल्लाह तक पहुँचने से रोक दिया। चुनाँचे नबी ने अपने जानवर कुर्बान किए और सर मुंडवाया।” इसकी ताईद अल्लाह तआला के इस फ़रमान से भी होती है: “फिर जब तुम अमन में हो जाओ”, न कि “जब तुम आज़ाद हो जाओ।” और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
Most people believe that when someone is prevented by the enemy from continuing, he should come out of ihram where he is, sacrifice his animals, if he has any, and shave his head. Qatadah and Ibrahim said, ‘If he is able, he sends his animals on and when they arrive, he comes out of ihram.’ Abu Hanifah said, ‘The sacrifices for being prevented from completion do not have to take place on the Day of Sacrifice. It is permitted to sacrifice before the Day of Sacrifice if they have arrived.’ His two companions differed from him and said that it is necessary to wait for the Day of	अक्सर लोगों का ख़याल है कि जब किसी शख्स को दुश्मन की वजह से आगे बढ़ने से रोक दिया जाए तो वह जहाँ है वहीं एहराम से निकल जाए, अगर उसके पास कुर्बानी के जानवर हों तो उन्हें ज़बह करे और अपना सर मुंडवा ले। क़तादा और इब्राहीम ने कहा: “अगर वह इस्तिताअत रखता हो तो अपने जानवर आगे भेज दे, और जब वे अपनी जगह पहुँच जाएँ तो वह एहराम से निकल आए।” अबू हनीफ़ा ने कहा: “इहसार (रोक दिए जाने) की वजह से दी जाने वाली कुर्बानी के लिए यौम-ए-नहर का इंतज़ार ज़रूरी नहीं। अगर जानवर पहले पहुँच जाएँ तो यौम-ए-नहर से पहले भी ज़बह करना जायज़ है।” उनके दोनों शागिर्दों ने इससे

Sacrifice and it does not satisfy the requirement if someone slaughters before that. This will be further discussed.	इस्तिलाफ़ किया और कहा कि यौम-ए-नहर का इंतज़ार करना ज़रूरी है, और उससे पहले ज़बह करना काफ़ी नहीं होगा। इस पर मज़ीद तफ़सील आगे बयान की जाएगी।
Most scholars say that if someone is stopped by the enemy, be it an unbeliever, Muslim, or ruler who confines him, he owes a sacrifice. That is the position of ash-Shafi i and Ashhab also said that. Ibn al-Qasim said, ‘Someone who is barred from the House in hajj or ‘umrah does not have to sacrifice unless he has driven animals with him. That is the view of Malik.’ Part of their argument is that at Hodaybiyah the Prophet slaughtered the animals he had marked and garlanded when he went into ihram for ‘umrah. When those animals did not reach their place due to the obstruction, the Messenger of Allah commanded that they be slaughtered because they were sacrificial animals obliged as such by garlanding and being	अक्सर उलमा का कहना है कि अगर किसी शख्स को दुश्मन रोक दे—चाहे वह काफ़िर हो, मुसलमान हो या कोई हाकिम जो उसे कैद कर दे—तो उस पर कुर्बानी लाज़िम होती है। यही इमाम शाफ़िई का मौक़िफ़ है और अशहब ने भी यही कहा है। इब्न अल-क़ासिम ने कहा: “जो शख्स हज या उमरा में बैतुल्लाह तक पहुँचने से रोक दिया जाए, उस पर कुर्बानी लाज़िम नहीं, इल्हा यह कि वह अपने साथ कुर्बानी के जानवर ले कर आया हो। यही इमाम मालिक का क़ौल है।” उनकी दलील का एक हिस्सा यह है कि हुदैबिया के मौके पर नबी ने वे जानवर ज़बह किए जिन्हें आपने निशान लगा कर और हार पहनाकर उमरा के लिए एहराम बाँधते वक्त साथ लिया था। जब वे जानवर रुकावट की वजह से अपनी मुक़र्रर जगह तक न पहुँच सके तो रसूलुल्लाह ने उन्हें ज़बह करने का हुक्म दिया, क्योंकि वे जानवर पहले

marked. They were brought out for Allah and it is not permitted to return them. The Messenger of Allah did not slaughter them on account of being barred. That is why someone who is barred from the House is not obliged to sacrifice. The majority use as evidence the fact that the Messenger of Allah was not out of ihram at Hudaibiyah and did not shave his head until he had sacrificed. That indicates that one of the preconditions for someone barred from hajj or 'umrah coming out of ihram is to sacrifice any animals he has with him. If he is poor, then it is when he finds the means to be able to do so. He only leaves ihram by that. That is demanded by Allah's words here. It is said that he comes out of ihram and sacrifices if he is able to do so. Both views are related from ash-Shafi'i, and there are also two views about someone who does not find a sacrificial animal to purchase.	ही कुर्बानी के लिए मखसूस किए जा चुके थे। उन्हें अल्लाह के लिए निकाला गया था, इसलिए उन्हें वापस ले जाना जायज़ न था। रसूलुल्लाह ने उन्हें महज़ रोके जाने की वजह से ज़बह नहीं किया। इसी बुनियाद पर जो शख्स बैतुल्लाह से रोक दिया जाए, उस पर कुर्बानी लाज़िम नहीं। जमहूर इस बात से इस्तिदलाल करते हैं कि हुदैबिया के मौके पर रसूलुल्लाह एहराम से उस वक्त तक नहीं निकले और न ही सर मुंडवाया जब तक आपने कुर्बानी नहीं कर ली। इससे मालूम होता है कि जो शख्स हज या उमरा से रोक दिया जाए, उसके लिए एहराम से निकलने की शर्तों में से एक यह है कि अगर उसके पास कुर्बानी के जानवर हों तो उन्हें ज़बह करे। अगर वह मुहताज हो तो जब उसे इस्तिताअत हासिल हो तब करे, और इसी के ज़रिये वह एहराम से निकलेगा। यही बात यहाँ अल्लाह तआला के फ़रमान से भी ज़ाहिर होती है। यह भी कहा गया है कि वह एहराम से निकल आए और अगर इस्तिताअत हो तो कुर्बानी करे। ये दोनों अक़वाल इमाम शाफ़िई से मनकूल हैं, और उस शख्स के बारे में भी दो राय हैं जो कुर्बानी का जानवर
--	--

	खरीदने की इस्तिताअत न रखता हो।
‘Ata’ and others say that someone prevented from continuing by illness is just like someone prevented by the enemy. Malik and Shifi i and their people say that someone prevented by illness from continuing does not come out of ihram until he has done tawaf of the House, even if it takes years for him to recover. That is the same for someone who makes a mistake in calculating the month or from whom the crescent moon is hidden. Malik said, ‘The people of Makkah are like other people in that respect.’ He said, ‘If someone ill requires treatment, he is treated and pays fidyah and remains in his ihram. He is not released from his ihram until he is free of illness and, when he is free of illness, he must continue to the House and do tawaf of it seven times, run between Safa and Marwah and he then comes out of his ihram for hajj or ‘umrah.	अता और दूसरे अहल-ए-इल्म का कहना है कि जो शख्स बीमारी की वजह से आगे बढ़ने से रुक जाए, वह उसी तरह है जैसे दुश्मन की वजह से रोका गया हो। लेकिन इमाम मालिक, इमाम शाफ़िई और उनके असहाब का मौक़िफ़ यह है कि जो शख्स बीमारी की वजह से आगे बढ़ने से रुक जाए, वह उस वक्त तक एहराम से नहीं निकलता जब तक बैतुल्लाह का तवाफ़ न कर ले, चाहे उसकी सेहतयाबी में सालों लग जाएँ। यही हुक्म उस शख्स का भी है जो महीने के हिसाब में ग़लती कर बैठे या जिससे चाँद नज़र न आए। इमाम मालिक ने कहा: “इस मामले में अहल-ए-मक्का भी दूसरे लोगों की तरह हैं।” उन्होंने मज़ीद कहा: “अगर कोई बीमार शख्स इलाज का मोहताज हो तो उसका इलाज किया जाएगा, वह फिद्या अदा करेगा और अपने एहराम में ही रहेगा। वह उस वक्त तक एहराम से आज़ाद नहीं होगा जब तक उसकी बीमारी ख़त्म न हो जाए। जब वह सेहतयाब हो जाए तो उस पर लाज़िम है कि बैतुल्लाह जाए, उसका सात चक्करों का तवाफ़

This is also the view of ash-Shafi i. Regarding that, he believed what was related from ‘Umar, Ibn ‘Abbas, ‘A’ishah, Ibn ‘Umar and Ibn az-Zubayr. In the case of someone hindered by illness or miscalculation, they said that he does not come out of ihram until he has done tawaf of the House. The same is true of someone who breaks a bone or has an abdominal pain.	करे, सफ़ा और मरवा के दरमियान सई करे, फिर वह अपने हज या उमरा के एहराम से निकल आए।” यही इमाम शाफ़िई का भी मौक़िफ़ है, और इस बारे में उन्होंने हज़रत उमर, इब्न अब्बास, आयशा, इब्न उमर और इब्न जुबैर से मनकूल आसार को इख़्तियार किया है। बीमारी या ग़लत हिसाब की वजह से रुक जाने वाले के बारे में इन हज़रात का भी यही कहना है कि वह उस वक्त तक एहराम से नहीं निकलेगा जब तक बैतुल्लाह का तवाफ़ न कर ले। इसी तरह उस शख्स का हुक्म भी है जिसकी हड्डी टूट जाए या उसे पेट का दर्द लाहिक हो जाए।
The ruling for someone in this situation, according to Malik and his people is that, if he fears that he will miss standing at Arafah due to his illness, he has a choice. If he wishes, when he recovers he can continue on to the House, do tawaf and come out of ihram for ‘umrah, or he can instead remain in his ihram until the next year. If he remains in his ihram and does not do anything	इमाम मालिक और उनके असहाब के नज़दीक ऐसे शख्स का हुक्म यह है कि अगर उसे अपनी बीमारी की वजह से अरफ़ात में वुकूफ़ छूट जाने का अंदेशा हो तो उसे इख़्तियार हासिल है। अगर वह चाहे तो सेहतयाब होने के बाद बैतुल्लाह जाकर तवाफ़ करे और उमरा की नियत से एहराम से निकल आए, या फिर वह अपने एहराम में अगले साल तक बाकी रहे। अगर वह एहराम में बाकी रहे और कोई ऐसा काम न करे

that someone performing hajj is forbidden to do, then he owes no sacrifice. A factor in the argument regarding that is the consensus of the Companions that if someone miscalculates the month, his ruling is that he can only come out of ihram by doing tawaf of the House.	जो हज करने वाले के लिए ममनूअ है तो उस पर कोई कुर्बानी लाज़िम नहीं होगी। इस मसले में दलील यह भी है कि सहाबा का इस बात पर इज्मा है कि अगर कोई शख्स महीने के हिसाब में ग़लती कर बैठे तो वह सिर्फ़ बैतुल्लाह का तवाफ़ करके ही एहराम से निकल सकता है।
He said about a Makkan who remains confined until people have finished the hajj, that he should go outside the Haram, say the talbiyah, then do what someone performing ‘umrah does, and then he can come out of ihram. Then the following year he should perform hajj and sacrifice. Ibn Shihab az-Zuhri said that a Makkan who is barred must stand at ‘Arafah, even carried on a bier. This position was preferred by Abu Bakr Muḥammad ibn Aḥmad ibn Abdullāh ibn Bukayr al-Maliki who said: Malik’s position about a Makkan who is barred is that what applies to others also applies to him: he should repeat the hajj and	उन्होंने उस मक्की शख्स के बारे में कहा जो महसूर हो जाए यहाँ तक कि लोग हज से फ़ारिग हो जाएँ, कि वह हरम से बाहर निकले, तलबिया कहे, फिर वह आमाल करे जो उमरा करने वाला करता है, और फिर वह एहराम से निकल सकता है। इसके बाद अगले साल उसे हज करना और कुर्बानी देना होगी। इब्न शिहाब जुहरी ने कहा कि जो मक्की महसूर हो जाए उसे अरफ़ात में वुकूफ़ करना चाहिए, चाहे उसे चारपाई पर उठाकर ही क्यों न ले जाया जाए। इस मौक़िफ़ को अबू बक्र मुहम्मद बिन अहमद बिन अब्दुल्लाह बिन बुकीर अल-मालिकी ने तरजीह दी और कहा: इमाम मालिक का मक्की महसूर के बारे में मौक़िफ़ यह है कि जो हुक्म दूसरों पर लागू होता है वही उस पर भी लागू होगा: उसे हज दोबारा अदा

sacrifice. This differs from the literal wording of the Book where Allah says: "That is for anyone whose family does not live near the Masjid al-Haram." He added, 'I believe that one takes the position of az-Zuhri: it is permitted by Allah Almighty for those whose family does not live near the Masjid al-Haram to remain for treatment because of the distance, even if they miss the hajj. As for those whose distance from the Masjid al-Haram is not such that one could shorten the prayer when travelling between them, he should attend the practices, even lying on a bier, because he is close to the House.' Abu Hanifah and his people said that if someone is prevented from reaching the House by enemies, illness, lack of money, loss of mount, or being stung by vermin he should remain where he is in ihram and send ahead his sacrificial animals or their price. When the sacrifice is made, then he	करना होगा और कुर्बानी भी देनी होगी। यह कुरआन के ज़ाहिरी अल्फ़ाज़ से मुख्तलिफ़ है, जहाँ अल्लाह तआला फ़रमाता है: "यह उसके लिए है जिसके अहल-ओ-इयाल मस्जिद हराम के करीब न रहते हों।" उन्होंने मज़ीद कहा: "मेरी राय यह है कि जुहरी के क़ौल को इख़्तियार किया जाए, क्योंकि अल्लाह तआला ने उन लोगों को, जिनके अहल-ओ-इयाल मस्जिद हराम के करीब नहीं रहते, फ़ासले की वजह से इलाज के लिए ठहरने की इजाज़त दी है, अगरचे वह हज से महरूम हो जाएँ। लेकिन जो लोग मस्जिद हराम से इतने करीब हों कि उनके दरमियान सफ़र में नमाज़ क़सर नहीं होती, उन्हें मनासिक में शिरकत करनी चाहिए, चाहे उन्हें चारपाई पर उठाकर ही क्यों न लाया जाए, क्योंकि वह बैतुल्लाह के करीब हैं।" अबू हनीफ़ा और उनके असहाब का कहना है कि अगर किसी शख्स को दुश्मन, बीमारी, माल की कमी, सवारी के ज़ाए होने या किसी ज़हरीले जानवर के काटने की वजह से बैतुल्लाह पहुँचने से रोक दिया जाए तो वह जहाँ है वहीं एहराम में रहे और अपने कुर्बानी के जानवर या
--	--

comes out of ihram. That is what is stated by ‘Urwah, Qatadah, al-Hasan, ‘Ata’, an-Nakhai, Mujuhid and the people of Iraq.	उनकी क़ीमत आगे भेज दे। जब कुर्बानी हो जाए तो वह एहराम से निकल आए। यही क़ौल उरवा, क़तादा, हसन, अता, नखई, मुजाहिद और अहल-ए-इराक़ का है।
Malik and his people say that someone in ihram does not benefit from having made a stipulation about his hajj if he fears being hindered by illness or the enemy. That is the view of ath-Thawri and Abu Hanifah and his people. Such a stipulation is that he says when he goes into ihram: ‘At Your service, O Allah, at Your service. I will come out of ihram if I am prevented in the land.’ Ahmad ibn Hanbal, Ishaq ibn Rahawayh and Abu Thawr said that there is nothing wrong in making a stipulation if the situation exists. That is stated by more than one of the Companions and the Tabiun. Their argument is the hadith of Dubaah bint az-Zubayr ibn ‘Abd al-Muttalib who went to the Messenger of Allah and said, ‘Messenger of Allah, I	इमाम मालिक और उनके असहाब का कहना है कि जो शख्स एहराम में हो, अगर उसे बीमारी या दुश्मन की वजह से रुक जाने का अंदेशा हो तो हज के वक्त शर्त लगाने से उसे कोई फ़ायदा नहीं होता। यही मौक़िफ़ सौरि और अबू हनीफ़ा और उनके असहाब का भी है। यह शर्त इस तरह होती है कि वह एहराम बाँधते वक्त कहे: “लब्बैक अल्लाहुम्मा लब्बैक, अगर मुझे इस ज़मीन में रोक दिया गया तो मैं एहराम से निकल आऊँगा।” इमाम अहमद बिन हनबल, इसहाक बिन राहवयह और अबू सौर का कहना है कि अगर ऐसी सूरत पेश आए तो शर्त लगाने में कोई हरज नहीं। यह बात कई सहाबा और ताबेईन से भी मन्कूल है। उनकी दलील दुबाअह बिनत जुबैर बिन अब्दुल मुत्तलिब की हदीस है, जो रसूलुल्लाह के पास आई और अर्ज़ किया: “या रसूलुल्लाह! मैं हज करना चाहती हूँ, क्या मैं शर्त लगा सकती

want to perform hajj. Can I make stipulations?’ Yes,’ he answered. She asked, ‘So what should I say?’ He said, ‘Say: “At Your service, O Allah, at Your service. I will come out of ihram if I am prevented in the land.”’ Abu Dawud, ad-Daraqutni and others transmitted it.’ Ash-Shafi i said, ‘If the hadith of Dubaah were confirmed, I would not go against it. You come out of ihram wherever Allah detains you.’	हूँ?” आप ने फ़रमाया: “हाँ।” उन्होंने पूछा: “मैं क्या कहूँ?” आप ने फ़रमाया: “कहो: ‘लब्बैक अल्लाहुम्मा लब्बैक, अगर मुझे इस ज़मीन में रोक दिया गया तो मैं एहराम से निकल आऊँगी।’” इस हदीस को अबू दाऊद, दारकुतनी और दूसरे मुहद्दीसीन ने रिवायत किया है। इमाम शाफ़िई ने कहा: “अगर दुबाअह की हदीस साबित हो जाए तो मैं उसकी मुखालफ़त नहीं करूँगा, और जहाँ अल्लाह तुम्हें रोक दे वहीं तुम एहराम से निकल आओ।”
More than one person said that it is sound, including Abu Hatim al-Busti and Ibn al-Mundhir. Ibn al-Mundhir said, ‘It is confirmed that the Messenger of Allah said to Dubaah bint az-Zubayr, “Go on hajj and make a stipulation.”’ Ash-Shafi i took that position when he was in Iraq but not when he was in Egypt. Ibn al-Mundhir said, ‘I take the first view.’ Abd ar-Razzaq mentioned it from Ibn Jurayj from Abu’z-Zubayr that Tawus	एक से ज़्यादा अहल-ए-इल्म ने कहा है कि यह हदीस सहीह है, जिनमें अबू हातिम अल-बुस्ती और इब्न अल-मुंधिर शामिल हैं। इब्न अल-मुंधिर ने कहा: “यह साबित है कि रसूलुल्लाह ने दुबाअह बिन्त जुबैर से फ़रमाया: ‘हज करो और शर्त लगा लो।’” इमाम शाफ़िई ने इराक़ में क़ियाम के दौरान यही मौक़िफ़ इख़्तियार किया था, लेकिन मिस्र में उन्होंने इस पर अमल नहीं किया। इब्न अल-मुंधिर ने कहा: “मैं पहले क़ौल को इख़्तियार करता हूँ।” अब्दुर रज़्ज़ाक ने इब्न जुरैज के वासिते से

and 'Ikrimah said that Ibn Abbas said, Dubaah bint az-Zubayr went to the Messenger of Allah and said, "I am a heavy woman who wants to perform hajj. What do you command me to do when I go into ihram." He said, "Go into ihram and stipulate that you will come out of ihram if you are held back." This is a sound isnad.	अबू जुबैर से रिवायत किया कि ताऊस और इकरिमा ने कहा कि इब्न अब्बास ने बयान किया: दुबाअह बिनत जुबैर रसूलुल्लाह के पास आई और अर्ज किया: "मैं एक भारी जिस्म वाली औरत हूँ और हज करना चाहती हूँ, आप मुझे क्या हुक्म देते हैं जब मैं एहराम बाँधूँ?" आप ने फ़रमाया: "एहराम बाँधो और यह शर्त लगा लो कि अगर तुम रोक दी जाओ तो एहराम से निकल आओगी।" यह एक सहीह सनद है।
Scholars disagree about the obligation to make up the hajj in the case of someone prevented from completing it. Malik and ash-Shafi i said that if someone is stopped by the enemy, he does not have to make up either hajj or 'umrah unless he is someone who has not yet performed the hajj and still owes it since it is still obligatory for him. That is also the case with those who believe that 'umrah is a mandatory obligation. Abu Hanifah said, 'Someone barred from completion by illness or the	उलमा के दरमियान इस बात में इख़िलाफ़ है कि जिस शख्स को हज मुकम्मल करने से रोक दिया जाए, क्या उस पर उसकी क़ज़ा लाज़िम है या नहीं। इमाम मालिक और इमाम शाफ़िई का कहना है कि अगर किसी को दुश्मन की वजह से रोक दिया जाए तो उस पर न हज की क़ज़ा लाज़िम है और न उमरा की, इल्हा यह कि वह ऐसा शख्स हो जिसने अभी तक हज अदा न किया हो, क्योंकि उस पर अस्ल में हज अभी भी फ़र्ज़ है। यही हुक्म उन लोगों का भी है जो उमरा को फ़र्ज़ मानते हैं। अबू हनीफ़ा का कहना है: "जो शख्स बीमारी या दुश्मन की वजह से हज

enemy owes both hajj and ‘umrah.’ That is the view of at-Tabari. The People of Opinion say, ‘If someone has adopted ihram for hajj, he should make up hajj and ‘umrah because his ihram for hajj has become ihram for ‘umrah. If he is doing qiran, then he should make up hajj and two ‘umrahs. If he adopted ihram for ‘umrah, he should make up ‘umrah. That is the same whether he is detained by illness or the enemy.’	मुकम्मल न कर सके, उस पर हज और उमरा दोनों की क़ज़ा लाज़िम है।” यही राय तबरी की भी है। अहल-ए-राय कहते हैं: “अगर किसी ने हज के लिए एहराम बाँधा हो तो उसे हज और उमरा दोनों की क़ज़ा करनी होगी, क्योंकि उसका हज का एहराम उमरा के एहराम में बदल गया है। और अगर उसने क़िरान का एहराम बाँधा हो तो उसे हज और दो उमरों की क़ज़ा करनी होगी। और अगर उसने उमरा के लिए एहराम बाँधा हो तो उसे उमरा की क़ज़ा करनी होगी। यह हुक्म बराबर है, चाहे उसे बीमारी की वजह से रोका गया हो या दुश्मन की वजह से।”
They base their argument on the hadith of Maymun ibn Mihran who said, ‘I went out to perform ‘umrah in the year the people of Syria laid siege to Ibn az-Zubayr in Makkah. Some men of my people sent sacrificial animals with me. When I reached the people of Syria, they prevented me from entering the Haram and so I sacrificed my animal where I was and came out of ihram and	वह अपनी दलील मैमून बिन मेहरान की हदीस से लेते हैं, जिन्होंने कहा: “मैं उस साल उमरा करने निकला जब अहल-ए-शाम ने मक्का में इब्र जुबैर का मुहासरा किया हुआ था। मेरी क़ौम के कुछ लोगों ने मेरे साथ कुर्बानी के जानवर भेजे। जब मैं अहल-ए-शाम तक पहुँचा तो उन्होंने मुझे हरम में दाखिल होने से रोक दिया, चुनाँचे मैंने वहीं अपना जानवर ज़बह कर दिया, एहराम से निकल आया और वापस चला गया। अगले

went back. The following year I left to complete my ‘umrah and went to Ibn Abbas to question him. He said, ‘Replace the sacrificial animals. The Messenger of Allah instructed his Companions to replace the animals that they had sacrificed in the year of Hdaybiyah in the Fulfilled Umrah. They did so based on the words of the Prophet, “Anyone who has broken a leg or gone lame should come out of ihram and he owes another hajj.”’ ‘Ikrimah related that al-Hajjaj ibn ‘Amr al-Ansari also said that he heard the Messenger of Allah say, ‘Anyone who has broken a leg or gone lame should come out of ihram and he owes another hajj.’ They stated that the Messenger of Allah and his Companions went on ‘umrah in the year after Hdaybiyah. That was making up the earlier ‘umrah. They said that is the reason that it is called ‘the Fulfilled ‘Umrah’.	साल मैंने अपना उमरा मुकम्मल करने के लिए दोबारा सफ़र किया और इब्र अब्बास के पास जाकर उनसे मसअला पूछा। उन्होंने कहा: ‘कुर्बानी के जानवर का बदला अदा करो। रसूलुल्लाह ने अपने सहाबा को हुक्म दिया था कि वह हुदैबिया के साल में जो जानवर ज़बह किए थे, उनका बदला उमरतुल-क़ज़ा में दें।’” उन्होंने यह काम नबी के इस फ़रमान की बुनियाद पर किया: “जो शख्स टांग तोड़ ले या लंगड़ा हो जाए, वह एहराम से निकल आए और उस पर एक और हज लाज़िम है।” इकरिमा रिवायत करते हैं कि हज्जाज बिन अम्र अंसारी ने भी कहा कि उन्होंने रसूलुल्लाह को यह फ़रमाते हुए सुना: “जो शख्स टांग तोड़ ले या लंगड़ा हो जाए, वह एहराम से निकल आए और उस पर एक और हज लाज़िम है।” उन्होंने बयान किया कि रसूलुल्लाह और आपके सहाबा हुदैबिया के अगले साल उमरा के लिए गए, और यह पहले वाले उमरा की क़ज़ा थी। इसी वजह से इसे “उमरतुल-क़ज़ा” कहा जाता है।
---	---

Malik argued by the fact that the Messenger of Allah did not instruct any of his Companions or those with him to make up anything or to repeat anything. His doing that is not recorded from him by any path whatsoever. He did not say the following year, 'This 'umrah is making up for the 'umrah that I was prevented from completing.' They call it 'Umrat al-Qada' or 'Umrat al-Qadiyyah. It was called that because the Messenger of Allah concluded (qada') and made a treaty with Quraysh that year that they would go back from the House that year and come to it the following year. That is how it gets its name.	इमाम मालिक ने इस बात से इस्तिदलाल किया कि रसूलुल्लाह ने अपने किसी सहाबी या अपने साथ मौजूद लोगों को न किसी चीज़ की क़ज़ा करने का हुक्म दिया और न ही किसी चीज़ को दोबारा अदा करने का। आप से किसी भी रिवायत में यह मनकूल नहीं कि आपने ऐसा हुक्म दिया हो। आप ने अगले साल यह भी नहीं फ़रमाया कि "यह उमरा उस उमरा की क़ज़ा है जिसे मैं मुकम्मल न कर सका था।" लोग इसे "उमरतुल-क़ज़ा" या "उमरतुल-क़ज़िय्या" कहते हैं, और इसका यह नाम इसलिए रखा गया कि उस साल रसूलुल्लाह ने कुरैश के साथ सुलह (मुआहदा) किया था कि वह उस साल बैतुल्लाह से वापस लौट जाएंगे और अगले साल आएंगे। इसी वजह से इसका यह नाम पड़ा।
None of the fuqaha' say that someone who breaks a bone or goes lame has to assume ihram at the exact place he broke it except for Abu Thawr who follows the literal meaning of the hadith of al-Hajjaj ibn 'Amr. Dawud ibn 'Ali and his people corroborate him in that.	फ़ुक्कहा में से कोई भी इस बात का क़ायल नहीं कि जिस शख्स की हड्डी टूट जाए या वह लंगड़ा हो जाए उसे उसी जगह एहराम बाँधना लाज़िम है जहाँ उसके साथ यह हादसा पेश आया हो, सिवाए अबू सौर के, जो हज्जाज बिन अम्र की हदीस के ज़ाहिरी मफ़हूम पर अमल करते हैं।

Scholars agree that someone who breaks a bone should come out of ihram, but they disagree about what takes him out of ihram. Malik and others said that it is only by doing tawaf of the House. The Kufans who oppose him say that he comes out of ihram by the intention and does what brings him out of it.	दाऊद बिन अली और उनके असहाब भी इसमें उनकी ताईद करते हैं। उलमा इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि जिस शख्स की हड्डी टूट जाए वह एहराम से निकल आए, लेकिन इस बात में इख़िलाफ़ है कि वह किस चीज़ के ज़रिये एहराम से निकलता है। इमाम मालिक और दूसरे हज़रात का कहना है कि वह सिर्फ़ बैतुल्लाह का तवाफ़ करने के ज़रिये ही एहराम से निकल सकता है। जबकि अहल-ए-कूफ़ा, जो उनसे इख़िलाफ़ रखते हैं, कहते हैं कि वह नियत के ज़रिये एहराम से निकल आता है और वह आमाल करता है जो उसे एहराम से ख़ारिज कर देते हैं।
There is no disagreement among the fuqaha' of any city that being prevented is general and applies to both hajj and 'umrah. Ibn Sirin said, 'There is no prevention in respect of 'umrah because it has no specific time.' The response to this is that even if it has no specific time, there is harm in waiting until the excuse disappears. The ayah was	किसी भी शहर के फ़ुक़हा के दरमियान इस बात में कोई इख़िलाफ़ नहीं कि "रोक दिया जाना" एक उमूमी हुक्म है और यह हज और उमरा दोनों पर लागू होता है। इब्न सीरीन ने कहा: "उमरा के बारे में इहसार (रोक दिया जाना) नहीं होता, क्योंकि इसका कोई मुअय्यन वक़्त नहीं है।" इसका जवाब यह है कि अगरचे इसका कोई मख़सूस वक़्त नहीं, फिर भी उज़्र के ख़त्म होने

revealed about that. It is related from Ibn az-Zubayr that someone who is prevented from completion by the enemy or illness only comes out of ihram by doing tawaf of the House. This is also contrary to the text of the report in the year of Hdaybiyah.	तक इतज़ार करना नुकसानदेह हो सकता है, और आयत इसी बारे में नाज़िल हुई है। इब्न जुबैर से रिवायत है कि जो शरूख़ दुश्मन या बीमारी की वजह से मनासिक मुकम्मल न कर सके, वह सिर्फ़ बैतुल्लाह का तवाफ़ करके ही एहराम से निकलता है। यह बात हुदैबिया के साल की रिवायत के ज़ाहिर के भी खिलाफ़ है।
The preventing agent may be either an unbeliever or a Muslim. If it is an unbeliever, it is not permitted to fight him, even if the prevented person is confident of defeating him, and comes out of ihram immediately, since Allah says: 'Do not fight them in the Masjid al-Haram.' If the unbeliever asks for money, he should not pay it because that would indicate weakness in Islam. If he is Muslim, he is not permitted to fight him in any case and he is obliged to come out of ihram. If he asks for something in exchange for letting him continue, however, he is permitted to pay it. Fighting is not permitted since	रोकने वाला या तो काफ़िर हो सकता है या मुसलमान। अगर वह काफ़िर हो तो उससे लड़ना जायज़ नहीं, चाहे रोका गया शरूख़ उस पर ग़ालिब आने की कुदरत रखता हो, और वह फ़ौरन एहराम से निकल आए, क्योंकि अल्लाह तआला फ़रमाता है: "मस्जिद हराम में उनसे क़िताल न करो।" अगर काफ़िर माल का मुतालबा करे तो उसे देना नहीं चाहिए, क्योंकि इसमें इस्लाम की कमज़ोरी ज़ाहिर होती है। और अगर रोकने वाला मुसलमान हो तो किसी सूरत में उससे लड़ना जायज़ नहीं, बल्कि एहराम से निकलना लाज़िम है। अलबत्ता अगर वह आगे जाने की इजाज़त के बदले कुछ तलब करे तो उसे देना जायज़ है। क़िताल जायज़ नहीं क्योंकि इसमें जानों का ज़ियाअ

it involves destruction of life. There is no obligation to fight where the performance of acts of worship is concerned, even though that is tolerated in the din. Paying the amount asked for is avoiding the greater of two harms for the lesser. It is also because the hajj is something on which one spends money, in any case, and this is counted as part of the expenses.	है। इबादात की अदायगी के लिए क़िताल वाजिब नहीं किया गया, अगरचे दीन में कुछ मौक़ों पर इसकी इजाज़त है। माँगा गया माल अदा करना दो नुक़सानों में से कमतर को इस्तिथार करना है ताकि बड़े नुक़सान से बचा जा सके। नेज़ इस लिए भी कि हज ऐसा अमल है जिसमें बहरहाल माल खर्च होता है, और यह खर्च भी उसी का हिस्सा शुमार होगा।
The enemy who prevents is either someone you are certain, because of his strength and great number, will stay and consolidate, or not. If it is the former, then the one prevented should come out of ihram immediately where he is. If the latter is the case, and you hope that the enemy concerned will leave, then you are not considered someone who is prevented unless there is not enough time after the time of the departure of the enemy in which to catch the hajj. In that case, according to Ibn al-Qasim	जो दुश्मन रास्ता रोक दे वह दो हालतों में से एक होता है: या तो ऐसा होता है कि उसकी ताक़त और कसरत की वजह से यक़ीन हो कि वह वहीं ठहरा रहेगा और मजबूती से क़ायम रहेगा, या ऐसा नहीं होता। अगर पहली सूरत हो तो महसूर शख़्स को चाहिए कि वह फ़ौरन वहीं एहराम से निकल आए। और अगर दूसरी सूरत हो, यानी यह उम्मीद हो कि दुश्मन हट जाएगा, तो वह उस वक्त तक महसूर शुमार नहीं होगा जब तक दुश्मन के हट जाने के बाद हज पाने के लिए वक्त बाकी हो। लेकिन अगर इतना वक्त न बचे कि हज अदा किया जा सके, तो इस

and Ibn al-Majishun, you should come out of ihram. Ashhab said, ‘Someone prevented from completing hajj does not come out of ihram until the Day of Sacrifice and does not stop saying the talbiyah until the people go to ‘Arafah.’ The reason for the position of Ibn al-Qāsim is that this is the moment when he despairs of completing his hajj because of the enemy. Therefore he is permitted to come out of ihram then. The day of ‘Arafah is the basis for that. The reason for the position of Ashhab is that a person must do the utmost that is possible for him regarding the rules of ihram and so it is obligatory for him until the Day of Sacrifice, which is the moment when those performing hajj are permitted to come out of ihram.	सूरत में इब्र अल-क्वासिम और इब्र अल-माजिशून के नज़दीक उसे एहराम से निकल आना चाहिए। अशहब ने कहा: “जो शख्स हज मुकम्मल करने से रोक दिया जाए वह यौम-ए-नहर तक एहराम से नहीं निकलेगा, और वह तलबिया कहना भी बंद नहीं करेगा यहाँ तक कि लोग अरफ़ात की तरफ़ रवाना हो जाएँ।” इब्र अल-क्वासिम के क़ौल की वजह यह है कि यह वह वक्त होता है जब वह दुश्मन की वजह से हज मुकम्मल करने से मायूस हो जाता है, इसलिए उस वक्त उसे एहराम से निकलने की इजाज़त होती है, और यौम-ए-अरफ़ा इसकी बुनियाद है। जबकि अशहब के क़ौल की वजह यह है कि इंसान पर लाज़िम है कि वह एहराम के अहकाम में जहाँ तक मुमकिन हो पूरी कोशिश करे, इसलिए उस पर यौम-ए-नहर तक क़ायम रहना वाजिब है, क्योंकि यही वह वक्त है जब हज करने वालों को एहराम से निकलने की इजाज़त मिलती है।
make whatever sacrifice is feasible.	जो भी कुर्बानी मुमकिन हो, वह अदा करो।
According to most scholars, this means a sheep. Ibn ‘Umar,	अक्सर उलमा के नज़दीक इससे मुराद एक बकरी है। इब्र उमर,

Aishah, and Ibn az-Zubayr said that it is whatever camel or whatever cow is available. Al-Hasan said, 'The greatest sacrifice is the camel, the medium one the cow and the least the sheep.' This phrase provides evidence for what Malik believes, which is that someone stopped by enemy forces does not have to make up his hajj, because only the sacrifice is mentioned. Allah knows best.	आयशा और इब्न जुबैर का कहना है कि इससे मुराद वह जानवर है जो मयस्सर हो, चाहे ऊँट हो या गाय। हसन बसरी ने कहा: "सबसे बड़ी कुर्बानी ऊँट है, दरमियानी गाय है और सबसे कम दर्जे की बकरी है।" यह इबारत इमाम मालिक के इस मौक़िफ़ की दलील फ़राहम करती है कि जो शख्स दुश्मन की वजह से रोक दिया जाए उस पर हज की क़ज़ा लाज़िम नहीं, क्योंकि यहाँ सिर्फ़ कुर्बानी का ज़िक्र किया गया है। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।
The word for 'sacrifice' (hadi) is used because it refers to camels which are led (hada) to the House of Allah. The Arabs use the term to mean 'camels'. Abu Bakr said that they are called this because they are given (yuhda) to the House of Allah.	लफ़ज़ "हदी" (कुर्बानी) इस लिए इस्तेमाल होता है कि इससे मुराद वह ऊँट हैं जो अल्लाह के घर की तरफ हॉके (ले जाए) जाते हैं। अरब इस लफ़ज़ को ऊँटों के मअनी में इस्तेमाल करते हैं। अबू बक्र ने कहा कि उन्हें "हदी" इस लिए कहा जाता है कि वह अल्लाह के घर की तरफ पेश किए (भेजे) जाते हैं।
But do not shave your heads until the sacrificial animal has reached the place of sacrifice.	और अपने सर न मुंडवाओ जब तक कुर्बानी का जानवर अपनी मुक़र्रर जगह तक न पहुँच जाए।
This is addressed to all Muslims performing the hajj,	यह हुक्म तमाम मुसलमानों के लिए है जो हज अदा कर रहे हों, न कि

not just those who are prevented from completing their hajj. Some scholars think, however, that it only refers to those who have been stopped. So it means: 'Do not come out of ihram until the sacrifices have been slaughtered.' The 'place of sacrifice' (maḥalluhu) referred to is the place where it is lawful to slaughter the sacrificial animals. For Malik and ash-Shafi'i, the place to sacrifice is the place where people have been stopped; this is in order to imitate the Messenger of Allah at Hudaibiyah. Allah says: 'and prevented the sacrifice from reaching its proper place,' which means they are stopped from reaching the Ancient House. Abu Hanifah says that it means the Haram of Makkah since Allah says: 'and their place of sacrifice is by the Ancient House.' The response to this is that for this to happen the security necessary to reach the House is essential. Someone who is barred fails to	सिर्फ उन लोगों के लिए जो अपने हज की तकमील से रोक दिए गए हों। हालांकि कुछ उलमा का खयाल है कि यह सिर्फ उन्हीं के बारे में है जो रोके गए हों। इस सूरत में इसका मतलब होगा: "एहराम से उस वक्त तक न निकलो जब तक कुर्बानी के जानवर ज़बह न कर लिए जाएँ।" यहाँ "कुर्बानी की जगह" (महल्लुह) से मुराद वह मक़ाम है जहाँ कुर्बानी के जानवर को ज़बह करना जायज़ होता है। इमाम मालिक और इमाम शाफ़िई के नज़दीक कुर्बानी की जगह वही मक़ाम है जहाँ लोगों को रोक दिया गया हो, ताकि हुदैबिया में रसूलुल्लाह के अमल की पैरवी की जाए। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "और कुर्बानी को उसकी मुक़र्रर जगह तक पहुँचने से रोक दिया गया", यानी वह बैत-ए-अतीक (काबा) तक पहुँचने से रोकी गई। अबू हनीफ़ा का कहना है कि इससे मुराद मक्का का हरम है, क्योंकि अल्लाह तआला फ़रमाता है: "और उनकी कुर्बानी की जगह बैत-ए-अतीक के पास है।" इसका जवाब यह है कि इसके लिए बैतुल्लाह तक पहुँचने की ज़रूरी अम्र व सलामती का होना लाज़िम है, जबकि महसूर
---	---

meet this condition. The evidence for this lies in the fact that the Prophet and his Companions slaughtered their animals at Hudaibiyah and not at the Haram. In the Sunnah, the argument advanced is the hadith of Najiyah ibn Jundub, the Companion of the Prophet, who said to the Prophet, ‘Send the sacrificial camels with me and I will slaughter them at the Haram.’ He asked, ‘How will you do that?’ He said, ‘I will lead them through inaccessible wadis and until the point that I can slaughter them in the Haram.’ The answer to this is that it is not sound. One slaughters where one comes out of ihram to imitate what the Prophet did at Hudaibiyah. This is the sound version related by the imams. Furthermore, the sacrificial animals follow the one who presents them and where he comes out of ihram.	शरूँ इस शर्त को पूरा नहीं करता। इसकी दलील यह है कि नबी और आपके सहाबा ने हुदैबिया में कुर्बानी की, न कि हरम में। सुन्नत से इस पर जो दलील पेश की जाती है वह नाजियह बिन जुन्दुब की हदीस है, जो नबी के सहाबी थे। उन्होंने अर्ज किया: “आप कुर्बानी के ऊँट मेरे साथ भेज दें, मैं उन्हें हरम में ज़बह कर दूँगा।” आप ने फ़रमाया: “तुम यह कैसे करोगे?” उन्होंने कहा: “मैं उन्हें दुश्वार गुज़ार वादियों से ले जाऊँगा यहाँ तक कि उन्हें हरम में ज़बह कर सकूँ।” इसका जवाब यह है कि यह रिवायत मज़बूत नहीं। सही बात यह है कि जहाँ इंसान एहराम से निकलता है वहीं कुर्बानी करता है, जैसा कि नबी ने हुदैबिया में किया। यही इमामों से मनकूल सही क़ौल है। इसके अलावा कुर्बानी के जानवर उस शरूँ के ताबे होते हैं जो उन्हें पेश करता है और जहाँ वह एहराम से निकलता है, वहीं उन्हें ज़बह किया जाता है।
Scholars disagree about whether someone who is	उलमा का इस बात में इख़िलाफ़ है कि जो शरूँ हज से रोक दिया जाए

prevented from continuing should shave his head and about the way in which he should come out of ihram before sacrificing. Malik said: 'The firm sunnah about which there is no disagreement with us is that it is not permitted for someone to remove any of his hair until he has sacrificed. Allah says: "Do not shave your heads until the sacrificial animal has reached the place of sacrifice."' Abu Hanifah and his people say that if he comes out of ihram before he sacrifices he owes another sacrifice and reverts to being in ihram until he sacrifices. If he catches game before he slaughters his sacrifice, he owes requital, and the wealthy and poor are the same in that respect. He does not come out of ihram until he sacrifices or the sacrifice is done for him. They said that the minimum is a sheep which is not blind and does not have its ears cut. For them, that takes the place of	क्या वह अपना सर मुंडवाए और कुर्बानी से पहले किस तरह एहराम से निकले। इमाम मालिक ने कहा: "हमारे नज़दीक पुख्ता सुन्नत, जिसमें कोई इख़िलाफ़ नहीं, यह है कि किसी शख्स के लिए जायज़ नहीं कि वह अपने बालों में से कुछ भी काटे जब तक वह कुर्बानी न कर ले। अल्लाह तआला फ़रमाता है: 'अपने सर न मुंडवाओ जब तक कुर्बानी का जानवर अपनी मुक़र्रर जगह तक न पहुँच जाए।'" अबू हनीफ़ा और उनके असहाब का कहना है कि अगर कोई शख्स कुर्बानी से पहले एहराम से निकल आए तो उस पर एक और कुर्बानी लाज़िम होगी और वह दोबारा एहराम की हालत में लौट आएगा यहाँ तक कि कुर्बानी करे। अगर वह कुर्बानी करने से पहले शिकार कर ले तो उस पर उसका बदला लाज़िम होगा, और इस मामले में अमीर व ग़रीब बराबर हैं। वह उस वक्त तक एहराम से नहीं निकलेगा जब तक वह खुद कुर्बानी न करे या उसकी तरफ़ से कुर्बानी न कर दी जाए। उन्होंने कहा कि कम से कम कुर्बानी एक ऐसी बकरी है जो न अंधी हो और न उसके कान कटे हों। उनके नज़दीक यही रोज़े के बदले के तौर
--	---

fasting.	पर काफ़ी है।
Abu ‘Umar said that the position of the Kufans regarding this matter is weak and contradictory because they do not permit someone barred by illness or the enemy to come out of ihram until he has sacrificed in the Haram. By permitting the person stopped because of illness to send a sacrificial animal, instructing the person who takes it to slaughter it on a certain day, whereupon he can come out of ihram and shave his head, they then allow him to assume certainty that the animal has reached the place and has been slaughtered. So they compel him to come out of ihram based on assumption when scholars agree that it is not permitted for someone obliged to perform one of his obligations to leave it based on assumption. The evidence that it is an assumption is found in their words: ‘If that animal dies, is lost or stolen, the one who sent	अबू उमर ने कहा कि इस मसले में अहल-ए-कूफ़ा का मौक़िफ़ कमज़ोर और मुतनाज़िद है, क्योंकि वह बीमारी या दुश्मन की वजह से रोके गए शख्स को उस वक्त तक एहराम से निकलने की इजाज़त नहीं देते जब तक वह हरम में कुर्बानी न कर ले। लेकिन जब वह बीमार शख्स को यह इजाज़त देते हैं कि वह कुर्बानी का जानवर भेज दे और ले जाने वाले को हिदायत करे कि वह उसे एक मुक़र्रर दिन ज़बह करे, जिसके बाद वह एहराम से निकल आए और सर मुंडवा ले, तो दरअसल वह उसे इस बात का यक़ीन करने की इजाज़त देते हैं कि जानवर अपनी जगह पहुँच गया और ज़बह हो गया। इस तरह वह उसे गुमान की बुनियाद पर एहराम से निकलने पर मजबूर करते हैं, हालाँकि उलमा इस बात पर मुत्तफ़िक्क हैं कि किसी फ़र्ज़ के पाबंद शख्स के लिए जायज़ नहीं कि वह गुमान की बुनियाद पर अपने फ़र्ज़ को छोड़ दे। इसके गुमान होने की दलील खुद उनके क़ौल में मौजूद है कि: “अगर वह जानवर मर जाए, गुम हो जाए या चोरी हो जाए तो भेजने

it comes out of ihram and has sex with his wife and hunts, he reverts to being in ihram and owes requital for what he hunted.’ So they permit him to invalidate the hajj and make obligatory him what is binding for someone who has not come out of ihram. This is an unconcealed contradiction and a weak position. They base all of their school on the position of Ibn Masud and did not look at anything that disagreed with him.	वाला एहराम से निकल आए, अपनी बीवी से ताल्लुक क़ायम करे और शिकार करे, फिर वह दोबारा एहराम की हालत में लौट आएगा और जो शिकार किया उसका बदला भी लाज़िम होगा।” इस तरह वह उसे हज को फ़ासिद करने की इजाज़त देते हैं और उस पर वह चीज़ लाज़िम करते हैं जो ऐसे शख्स पर लाज़िम होती है जो एहराम से नहीं निकला। यह एक खुला तज़ाद और कमज़ोर मौक़िफ़ है। उन्होंने अपने पूरे मज़हब की बुनियाद इब्र मसऊद के क़ौल पर रखी और उसके ख़िलाफ़ किसी और क़ौल की तरफ़ तवज्जोह नहीं दी।
Ash-Shafi i has two views about someone who is barred when it is difficult for him to sacrifice. One is that he only leaves ihram by sacrifice, and the other is that he is commanded to do what he is able to do. If he is not able to do something, then he does what he is able to do. Ash-Shafi i said, ‘Someone who says this says that he leaves ihram where he is and slaughters if he is able to do so.	इमाम शाफ़िई के नज़दीक उस शख्स के बारे में दो राय हैं जो महसूर हो जाए और उसके लिए कुर्बानी करना मुश्किल हो। एक राय यह है कि वह सिर्फ़ कुर्बानी के ज़रिये ही एहराम से निकल सकता है, और दूसरी यह कि उसे हुक्म दिया जाएगा कि वह जो कुछ कर सकता है वह करे, और जो न कर सके उसे छोड़ दे। इमाम शाफ़िई ने कहा: “जो इस क़ौल का क़ायल है वह यह कहता है कि वह जहाँ है वहीं एहराम से निकल आए और अगर मुमकिन हो तो

If he is able to slaughter in Makkah, then he is only allowed to slaughter there.' He said that his situation is only satisfied by a sacrifice. It is said that if someone cannot find a sacrificial animal, then he should feed people or fast. If he cannot do any of these three, then he does one of them when he is able to. In the case of a slave, it is said that the situation is only satisfied by fasting. The price of a sheep is calculated in dirhams and then the dirhams in terms of food and he should fast a day for every mudd so calculated.	कुर्बानी करे। और अगर वह मक्का में कुर्बानी करने की इस्तिताअत रखता हो तो उसे सिर्फ वहीं कुर्बानी करने की इजाज़त होगी।" उन्होंने कहा कि उसकी हालत सिर्फ कुर्बानी से ही पूरी होती है। यह भी कहा गया है कि अगर किसी को कुर्बानी का जानवर न मिले तो वह लोगों को खाना खिलाए या रोज़े रखे। और अगर वह इन तीनों में से कुछ भी न कर सके तो जब भी इस्तिताअत हो इनमें से कोई एक अमल करे। गुलाम के बारे में कहा गया है कि उसकी हालत सिर्फ रोज़े से पूरी होती है। एक बकरी की क़ीमत दिरहमों में लगाई जाएगी, फिर उन दिरहमों को खाने के हिसाब से तब्दील किया जाएगा, और हर मुद्द के बदले एक दिन रोज़ा रखेगा।
There is disagreement about whether someone forced to stop can shave his head or not once he has sacrificed. One group say that he does not have to shave because his rites have ended. Their argument is that all the practices, such as ṭawaf and say, are cancelled for him when he is barred. That is part	इस बात में इख़िलाफ़ है कि जो शख्स रोक दिया जाए क्या वह कुर्बानी के बाद सर मुंडवाए या नहीं। एक ग़िरोह का कहना है कि उसे सर मुंडवाना लाज़िम नहीं, क्योंकि उसके मनासिक ख़त्म हो चुके हैं। उनकी दलील यह है कि जब वह रोक दिया गया तो उसके लिए तवाफ़ और सई जैसे तमाम आमाल साक़ित हो गए,

of what takes him out of ihram. Therefore the rest of what brings someone out of ihram is cancelled for him by the fact of being barred. Among those who argue this are Abu Hanifah and Muhammad ibn al-Hasan who said that someone barred does not have to shave or shorten his hair. Abu Yusuf said that he should shave, but owes nothing if he does not shave. Ibn 'Imrān related from Ibn Samaah from Abu Yusuf in an-Nawadir that he must shave his head or shorten his hair.	और यही चीज़ उसे एहराम से निकालने का सबब बनती है। लिहाज़ा एहराम से निकलने के बाकी आमाल भी उसके लिए साक़ित हो जाते हैं। इस राय के क़ायलिन में अबू हनीफ़ा और मुहम्मद बिन हसन शामिल हैं, जिन्होंने कहा कि महसूर शख्स पर न सर मुंडवाना लाज़िम है और न बाल कटवाना। अबू यूसुफ़ ने कहा कि उसे सर मुंडवाना चाहिए, लेकिन अगर वह न मुंडवाए तो उस पर कुछ लाज़िम नहीं। इब्न इमरान ने इब्न समाअह के वासिते से अबू यूसुफ़ से अन-नवादिर में रिवायत किया है कि उस पर सर मुंडवाना या बाल कटवाना लाज़िम है।
Ash-Shafi i has two different views about this matter. One is that the person prevented from finishing the practices shaves his head, which is the view of Malik, and the other that it is not one of the practices, as is the view of Abu Hanifah. The argument of Malik is that tawaf of the House and running between Safa and Marwah are all made impossible for the person who is barred and so	इमाम शाफ़िई के इस मसले में दो मुख़्तलिफ़ अक़वाल हैं। एक यह कि जो शख्स मनासिक मुकम्मल न कर सके वह सर मुंडवाए, और यही इमाम मालिक का मौक़िफ़ है। दूसरा यह कि सर मुंडवाना मनासिक में शामिल नहीं, जैसा कि अबू हनीफ़ा का क़ौल है। इमाम मालिक की दलील यह है कि बैतुल्लाह का तवाफ़ और सफ़ा व मरवा के दरमियान सई महसूर शख्स के लिए मुमकिन नहीं रहती, इसलिए ये आमाल उससे

what is between him and them is cancelled for him, but there is nothing preventing him from shaving: he is able to do it. When he is able to do something it is not cancelled for him. Part of what indicates that someone barred must still shave their head, in the same way as someone who reaches the House must, is the words of Allah: ‘Do not shave your heads until the sacrificial animal has reached the place of sacrifice.’ There is also what is related about the Messenger of Allah supplicating three times for those who shave their heads but only once for those who shorten their hair. This is the definitive proof and sound view regarding this matter. It is what Malik and his people believe. They believe that shaving the head is one of the practices owed by the hajj which complete his hajj, and they are also due from someone who misses the hajj, someone barred by the enemy or prevented by	साक़ित हो जाते हैं, लेकिन सर मुंडवाने में कोई रुकावट नहीं, क्योंकि वह इसे अंजाम दे सकता है। जब कोई अमल करना मुमकिन हो तो वह उससे साक़ित नहीं होता। इस बात की दलील कि महसूर शख्स पर भी सर मुंडवाना लाज़िम है, जैसे कि बैतुल्लाह तक पहुँचने वाले पर लाज़िम होता है, अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: “अपने सर न मुंडवाओ जब तक कुर्बानी का जानवर अपनी मुक़र्रर जगह तक न पहुँच जाए।” इसी तरह यह भी मरवी है कि रसूलुल्लाह ने सर मुंडवाने वालों के लिए तीन मर्तबा दुआ फ़रमाई और बाल कटवाने वालों के लिए एक मर्तबा। यही इस मसले में क़तई दलील और सही मौक़िफ़ है, और यही इमाम मालिक और उनके असहाब का क़ौल है। उनके नज़दीक सर मुंडवाना हज के उन आमाल में से है जो हज को मुकम्मल करते हैं, और यह उस शख्स पर भी लाज़िम है जो हज से महरूम रह जाए, दुश्मन की वजह से रोका जाए या बीमारी की वजह से रुका हुआ हो।
---	---

illness.	
The imams related from Nafi from Abdullah ibn Umar that the Messenger of Allah said, ‘O Allah, forgive those who shave their heads.’ They said, ‘And those who shorten their hair, Messenger of Allah!’ He said, ‘O Allah, forgive those who shave their heads.’ They said, ‘And those who shorten their hair, Messenger of Allah!’ He said, ‘and those who shorten their hair.’ Our scholars say that this is a supplication by the Messenger of Allah three times for those who have shaved and only once for those who shortened their hair. It is evidence that it is better to shave than shorten the hair in the hajj and ‘umrah. That is stipulated by Allah’s words in the ayah where there is no mention of shortening the hair. With the exception of something mentioned by al-Hasan about obliging shaving in the first hajj that a person makes, scholars are, however,	आइम्मा ने अब्दुल्लाह बिन उमर से, उन्होंने नाफ़े के वासिते से रिवायत किया कि रसूल अल्लाह ने फ़रमाया: “ऐ अल्लाह! सर मुंडवाने वालों को बख़्श दे।” लोगों ने अर्ज़ किया: “और बाल कटवाने वालों को भी, या रसूल अल्लाह!” आप ने फ़रमाया: “ऐ अल्लाह! सर मुंडवाने वालों को बख़्श दे।” उन्होंने फिर अर्ज़ किया: “और बाल कटवाने वालों को भी, या रसूल अल्लाह!” आप ने फ़रमाया: “और बाल कटवाने वालों को भी।” हमारे उलमा कहते हैं कि यह रसूल अल्लाह की तरफ़ से सर मुंडवाने वालों के लिए तीन मरतबा दुआ है और बाल कटवाने वालों के लिए सिर्फ़ एक मरतबा। इससे यह दलील मिलती है कि हज और उमरा में सर मुंडवाना बाल कटवाने से अफ़ज़ल है। इसकी ताईद अल्लाह तआला के इस इरशाद से भी होती है जिसमें बाल कटवाने का ज़िक्र नहीं आया। अलबत्ता हसन बसरी से एक क़ौल मनकूल है कि पहली मरतबा हज करने वाले पर सर मुंडवाना लाज़िम है, लेकिन इसके बावजूद उलमा का इस बात पर इत्तेफ़ाक़ है कि मर्दों के

agreed that shortening the hair is permitted for men.	लिए बाल कटवाना भी जायज़ है।
Women do not shave their heads. Their sunnah is to shorten the hair since the Prophet said, ‘Women do not have to shave off their hair. They shorten it.’ Abu Dawud transmitted it from Ibn ‘Abbas. Scholars agree on that position. Some people think that a woman shaving her hair amounts to mutilation. There is disagreement about the amount which should be cut. Ibn ‘Umar, ash-Shafi i, Ahmad, and Ishaq said that it is a fingertip length from every lock. ‘Ata’ says it is the length of three fingers when put together. Qatadah says a third or a quarter. Hafsah bint Sirin says that a woman who is older should cut a quarter and a young woman only a little. Malik says that it should be cut around but that whatever a woman removes is adequate; all her locks, however, must be trimmed. Ibn al-Mundhir said	औरतें अपने सर नहीं मुंडवातीं। उनके लिए सुन्नत यह है कि वे अपने बाल छोटे करें, क्योंकि नबी करीम ने फ़रमाया: “औरतों पर सर मुंडवाना लाज़िम नहीं, वे बाल छोटे करेंगी।” इस रिवायत को अब्दुल्लाह बिन अब्बास से अबू दाऊद ने नक़ल किया है। इस मौक़िफ़ पर उलमा का इत्तिफ़ाक़ है। कुछ लोगों का ख़याल है कि औरत का सर मुंडवाना मुस्ला (अंगों का बिगाड़) के जुम्रे में आता है। अलबत्ता बाल कितने काटे जाएँ, इस बारे में इख़िलाफ़ है। अब्दुल्लाह बिन उमर, इमाम शाफ़ई, इमाम अहमद बिन हनबल और इसहाक बिन राहविया के नज़दीक हर लट से उंगली के पोर के बराबर काटना चाहिए। अता बिन अबी रबाह के नज़दीक तीन उंगलियों के बराबर, जबकि क़तादा के नज़दीक एक तिहाई या एक चौथाई काटना काफ़ी है। हफ़सा बिनत सीरीन कहती हैं कि उम्र-रसीदा औरत एक चौथाई बाल काटे और जवान औरत सिर्फ़ थोड़ा सा। इमाम मालिक के नज़दीक चारों तरफ़ से बाल काटे जाएँ, और औरत

that it is anything that can be called ‘shortening’, but it is more cautious to take a fingertip from every lock.	जितना भी काट ले वह काफ़ी है, लेकिन ज़रूरी है कि तमाम लटों में से कुछ न कुछ काटा जाए। इब्न अल-मुन्धिर कहते हैं कि जो चीज़ “बाल छोटे करना” कहलाए वह काफ़ी है, अलबत्ता एहतियात इसी में है कि हर लट से उंगली के पोर के बराबर काटा जाए।
No one is permitted to shave his head until his sacrifice has been slaughtered. That is because it is sunnah to slaughter before shaving. This ayah is the basis for that along with what the Messenger of Allah did. He slaughtered first and then shaved after that. If someone reverses this order, he has either done so in error and ignorance or intentionally. If it is the first case, then he owes nothing. Ibn Habib related that from Ibn al-Qasim and it is well known in the school of Malik. Ibn al-Majishun said that he owes a sacrifice, and that is what is stated by Abu Hanifah. As for the second case, Qadi Abul-Hasan related that it is permitted to shave the	किसी को भी यह इजाज़त नहीं कि वह अपना सर उस वक़्त तक मुँडवाए जब तक उसकी कुर्बानी ज़बह न कर ली जाए। इसकी वजह यह है कि सुन्नत यह है कि मुँडवाने से पहले कुर्बानी की जाए। इस आयत और रसूल अल्लाह के अमल से यही साबित होता है, क्योंकि आप ने पहले कुर्बानी की और उसके बाद सर मुँडवाया। अगर कोई शख्स इस तरतीब को उलट दे तो या तो उसने यह काम ग़लती और लाइल्मी में किया होगा या जान-बूझ कर। अगर पहला मामला हो तो उस पर कुछ लाज़िम नहीं। इब्न हबीब ने इब्न अल-क्रासिम से यही रिवायत किया है और यह इमाम मालिक के मज़हब में मशहूर है। इब्न अल-माजिशून ने कहा कि उस पर कुर्बानी लाज़िम है, और यही क़ौल इमाम अबू हनीफ़ा का भी

head before sacrificing. Ash-Shafi i also said that. The apparent position in the School is that it is forbidden. What is sound is that it is permitted based on the hadith of Ibn ‘Abbas in which the Prophet was asked about slaughtering, shaving and stoning and a change in the order. He said, ‘There is no harm in it.’ Muslim related it. Ibn Majah transmitted from ‘Abdullah ibn ‘Amr that the Prophet was asked about someone who slaughtered before shaving or shaving before slaughtering and he said, ‘There is no harm in it.’	है। रहा दूसरा मामला (यानी जान-बूझ कर तरतीब बदलना), तो क़ाज़ी अबुल-हसन ने रिवायत किया है कि कुर्बानी से पहले सर मुँडवाना जायज़ है। इमाम शाफ़ई ने भी यही कहा है। जबकि मज़हब (मालिकिया) में ज़ाहिर क़ौल यह है कि यह ममनूअ है। ताहम दुरुस्त बात यह है कि यह जायज़ है, जैसा कि इब्न अब्बास (रज़ि.) की हदीस से साबित है जिसमें नबी से कुर्बानी, सर मुँडवाने और रमी जमरात की तरतीब के बारे में सवाल किया गया और तरतीब में तब्दीली का ज़िक्र हुआ तो आप ने फ़रमाया: “इसमें कोई हरज नहीं है।” इस हदीस को इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया है। इसी तरह इब्न माजह ने अब्दुल्लाह बिन अम्र (रज़ि.) से रिवायत किया है कि नबी से उस शख्स के बारे में पूछा गया जिसने सर मुँडवाने से पहले कुर्बानी की या कुर्बानी से पहले सर मुँडवाया, तो आप ने फ़रमाया: “इसमें कोई हरज नहीं है।”
There is no disagreement that shaving the head in the hajj is a recommended practice and permitted in other than the hajj, although some disagree and say	इस बात में कोई इख़िलाफ़ नहीं कि हज में सर मुँडवाना एक मुस्तहब अमल है, और हज के अलावा भी इसकी इजाज़त है, अगरचे कुछ लोगों

that in that case it is mutilation. If it had been mutilation it would not have been permitted in the hajj or anywhere else because the Messenger of Allah forbade mutilation. He shaved the heads of the sons of Jafar three days after their father was killed. If shaving had not been permitted, he would not have done it. Ali ibn Abi Talib used to shave his head. Ibn ‘Abd al-Barr said that scholars agree about tying the hair and allowing shaving it. This is enough of a proof. Success is by Allah.	का इस बारे में इख़्तिलाफ़ है और वे कहते हैं कि इस सूरत में यह मुस्ला (अंगों का बिगाड़) है। अगर यह वाक़ई मुस्ला होता तो न हज में और न ही किसी और जगह इसकी इजाज़त दी जाती, क्योंकि रसूल अल्लाह ने मुस्ला से मना फ़रमाया है। आप ने जाफ़र बिन अबी तालिब की शहादत के तीन दिन बाद उनके बेटों के सर मुंडवाए। अगर सर मुंडवाना जायज़ न होता तो आप ऐसा न करते। अली बिन अबी तालिब खुद भी अपना सर मुंडवाया करते थे। इब्न अब्दुल बर्र ने कहा है कि उलमा का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि बालों को बांधना और उन्हें मुंडवाना दोनों जायज़ हैं, और यही इस मसले में काफ़ी दलील है। कामयाबी अल्लाह ही की तरफ़ से है।
If any of you are ill or have a head injury, the expiation is fasting or sadaqah or sacrifice when you are safe and well again.	अगर तुम में से कोई बीमार हो या उसके सर में तकलीफ़ हो तो उसका कफ़़ारा यह है कि जब वह दोबारा अम्र और सेहत हासिल कर ले तो रोज़े रखे या सदक़ा दे या कुर्बानी करे।
‘If any of you’: some Shafi i scholars say that this phrase	“तुम में से जो कोई”: कुछ इमाम

definitely indicates that the one who is 'prevented' at the beginning of the ayah refers to people barred by an enemy and not by illness since, if that was not the case, there would be no need for the repetition here. If someone has something harmful on his head, he must pay fidyah. The application of the ayah does not necessarily follow in the context. The pronouns at the end refer back to what was mentioned at the beginning. Part of what indicates that is the reason for its revelation. The imams relate about Kab ibn Ujrah when the Prophet saw lice dropping from his hair onto his face and said, 'Perhaps your head is causing you harm?' He commanded him to shave his head at Hudaibiyah while they were still hoping to enter Makkah. Then Allah revealed fidyah (expiation) and the Prophet commanded him to feed six poor people, sacrifice a sheep or fast three days.	शाफ़ई के अस्ताब कहते हैं कि यह इबारत इस बात की वाज़ेह दलील है कि आयत के शुरू में जिस "रोके जाने वाले" का ज़िक्र है, उससे मुराद वह लोग हैं जिन्हें दुश्मन ने रोका हो, न कि बीमारी ने; क्योंकि अगर ऐसा न होता तो यहाँ इस जुमले के इआदा की ज़रूरत न थी। अगर किसी शख्स के सर में कोई ऐसी चीज़ हो जो उसे तकलीफ़ दे रही हो तो उस पर फ़िद्या लाज़िम है। आयत का इतलाक़ लाज़िमी तौर पर सियाक के मुताबिक़ नहीं होता, बल्कि आख़िर में आने वाली ज़मीरें शुरू में मज़कूर चीज़ों की तरफ़ लौटती हैं। इसकी ताईद इसके सबब-ए-नुज़ूल से भी होती है। आइम्मा ने काब बिन उजरह के बारे में रिवायत किया है कि जब रसूल अल्लाह ने देखा कि उनके बालों से जूँ गिरकर उनके चेहरे पर आ रही हैं तो आप ने फ़रमाया: "शायद तुम्हारे सर की तकलीफ़ तुम्हें अज़ियत दे रही है?" फिर आप ने उन्हें हुदैबिया के मक़ाम पर सर मुंडवाने का हुक्म दिया, जबकि वे अभी मक्का में दाख़िल होने की उम्मीद रखते थे। इसके बाद अल्लाह तआला ने फ़िद्या (कफ़ारा) का हुक्म नाज़िल फ़रमाया, और रसूल अल्लाह ने उन्हें
---	--

	हुक्म दिया कि वे छह मिस्कीनों को खाना खिलाएँ, या एक बकरी की कुर्बानी करें, या तीन दिन के रोज़े रखें।
Al-Awza i said that if someone in ihram has something harmful on his head, it is enough for him to expiate it by fidyah before shaving his head. According to this, the ayah means 'if he wants to shave.' So anyone who shaves owes fidyah which he does not pay until he shaves. Allah knows best.	इमाम औज़ाई ने कहा कि अगर कोई शख्स हालत-ए-इहराम में हो और उसके सर में कोई तकलीफ़देह चीज़ हो तो उसके लिए यह काफ़ी है कि वह सर मुंडवाने से पहले फ़िद्या अदा कर दे। इस क़ौल के मुताबिक़ आयत का मतलब यह होगा: "अगर वह सर मुंडवाना चाहे।" लिहाज़ा जो शख्स भी सर मुंडवाएगा उस पर फ़िद्या लाज़िम होगा, जिसे वह सर मुंडवाने के बाद अदा करेगा। और अल्लाह बेहतर जानता है।
Ibn 'Abd al-Barr says, 'The sacrifice, in this case, is a sheep and there is no disagreement about that. There is disagreement about the amount of fasting and feeding. Most Muslim scholars believe that the fast is for three days, as is found in the sound hadith from Kab ibn 'Ujrah. Al-Hasan, 'Ikrimah and Nafi say that it is ten days. None of the fuqaha' of the cities or the imams of	इब्र अब्दुल बर्र कहते हैं: "इस मामले में कुर्बानी एक बकरी है और इस पर कोई इख़्तिलाफ़ नहीं। अलबत्ता रोज़ों और खाना खिलाने की मात्रा में इख़्तिलाफ़ है। अक्सर मुस्लिम उलमा के नज़दीक रोज़े तीन दिन के हैं, जैसा कि काब बिन उजरह से मर्वी सहीह हदीस में आया है। जबकि हसन बसरी, इकरिमा और नाफ़े कहते हैं कि यह दस दिन हैं। शहरों के फ़ुक़हा और अइम्मा-ए-हदीस में से कोई भी इस क़ौल को इख़्तियार

hadith take this position.’ It is transmitted by Abu z-Zubayr from Mujahid from ‘Abd ar-Rahman that Ka‘b ibn ‘Ujrah told him that he went into ihram in Dhu-l-Qadah and his head was full of lice. He went to the Prophet who was heating a pot over a fire. He said to him, ‘It seems that the vermin on your head are causing you harm.’ ‘Yes,’ he answered. He said, ‘Shave and make a sacrifice.’ He said, ‘I do not have the means to sacrifice.’ He said, ‘Then feed ten poor people.’ He replied, ‘I do not have the means.’ He said, ‘Fast for three days.’ Abu ‘Umar said, ‘The hadith would give the impression that there is an order in the three alternatives, but is not the case. If this had been sound, it would be first one, then the other, but most of the reports from Kab ibn ‘Ujrah use the word “choice”. That is the text of the Quran and it is how the scholars in every city acted and that was their fatwa.	नहीं करता।” यह रिवायत अबू जुबैर ने मुजाहिद बिन जबर के वासिते से अब्दुर्रहमान से नक़ल की है कि काब बिन उजरह ने उन्हें बताया कि वे जुलक़अदा में एहराम बाँधे हुए थे और उनके सर में जूँ भरी हुई थीं। वे रसूल अल्लाह के पास गए, जो एक हांडी को आग पर गर्म कर रहे थे। आप ने उनसे फ़रमाया: “ऐसा लगता है कि तुम्हारे सर के कीड़े तुम्हें तकलीफ़ दे रहे हैं।” उन्होंने जवाब दिया: “जी हाँ।” आप ने फ़रमाया: “अपना सर मुंडवा लो और कुर्बानी करो।” उन्होंने कहा: “मेरे पास कुर्बानी की इस्तिताअत नहीं है।” आप ने फ़रमाया: “तो दस मिसकीनों को खाना खिला दो।” उन्होंने कहा: “मेरे पास इसकी भी इस्तिताअत नहीं है।” आप ने फ़रमाया: “तो तीन दिन के रोज़े रखो।” अबू उमर कहते हैं: “इस हदीस से बज़ाहिर यह तास्सुर मिलता है कि इन तीनों इस्तिथारात में तरतीब है, लेकिन हक़ीक़त में ऐसा नहीं है। अगर यह बात दुरुस्त होती तो पहले एक फिर दूसरा लाज़िम होता, मगर काब बिन उजरह से मर्वी अक्सर रिवायतों में ‘इस्तिथार’ का लफ़ज़ आया है। यही कुरआन का ज़ाहिर मफ़हूम है और हर शहर के
--	--

Success is by Allah.	उलमा ने इसी पर अमल किया है और यही उनका फ़तवा है। कामयाबी अल्लाह ही की तरफ़ से है।”
Scholars disagree about how much food is required for the fidyah on account of this harm. Malik, ash-Shafi i, Abu Hanifah and their people said that the feeding required is two mudds measured by the mudd of the Prophet. That is the view of Abu Thawr and Dawud. It is related that ath-Thawri said that fidyah is half a sa of wheat or a sa of dates, barley or raisins. It is also related that Abu Hanifah made half a sa of wheat equal to a sa of dates. Ibn al-Mundhir said, ‘This is an error because in some reports the Prophet said to Kab, “Give as sadaqah three sas of dates to six poor people.” Ahmad ibn Hanbal once said what Malik and ash-Shafi i said, and another time: ‘He should feed each poor person with a mudd of wheat or half a sa of dates.’ Feeding poor people a midday and	उलमा के दरमियान इस बात में इख़िलाफ़ है कि इस ज़रर की वजह से फ़िद्या में कितनी मात्रा में खाना देना ज़रूरी है। इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई, इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब का कहना है कि खाना दो मुद्द (नबी के मुद्द के मुताबिक़) देना लाज़िम है। यही राय अबू थौर और दाऊद ज़ाहिरी की भी है। यह भी रिवायत है कि सुफ़यान सौरी ने कहा कि फ़िद्या आधा सा’ गंदुम या एक सा’ खजूर, जौ या किशमिश है। इसी तरह यह भी मनकूल है कि इमाम अबू हनीफ़ा ने आधे सा’ गंदुम को एक सा’ खजूर के बराबर करार दिया है। इब्न अल-मुन्धिर ने कहा: “यह ग़लती है, क्योंकि कुछ रिवायतों में नबी ने काब बिन उजरह से फ़रमाया: ‘तीन सा’ खजूर छह मिस्कीनों में सदक़ा करो।” इमाम अहमद बिन हनबल से एक रिवायत में इमाम मालिक और इमाम शाफ़ई के क़ौल के मुताबिक़ मनकूल है, और दूसरी रिवायत में उन्होंने कहा: “हर

evening meal does not satisfy the requirement in the expiation for removal of harm. It is necessary to give each poor person two mudds measured by the mudd of the Prophet. That is what is stated by Mlik, ath-Thawri, ash-Shafi i, and Muhammad ibn al-Hasan. Abu Yūsuf, however, said that it is enough to feed them a midday and evening meal.	मिस्कीन को एक मुद्द गंदुम या आधा सा' खजूर दिया जाए।" मिस्कीनों को एक वक्त का खाना या दो वक्त (दोपहर और शाम) का खाना खिला देना इस ज़रर के कफ़ारे में काफ़ी नहीं है। ज़रूरी है कि हर मिस्कीन को नबी के मुद्द के मुताबिक़ दो मुद्द दिए जाएँ। यही बात इमाम मालिक, सुफ़यान सौरी, इमाम शाफ़ई और मुहम्मद बिन हसन अश-शैबानी ने बयान की है। अलबत्ता अबू यूसुफ़ का कहना है कि मिस्कीनों को दो वक्त का खाना खिला देना ही काफ़ी है।
The consensus of the people of knowledge is that someone in ihram is forbidden to shave his hair or cut it or eliminate it in any way by shaving or depilation or anything else, except in case of illness as the Quran states. They agree that fidyah is mandatory for someone who shaves while in ihram without reason. They disagree about someone who does that or puts on perfume deliberately without an excuse. Malik said, 'What he has done	अहल-ए-इल्म का इस बात पर इज्मा है कि इहराम की हालत में आदमी के लिए अपने बाल मुंडवाना, काटना या किसी भी तरीके से ज़ाइल करना (चाहे मुंडाकर हो या बाल उखाड़कर या किसी और तरीके से) जायज़ नहीं, सिवाय बीमारी की हालत के जैसा कि कुरआन में बयान हुआ है। इसी तरह इस बात पर भी इत्तिफ़ाक़ है कि जो शख्स बिना उज़्र इहराम में सर मुंडवा ले उस पर फ़िद्दा वाजिब है। अलबत्ता इस बारे में इख़िलाफ़ है कि जो शख्स जान-बूझकर ऐसा करे या बग़ैर उज़्र खुशबू लगाए, उसका क्या हुक्म

is bad! He owes fidyah and can choose how to pay it. It is the same whether that is deliberate or accidental, due to necessity or not.' Abu Hanifah, ash-Shafi i, their people, and Abu Thawr say that there is no choice except when it was due to necessity, based on this ayah. So when he shaves his head deliberately or puts on perfume deliberately without an excuse, then he has no choice and only owes a sacrifice. They disagree about someone who does that out of forgetfulness. Malik said that the one who does it deliberately or does it forgetfully are the same with respect to the obligation of fidyah. That is also the view of Abu Hanifah, ath-Thawri and al-Layth. Ash-Shafi i has two views about it. One is that he owes no fidyah and that is the view of Dawud and Ishaq. The second view is that he owes fidyah.	है। इमाम मालिक ने कहा: "उसने बुरा काम किया! उस पर फ़िद्या लाज़िम है और वह उसकी अदायगी में इख़्तियार रखता है, ख़्वाह उसने यह काम जान-बूझकर किया हो या भूलकर, ज़रूरत की वजह से हो या बग़ैर ज़रूरत के।" जबकि इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम शाफ़ई, उनके अस्थाब और अबू थौर का कहना है कि इख़्तियार सिर्फ़ उस सूरत में है जब यह काम ज़रूरत के तहत किया गया हो, जैसा कि इस आयत से इस्तिदलाल किया जाता है। लिहाज़ा अगर कोई शख्स जान-बूझकर सर मुंडवा ले या बिला उज़्र खुशबू इस्तेमाल करे तो उसे कोई इख़्तियार नहीं, बल्कि उस पर सिर्फ़ कुर्बानी लाज़िम होगी। और जो शख्स भूलकर ऐसा करे, उसके बारे में भी इख़्तिलाफ़ है। इमाम मालिक के नज़दीक जान-बूझकर करने वाला और भूलकर करने वाला, दोनों पर फ़िद्या वाजिब होने के एतिबार से बराबर हैं। यही राय इमाम अबू हनीफ़ा, सुफ़यान सौरी और लैथ बिन सअद की भी है। जबकि इमाम शाफ़ई के इस बारे में दो क़ौल हैं: एक यह कि उस पर कोई फ़िद्या नहीं, और यही राय दाऊद ज़ाहिरी और
--	--

	इसहाक बिन राहविया की है; और दूसरा क़ौल यह है कि उस पर फ़िद्या लाज़िम होगा।
Most scholars oblige fidyah for a man in ihram who wears stitched clothing, covers all or part of his head, wears leather socks, cuts his nails, touches perfume, and removes harm. That is also the case if he shaves his body or daubs it, or shaves cupping sites. A woman is like a man in that respect. She must pay fidyah for using kohl, even if there is no perfume in it. A man may use kohl if there is no perfume in it. A woman owes fidyah if she covers her face or wears gloves. The intentional, forgetful and ignorant are the same regarding that. Some scholars oblige a sacrifice for people who do any of those things. Dawud said that they owe nothing for shaving body hair.	ज़्यादातर उलमा के नज़दीक जो शख्स हालत-ए-इहराम में हो और सिले हुए कपड़े पहने, अपने सर को पूरा या कुछ हिस्सा ढाँपे, चमड़े के मोज़े पहने, नाखून काटे, खुशबू लगाए या किसी तकलीफ़ को दूर करने के लिए कोई अमल करे, उस पर फ़िद्या वाजिब होता है। इसी तरह अगर वह अपने जिस्म के बाल मुंडवाए या साफ़ करे, या हिजामा की जगहों के बाल मुंडवाए तो भी उस पर फ़िद्या लाज़िम है। औरत भी इस हुक्म में मर्द की तरह है। अगर वह सुरमा इस्तेमाल करे तो उस पर फ़िद्या वाजिब होगा, चाहे उसमें खुशबू न हो। मर्द के लिए सुरमा इस्तेमाल करना जायज़ है बशर्ते कि उसमें खुशबू न हो। औरत पर इस सूरत में भी फ़िद्या लाज़िम है अगर वह अपना चेहरा ढाँपे या दस्ताने पहने। जान-बूझकर, भूलकर या नादानी में करने वाले सब इस हुक्म में बराबर हैं। कुछ उलमा का कहना है कि इनमें से कोई भी काम करने वाले पर कुर्बानी लाज़िम है। जबकि दाऊद के

	नज़दीक जिस्म के बाल मुंडवाने पर कुछ भी लाज़िम नहीं होता।
Scholars disagree about the place where this fidyah should take place. ‘Ata’ said, ‘Sacrifices should be done in Makkah, while feeding or fasting can be done whenever the person wishes.’ The same is stated by the People of Opinion. Al-Hasan said that sacrificing must be done in Makkah. Tawus and ash-Shafi i said that both feeding and sacrificing may only be done in Makkah, while fasting can be done wherever one wishes, because the people of the Haram get no benefit from fasting. Allah Almighty says: ‘a sacrifice to reach the Kabah.’ It is a comfort for poor people in the vicinity of His House. Feeding is beneficial there which is not the case with fasting. Allah knows best. Malik said, ‘He can do that wherever he wishes.’ It is a sound view and it is the view of Mujāhid. According to Malik	उलमा के दरमियान इस बात में इख़्तिलाफ़ है कि यह फ़िद्या कहाँ अदा किया जाए। अता बिन अबी रबाह ने कहा: “कुर्बानी मक्का में होनी चाहिए, जबकि खाना खिलाना या रोज़े रखना आदमी जहाँ चाहे कर सकता है।” यही बात अहल-ए-राय ने भी कही है। हसन बसरी ने कहा कि कुर्बानी लाज़िमन मक्का में होनी चाहिए। तावूस बिन कैसान और इमाम शाफ़ई का कहना है कि खाना खिलाना और कुर्बानी दोनों सिर्फ़ मक्का में ही होनी चाहिएँ, जबकि रोज़े कहीं भी रखे जा सकते हैं, क्योंकि अहल-ए-हरम को रोज़ों से कोई फ़ायदा नहीं होता। अल्लाह तआला फ़रमाता है: “कुर्बानी जो काबा तक पहुँचे।” यानी यह अल्लाह के घर के आस-पास के मुहताजों के लिए एक सहूलत है। खाना खिलाना वहाँ फ़ायदेमंद है, जबकि रोज़े इस तरह फ़ायदा नहीं देते। और अल्लाह बेहतर जानता है। इमाम मालिक ने कहा: “वह जहाँ चाहे यह अदा कर सकता है।” यह एक मज़बूत राय है और यही मुजाहिद बिन जब्र का क़ौल

slaughtering is a practice but a sacrifice is not, based on the text of the Quran and the Sunna. Practices can be done anywhere but sacrifices may only be done at Makkah. Part of his argument is what is related from Yahya ibn Said in the Muwatta': 'Ali ibn Abi Tālib ordered that Husayn's head should be shaved and then he offered a sacrifice on his behalf, killing a camel for him.' Malik said that Yahya ibn Sa id said, 'Husayn had set out with 'Uthman on that particular journey to Makkah.'	भी है। इमाम मालिक के नज़दीक ज़बह करना एक अमल है जबकि "हदी" (कुर्बानी) एक मखसूस इबादत है, कुरआन व सुन्नत की नस्स की बुनियाद पर। आमाल कहीं भी किए जा सकते हैं, लेकिन हदी सिर्फ़ मक्का में ही अदा की जा सकती है। उनकी दलील में से एक वह रिवायत है जो यहा बिन सईद ने मुवत्ता इमाम मालिक में नक़ल की है कि अली बिन अबी तालिब ने हुसैन बिन अली का सर मुंडवाने का हुक्म दिया, फिर उनकी तरफ़ से कुर्बानी दी और उनके लिए एक ऊँट ज़बह किया। इमाम मालिक ने कहा कि यहा बिन सईद ने बयान किया: "हुसैन इस सफ़र में उस्मान बिन अफ़फ़ान के साथ मक्का की तरफ़ रवाना हुए थे।"
This is the clearest evidence that fidyah for injury can be fulfilled outside of Makkah. If the sacrifice is slaughtered in the Haram, Malik permits it to be given to people outside of the Haram, since the object of it is to feed poor Muslims. Malik said, 'Since it is permitted to do the fast outside the Haram, it is also permitted	यह इस बात की सबसे वाज़ेह दलील है कि ज़ख़्म या तकलीफ़ के सबब दिया जाने वाला फ़िद्या मक्का के बाहर भी अदा किया जा सकता है। अगर कुर्बानी हरम में ज़बह की जाए तो इमाम मालिक के नज़दीक उसे हरम के बाहर के लोगों को भी दिया जा सकता है, क्योंकि इसका मक़सद मुहताज मुसलमानों को खाना खिलाना है। इमाम मालिक ने कहा:

to feed other than the people of the Haram.’ Allah’s words: ‘If any of you are ill...’, clarify the proof of what we have said. In this ayah, He does not mention a specific place. So the literal meaning is that wherever a person does that, it satisfies the requirement. Allah uses ‘nusuk’ as a term for what is slaughtered and the Messenger of Allah also used that term for it rather than saying ‘hady’. Therefore we are not obliged to treat it as analogous to ‘hady’ nor designate it as such in spite of what has come about that from ‘Ali. Furthermore, when the Prophet commanded Ka’b to do fidyah, he was not in the Haram and therefore it is valid for all of that to take place outside of the Haram. The same as this is related from ash-Shafi i.	“जब रोज़ा हरम के बाहर रखना जायज़ है तो हरम के अलावा लोगों को खाना खिलाना भी जायज़ है।” अल्लाह तआला का यह फ़रमान: “अगर तुम में से कोई बीमार हो...” हमारे बयान किए गए मौक़िफ़ की दलील को वाज़ेह करता है। इस आयत में किसी ख़ास जगह का ज़िक्र नहीं किया गया, लिहाज़ा इसका ज़ाहिर मफ़हूम यही है कि जहाँ भी कोई शख्स यह अदा करे, वह काफ़ी होगा। अल्लाह तआला ने “नुसुक” का लफ़्ज़ उस चीज़ के लिए इस्तेमाल किया है जो ज़बह की जाए, और रसूल अल्लाह ने भी इसी लफ़्ज़ को इस्तेमाल किया है, न कि “हदी” का। लिहाज़ा हम इसे “हदी” पर क्रियास करने या उसे उसी के हुक्म में रखने के पाबंद नहीं, अगरचे अली बिन अबी तालिब से इसके मुतअल्लिक कुछ मनकूल है। मज़ीद बरआँ, जब रसूल अल्लाह ने काब बिन उजरह को फ़िद्या अदा करने का हुक्म दिया तो वे हरम में नहीं थे, लिहाज़ा इससे साबित होता है कि यह तमाम उमूर हरम के बाहर भी अंजाम दिए जा सकते हैं। इसी तरह का क़ौल इमाम शाफ़ई से भी मनकूल है।
--	--

‘Nusuk’ is the plural of nasikah which is a slaughtered animal that someone offers (nasaka) to Allah. Nusk is basic worship. An example of that usage is Allah’s words: ‘Show us our rites (manasik).’ It is said that the linguistic root of nusk is washing and the verb is used for washing a garment. So it is as if a person washes himself of the filth of sins by worship. It is also said that nask are silver ingots, each of which is nasikah.	“नुसुक” दरअसल “नसीकह” की जमअ है, और नसीकह उस जानवर को कहा जाता है जिसे कोई शख्स अल्लाह के लिए ज़बह (नसक) करता है। “नुसुक” का अस्ल मानी इबादत है। इसकी मिसाल अल्लाह तआला के इस फ़रमान में है: “हमें हमारे मनासिक दिखा दे।” यह भी कहा जाता है कि “नुसुक” की लुगवी अस्ल धोना है, और यह फ़ेल कपड़ा धोने के लिए भी इस्तेमाल होता है। गोया इंसान इबादत के ज़रिए अपने आप को गुनाहों की आलूदगी से पाक करता है। यह भी कहा गया है कि “नसक” चांदी के ढले हुए टुकड़ों को कहते हैं, जिन में से हर एक को “नसीकह” कहा जाता है।
It is said that the words ‘when you are safe’ mean ‘when you have recovered from your illness’. It is said that they mean ‘safe from fear of the enemy’, as Ibn ‘Abbas and Qatadah said. That is more in keeping with the expression used, because no one can ever be free from fear of illness to the extent that it is possible to feel entirely safe from it, and	कहा जाता है कि “जब तुम अम्र में हो जाओ” से मुराद है “जब तुम अपनी बीमारी से सेहतयाब हो जाओ।” और यह भी कहा गया है कि इससे मुराद है “दुश्मन के ख़ौफ़ से महफूज़ हो जाना”, जैसा कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास और क़तादा ने कहा है। यह दूसरा मफ़हूम इबारत के ज़्यादा मुताबिक़ है, क्योंकि कोई शख्स बीमारी के ख़ौफ़ से इस हद तक कभी आज़ाद नहीं हो सकता कि वह

Allah knows best.	खुद को मुकम्मल तौर पर उससे महफूज़ समझे, और अल्लाह बेहतर जानता है।
Anyone who comes out of ihram between 'umrah and hajj should make whatever sacrifice is feasible.	जो शख्स उमरा और हज के दरमियान एहराम से बाहर आ जाए, उस पर लाज़िम है कि जो भी कुर्बानी उसके लिए मुमकिन हो, वह करे।
Scholars disagree about who is being referred to in this phrase. 'Abdullah ibn az-Zubayr, 'Alqamah and Ibrahim say that the ayah is about those who are forcibly prevented and cannot go on. According to Ibn az-Zubayr the situation referred to is when someone is held up until he misses the hajj and then reaches the House after it has passed and assumes ihram for 'umrah and then performs hajj in the following year to make up for the one he missed. This joins his 'umrah to the hajj of making up. Others say that the situation referred to is	इस जुमले में किस की तरफ़ इशारा है, इस बारे में उलमा के दरमियान इख़िलाफ़ है। अब्दुल्लाह बिन जुबैर, अलक़मा बिन क़ैस और इब्राहीम नखई कहते हैं कि यह आयत उन लोगों के बारे में है जो ज़बरदस्ती रोक दिए जाएँ और आगे न जा सकें। अब्दुल्लाह बिन जुबैर के नज़दीक इससे मुराद वह सूरत है कि कोई शख्स इतना रोक लिया जाए कि उसका हज फ़ौत हो जाए, फिर वह बैतुल्लाह पहुँचे जब हज का वक़्त गुज़र चुका हो, तो वह उमरा का एहराम बाँधे, और अगले साल अपने फ़ौतशुदा हज की क़ज़ा के लिए हज करे। इस तरह उसका उमरा उसके क़ज़ा वाले हज के साथ मिल जाता है।

when someone is detained and then delays 'umrah until the following year and does it in the months of hajj and performs hajj in the same year. Ibn 'Abbas and others said that this ayah is about both those who are barred and others who are able to continue.	कुछ दूसरे उलमा कहते हैं कि इससे मुराद वह सूरत है कि किसी को रोक लिया जाए, फिर वह उमरा को अगले साल तक मुअख़्खर कर दे, और उसे हज के महीनों में अदा करे, और उसी साल हज भी करे। अब्दुल्लाह बिन अब्बास वगैरह का कहना है कि यह आयत उन लोगों दोनों के बारे में है जो रोके गए हों और उन के बारे में भी जो आगे बढ़ने की इस्तिताअत रखते हों।
There is no disagreement among scholars that hajj involving a temporary removal of ihram (tamattu), hajj on its own (ifrad) and hajj and 'umrah combined (qiran) are all permitted because Prophet declared himself happy with all of them. He did not object to the hajj of any of his Companions, but allowed it for them and was pleased with them. Scholars do, however, disagree about which of them the Messenger of Allah adopted when performing his own hajj and which is the best, all based on different hadiths that have been reported. Some, including	इस बात पर उलमा के दरमियान कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि तमत्तु (एहराम से वक़्ती तौर पर निकल कर हज करना), इफ़राद (सिर्फ़ हज करना) और क़िरान (हज और उमरा को जमा करना) — यह सब जायज़ हैं, क्योंकि रसूल अल्लाह ने इन सब को पसंद फ़रमाया। आप ने अपने किसी सहाबी के हज पर नकीर नहीं फ़रमाई, बल्कि उन्हें इसकी इजाज़त दी और उनसे राज़ी हुए। अलबत्ता इस बात में इख़्तिलाफ़ है कि रसूल अल्लाह ने अपने हज में कौन सा तरीक़ा इख़्तियार किया और इनमें से कौन सा अफ़ज़ल है। यह इख़्तिलाफ़ मुख़्तलिफ़ मर्वी अहादीस की बुनियाद पर है। कुछ उलमा, जिन में

Malik, said that ifrad is better than qiran and qiran is better than tamattu, because the Prophet did ifrad. We find in Sahih Muslim that Aishah said, 'We went out with the Messenger of Allah and he said, "Whoever among you wants to go into ihram for hajj and umrah should do so. Whoever wants to go into ihram for hajj alone should do so. Whoever wants to go into ihram for umrah should do so." Aishah said, "The Messenger of Allah went into ihram for hajj and some people did so with him, while others assumed ihram for hajj and umrah and yet others assumed ihram for umrah. I was one of those who assumed ihram for umrah." A group related it from Hisham ibn Urwah from his father from Aishah. Some of them say that the Messenger of Allah said, "As for myself, I have assumed ihram for hajj." This is a text used in the topic of this dispute. It is the argument of those who say that ifrad is better.	इमाम मालिक भी शामिल हैं, कहते हैं कि इफ़राद अफ़ज़ल है, फिर क़िरान, और क़िरान तमत्तु से अफ़ज़ल है, क्योंकि नबी ने इफ़राद किया था। हमें सहीह मुस्लिम में आइशा सिद्दीका से रिवायत मिलती है कि उन्होंने फ़रमाया: "हम रसूल अल्लाह के साथ निकले तो आप ने फ़रमाया: 'तुम में से जो चाहे हज और उमरा दोनों का एहराम बाँधे, जो चाहे सिर्फ़ हज का एहराम बाँधे, और जो चाहे सिर्फ़ उमरा का एहराम बाँधे।'" आइशा रज़ि. कहती हैं: "रसूल अल्लाह ने हज का एहराम बाँधा, कुछ लोगों ने भी आप के साथ ऐसा किया, कुछ ने हज और उमरा दोनों का एहराम बाँधा, और कुछ ने सिर्फ़ उमरा का। मैं उन लोगों में से थी जिन्होंने उमरा का एहराम बाँधा।" इस रिवायत को एक जमाअत ने हिशाम बिन उरवा से, उन्होंने अपने वालिद उरवा बिन जुबैर से, और उन्होंने आइशा सिद्दीका से नक़ल किया है। कुछ रिवायतों में यह अल्फ़ाज़ भी हैं कि रसूल अल्लाह ने फ़रमाया: "जहाँ तक मेरा तअल्लुक है, मैंने हज का एहराम बाँधा है।" यही वह नस् है जिसे इस इख़िलाफ़ में दलील बनाया जाता है, और यह उन लोगों की दलील है जो इफ़राद को
---	---

Muhammad ibn al-Hasan related that Malik said, “Since two different hadiths have come from the Prophet, and we heard that Abu Bakr and Umar acted on one of the two hadiths and left the other, that provides evidence that truth lies in what they did.” Abu Thawr also preferred ifrad and thought it better than tamattu and qiran. It one of two positions reported from ash-Shafii and it is well known from him.	अफ़ज़ल कहते हैं। मुहम्मद बिन हसन अश-शैबानी ने रिवायत किया कि इमाम मालिक ने कहा: “जब नबी से दो मुख्तलिफ़ अहादीस मनकूल हों, और हम देखें कि अबू बक्र सिद्दीक़ और उमर बिन ख़त्ताब ने उनमें से एक पर अमल किया और दूसरी को छोड़ दिया, तो यह इस बात की दलील है कि हक़ वही है जिस पर उन्होंने अमल किया।” अबू थौर ने भी इफ़राद को तरजीह दी और उसे तमत्तु और क़िरान से अफ़ज़ल करार दिया। यही इमाम शाफ़ई के दो क़ौल में से एक है, और यही क़ौल उनसे मशहूर है।
Others prefer tamattu, because it is mentioned in the Book, and said that it is better. That is the school of Abdullah ibn Umar and Abdullah ibn az-Zubayr and is the view of Ahmad ibn Hanbal and it is the other position of ash-Shafi i. Ad-Daraqutni said, Ash-Shafii said, “I preferred ifrad, but tamattu is good and we do not dislike it.” The argument of those who prefer tamattu is found in what Muslim related	कुछ दूसरे उलमा तमत्तु को तरजीह देते हैं, क्योंकि इसका ज़िक्र कुरआन में आया है और उन्होंने कहा कि यही अफ़ज़ल है। यह अब्दुल्लाह बिन उमर और अब्दुल्लाह बिन जुबैर का मस्लक़ है, और यही राय इमाम अहमद बिन हनबल की है, और इमाम शाफ़ई का दूसरा क़ौल भी यही है। इमाम दारकुतनी ने नक़ल किया कि इमाम शाफ़ई ने कहा: “मैं इफ़राद को तरजीह देता हूँ, लेकिन तमत्तु भी अच्छा है और हम इसे नापसंद नहीं करते।” जो लोग तमत्तु

from Imran ibn Husayn who said, “The ayah of tamattu was revealed in the Book of Allah and the Messenger of Allah commanded us to do it. Then nothing was revealed to supersede it and the Messenger of Allah did not forbid us to do it before he died. Afterwards a man would say whatever he wished about it based on his own opinion.” At-Tirmidhi related from Qutaybah ibn Said from Malik ibn Anas from Ibn Shihab from Muhammad ibn Abdullah ibn al-Harith ibn Nawfal who, in the year that Muawiyah ibn Abi Sufyan made hajj, heard Sad ibn Abi Waqqas and ad-Dahhak ibn Qays mentioning tamattu, umrah joined to hajj. Ad-Dahhak ibn Qays said, ‘He only did that out of ignorance of Allah’s command!’ Sad retorted. ‘What you have said is bad, nephew!’ Ad-Dahhak said, ‘Umar ibn al-Khattab forbade that!’ Sad answered, ‘The Messenger of Allah did it and we did it with him.’ This is a	को तरजीह देते हैं, उनकी दलील वह हदीस है जो सहीह मुस्लिम में इमरान बिन हुसैन से मर्वी है। वे कहते हैं: “तमत्तु की आयत अल्लाह की किताब में नाज़िल हुई और रसूल अल्लाह ने हमें इसका हुक्म दिया। फिर इसके बाद कोई ऐसी चीज़ नाज़िल नहीं हुई जिसने इसे मंसूख किया हो, और रसूल अल्लाह ने अपनी वफ़ात से पहले हमें इससे मना भी नहीं किया। बाद में एक शख्स अपनी राय से जो चाहता कहता रहा।” इमाम तिर्मिज़ी ने कुतैबह बिन सईद से, उन्होंने इमाम मालिक से, उन्होंने इब्न शिहाब जुहरी से, उन्होंने मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन अल-हारिस से रिवायत किया कि जिस साल मुआविया बिन अबी सुफ़यान ने हज किया, उन्होंने सअद बिन अबी वक्क्रास और दहहाक बिन कैस को तमत्तु यानी उमरा को हज के साथ मिलाने के बारे में गुफ़्तगू करते सुना। दहहाक बिन कैस ने कहा: “यह काम सिर्फ़ अल्लाह के हुक्म से नावाक़िफ़ शख्स ही करता है!” इस पर सअद बिन अबी वक्क्रास ने जवाब दिया: “भतीजे! तुमने बहुत बुरी बात कही है!” दहहाक ने कहा: “उमर बिन ख़त्ताब ने इससे मना किया था!”
---	--

sound hadith.	सअद रज़ि. ने जवाब दिया: “रसूल अल्लाह ने खुद यह किया और हमने भी आप के साथ किया था।” यह एक सहीह हदीस है।
Ibn Ishaq related from az-Zuhri that Salim said, ‘I was sitting in the mosque with Ibn Umar when a man from Syria came and asked him about tamattu. Ibn Umar said, “Fine and good.” The man said, “Your father used to forbid it.” Ibn Umar retorted, “Woe to you! If my father forbade it, the Messenger of Allah did it and commanded it to be done. Should I take the position of my father or the command of the Messenger of Allah? Leave me.” Ad-Daraqutni transmitted it, and Abu Isa at-Tirmidhi i transmitted it from the hadith of Salih ibn Kaysan from Ibn Shihab from Salim. It is related from Layth from Tawus that Ibn Abbas said, ‘The Messenger of Allah, Abu Bakr, Umar and Uthman performed tamattu. Muawiyah was the first to forbid it.’ It is a hasan	इब्न इस्हाक ने इब्न शिहाब जुहरी से रिवायत किया कि सालिम बिन अब्दुल्लाह ने कहा: “मैं मस्जिद में अब्दुल्लाह बिन उमर के साथ बैठा था कि शाम का एक आदमी आया और उसने उनसे तमत्तु के बारे में पूछा। अब्दुल्लाह बिन उमर ने कहा: ‘यह अच्छा और दुरुस्त है।’ उस आदमी ने कहा: ‘आप के वालिद इससे मना करते थे।’ इस पर अब्दुल्लाह बिन उमर ने कहा: ‘तुम पर अफ़सोस! अगर मेरे वालिद ने इसे मना किया था तो रसूल अल्लाह ने खुद यह किया और इसका हुक्म दिया। क्या मैं अपने वालिद की बात मानूँ या रसूल अल्लाह के हुक्म को इस्तिथार करूँ? मुझे छोड़ दो।’” इस रिवायत को इमाम दारकुतनी ने नक़ल किया है, और इमाम तिर्मिज़ी ने भी इसे सालेह बिन कैसान के तरीक़ से इब्न शिहाब जुहरी से, और उन्होंने सालिम बिन अब्दुल्लाह से रिवायत किया है। इसी तरह लैस बिन अबी सुलैम ने तावूस बिन कैसान से

hadith. Abu Umar said that this hadith of Layth is munkar. He is Layth ibn Abi Sulaym and is weak. What is well known is that Umar and Uthman forbade tamattu.	रिवायत किया कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने कहा: "रसूल अल्लाह, अबू बक्र सिद्दीक़, उमर बिन खत्ताब और उस्मान बिन अफ़्फ़ान सब ने तमत्तु किया, और मुआविया बिन अबी सुफ़यान वह पहले शख्स थे जिन्होंने इससे मना किया।" यह हदीस हसन है। अबू उमर ने कहा कि लैस की यह रिवायत मुनकर है, क्योंकि वह लैस बिन अबी सुलैम हैं और ज़ईफ़ हैं। मशहूर बात यह है कि उमर बिन खत्ताब और उस्मान बिन अफ़्फ़ान ने तमत्तु से मना किया था।
One group of scholars claim that the form of tamattu that Umar forbade and nullified was to add hajj to umrah. That was not the case in adding umrah to hajj. Those who say that it is correct that Umar forbade tamattu state that he forbade it so that people would seek their provision at the House twice or more in the same year so that there would be more visitors to it outside the Festival. He wanted to be kind to the people of the Haram in respect of people's visits, to bring about	उलमा के एक गिरोह का कहना है कि तमत्तु की वह सूरत जिसे उमर बिन खत्ताब ने मना किया और मंसूख करार दिया, वह यह थी कि हज को उमरा के साथ मिलाया जाए (यानी उमरा के बाद हज किया जाए)। जबकि हज के साथ उमरा को मिलाना (क्रिरान) इसमें शामिल नहीं था। जो लोग यह कहते हैं कि उमर बिन खत्ताब ने तमत्तु से मना किया, वे बयान करते हैं कि उन्होंने इसलिए मना किया ताकि लोग साल में एक या दो मर्तबा बैतुल्लाह का रुख करें, ताकि ईद के अय्याम के अलावा भी वहाँ ज़्यादा लोग आएँ। वे अहल-ए-

the supplication of Ibrahim: ‘Make the hearts of mankind incline towards them.’ Others say that he forbade it because he saw that people were inclining to tamattu because it was easy and he feared that ifrad and qiran would be lost when they are two sunnahs of the Prophet. In defence of his preference for tamattu, Ahmad cited the words of the Prophet: ‘Had I known what I know now, I would not have brought sacrificial camels and I would have made it umrah.’ The imams have transmitted it.	हरम के साथ लोगों की आमद-ओ-रफ़्त के हवाले से नरमी चाहते थे, ताकि इब्राहीम अलैहिस्सलाम की इस दुआ की तकमील हो: “लोगों के दिलों को उनकी तरफ़ माइल कर दे।” कुछ दूसरे कहते हैं कि उन्होंने इसलिए मना किया कि उन्होंने देखा कि लोग तमत्तु की तरफ़ माइल हो रहे हैं क्योंकि यह आसान है, और उन्हें अंदेशा था कि इफ़राद और क़िरान, जो कि नबी की दो सुन्नतें हैं, कहीं तर्क न हो जाएँ। अपनी तरफ़ से तमत्तु की तरजीह के दिफ़ा में इमाम अहमद बिन हनबल ने नबी करीम के इस फ़रमान से इस्तिदलाल किया: “अगर मुझे पहले वह बात मालूम होती जो अब मालूम हुई है, तो मैं कुर्बानी के जानवर साथ न लाता और इसे उमरा बना देता।” इस रिवायत को अइम्मा ने नक़ल किया है।
Others prefer qiran, and they include Abu Hanifah and ath-Thawri. Al-Muzani said that the reason for that it is that it is performing two obligations together. That is what Ishaq said. Ishaq said, ‘The Messenger of Allah did qiran, and it is the position of Ali ibn	कुछ दूसरे उलमा क़िरान को तरजीह देते हैं, और उनमें इमाम अबू हनीफ़ा और सुफ़यान सौरी शामिल हैं। इमाम मुज़नी ने कहा कि इसकी वजह यह है कि इसमें दो फ़र्ज़ इबादतें एक साथ अदा की जाती हैं, और यही बात इस्हाक बिन राहविया ने भी कही है। इस्हाक बिन राहविया ने कहा: “रसूल

Abī Tālib. The argument for those who recommend and prefer qiran is what al-Bukhari related from Umar ibn al-Khaṭṭāb. He said, ‘I heard the Messenger of Allah say in the valley of Aqiq, “In the night someone came to me from my Lord and said, ‘Pray in this blessed valley and say, ‘Umrah in hajj.’ At-Tirmidhi related that Anas heard the Messenger of Allah say, ‘At Your service for umrah and hajj.’ He said that it is a sound hasan hadith.	अल्लाह ने क़िरान किया था, और यही अली बिन अबी तालिब का भी मौक़िफ़ है।” जो लोग क़िरान को मुस्तहब और अफ़ज़ल करार देते हैं, उनकी दलील वह हदीस है जो सहीह बुखारी में उमर बिन ख़त्ताब से मर्वी है। वे कहते हैं: “मैंने रसूल अल्लाह को वादी अकीक़ में यह फ़रमाते हुए सुना: ‘आज रात मेरे रब की तरफ़ से एक आने वाला आया और उसने कहा: इस मुबारक वादी में नमाज़ पढ़ो और कहो: उमरा हज के साथ है।” इसी तरह इमाम तिर्मिज़ी ने रिवायत किया कि अनस बिन मालिक ने रसूल अल्लाह को यह फ़रमाते हुए सुना: “लब्बैक उमरा और हज के साथ।” उन्होंने कहा कि यह हदीस हसन सहीह है।
Abu Umar said, ‘Allah willing, ifrad is better because the Messenger of Allah did ifrad. That is why we say that ifrad is better. The traditions about his ifrad are sounder because ifrad has more actions and umrah is another action.’ Abu Jafar an-Nahhas said, ‘Ifrad has more followers than tamattu because one remains in ihram. That has	अबू उमर ने कहा: “इंशा अल्लाह इफ़राद अफ़ज़ल है, क्योंकि रसूल अल्लाह ने इफ़राद किया था, इसी लिए हम कहते हैं कि इफ़राद अफ़ज़ल है। आप के इफ़राद से मुतअल्लिक़ रिवायतें ज़्यादा मज़बूत हैं, क्योंकि इफ़राद में आमाल ज़्यादा हैं और उमरा एक अलग इबादत है।” अबू जाफ़र नहहास ने कहा: “इफ़राद के मानने वाले तमत्तु से ज़्यादा हैं,

a greater reward.’ The way that the hadiths are brought into agreement with one another is that because the Messenger of Allah commanded ifrad and qiran, it is permitted to say that Messenger of Allah did tamattu and qiran in the same way that Allah says: ‘Pharaoh called to his people.’ Umar ibn al-Khattab said, ‘We stoned and the Messenger of Allah stoned. He commanded stoning.’	क्योंकि इसमें इंसान एहराम की हालत में बाक़ी रहता है, और इसमें ज़्यादा अज़्र है।” अहादीस के दरमियान तातबीक़ की सूरत यह है कि चूँकि रसूल अल्लाह ने इफ़राद और क़िरान दोनों का हुक्म दिया, इस लिए यह कहना जायज़ है कि रसूल अल्लाह ने तमत्तु और क़िरान किया, उसी तरह जैसे अल्लाह तआला फ़रमाता है: “फ़िरऔन ने अपनी क्रौम को पुकारा।” उमर बिन ख़त्ताब ने कहा: “हमने रमी की और रसूल अल्लाह ने भी रमी की, और आप ने रमी का हुक्म दिया।”
What is most evident is that the hajj of the Prophet was qiran. He performed qiran according to the hadiths of Umar ibn al-Khattab and Anas that we have mentioned. We find in Sahih Muslim from Bakr that Anas said, ‘I heard the Prophet say the talbiyah for hajj and umrah together.’ Bakr said, ‘I related that to Ibn Umar and he said, “He said the talbiyah for hajj alone.” I met Anas and told him what Ibn Umar had said and Anas said, “You are	सब से ज़्यादा वाज़ेह बात यह है कि रसूल अल्लाह का हज क़िरान था। आप ने क़िरान किया, जैसा कि उमर बिन ख़त्ताब और अनस बिन मालिक की उन अहादीस में आया है जिन का ज़िक्र हम कर चुके हैं। हमें सहीह मुस्लिम में बक्र बिन अब्दुल्लाह से रिवायत मिलती है कि अनस बिन मालिक ने कहा: “मैंने नबी को हज और उमरा दोनों के लिए तलबिया कहते हुए सुना।” बक्र कहते हैं: “मैंने यह बात अब्दुल्लाह बिन उमर को बताई तो उन्होंने कहा: ‘उन्होंने सिर्फ़ हज के लिए तलबिया कहा था।’ फिर

treating us as children! I heard the Messenger of Allah say, ‘At Your service for umrah and hajj!’” We also find in Sahih Muslim that Ibn Abbas said, ‘The Prophet adopted ihram for umrah and the people adopted ihram for hajj. Neither the Prophet nor his Companions who had brought sacrificial camels came out of ihram while the rest of them did.’ Some of the people of knowledge say that the Messenger of Allah did qiran. When he did qiran, he did hajj and umrah. Therefore the hadiths agree.	मैं अनस बिन मालिक से मिला और उन्हें अब्दुल्लाह बिन उमर की बात बताई, तो उन्होंने कहा: ‘तुम हमें बच्चों की तरह समझते हो! मैंने रसूल अल्लाह को यह कहते हुए सुना: “लब्बैक उमरा और हज के साथ!” सी तरह सहीह मुस्लिम में अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत है कि उन्होंने कहा: “नबी ने उमरा का एहराम बाँधा और लोगों ने हज का एहराम बाँधा। नबी और आप के वह सहाबा जिन के पास कुर्बानी के जानवर थे, एहराम से बाहर नहीं आए, जबकि बाकी लोग बाहर आ गए।” कुछ अहल-ए-इल्म का कहना है कि रसूल अल्लाह ने क़िरान किया था। जब आप ने क़िरान किया तो आपने हज और उमरा दोनों अदा किए, लिहाज़ा इस तरह तमाम अहादीस में तातबीक़ हो जाती है।
An-Nahhas said, ‘Part of the best of what is said about this is that the Messenger of Allah adopted ihram for umrah and those who saw him said, “He is performing tamattu.” Then he adopted ihram for hajj and those who saw him said, “He is performing ifrad.” Then he said, “At Your service for hajj	अबू जाफ़र नह्हास ने कहा: “इस मसले में बेहतरीन बातों में से एक यह है कि रसूल अल्लाह ने उमरा का एहराम बाँधा तो जिन लोगों ने आप को देखा उन्होंने कहा: ‘आप तमत्तु कर रहे हैं।’ फिर आप ने हज का एहराम बाँधा तो जिन्होंने आप को देखा उन्होंने कहा: ‘आप इफ़राद कर रहे हैं।’ फिर आप ने फ़रमाया:

and umrah.” Those who heard him said, “Qiran.” So the hadiths agree. The evidence for this is that no one related that the Prophet said, “I did hajj ifrad” or “I did tamattu.” It is, however, valid that he said, “I did qiran,” as an-Nasa i related from Ali. He said, ‘I went to the Messenger of Allah and he asked me, “What did you do?”’ I answered, “I adopted ihram according to your ihram.” He said, “I have brought sacrificial camels and am doing qiran.” He said that he remarked to his Companions, “Had I known what I know now, I would have done what you did, but I have brought sacrificial camels and am performing qiran.” It is confirmed that Hafsah said, ‘I said, “Messenger of Allah, why have people come out of their ihram when you have not?”’ He answered, “I matted my hair and drove my sacrificial animals and so I will not come out of ihram until you slaughter.”’ This makes it clear that he was doing qiran because	‘लब्बैक हज और उमरा के साथ।’ तो जिन्होंने यह सुना उन्होंने कहा: ‘यह क़िरान है।’ इस तरह तमाम अहादीस में तातबीक़ हो जाती है। इसकी दलील यह है कि किसी ने यह रिवायत नहीं किया कि नबी ने फ़रमाया हो: ‘मैंने इफ़राद किया’ या ‘मैंने तमत्तु किया।’ अलबत्ता यह साबित है कि आप ने फ़रमाया: ‘मैंने क़िरान किया’ जैसा कि इमाम नसाई ने अली बिन अबी तालिब से रिवायत किया है। वह कहते हैं: “मैं रसूल अल्लाह के पास आया तो आप ने मुझ से पूछा: ‘तुम ने क्या किया?’ मैंने अर्ज़ किया: ‘मैंने आप के एहराम के मुताबिक़ एहराम बाँधा है।’ आप ने फ़रमाया: ‘मैं कुर्बानी के जानवर साथ लाया हूँ और क़िरान कर रहा हूँ।’” फिर आप ने अपने सहाबा से फ़रमाया: “अगर मुझे पहले वह बात मालूम होती जो अब मालूम हुई है तो मैं भी वही करता जो तुम ने किया, लेकिन मैं कुर्बानी के जानवर साथ लाया हूँ और क़िरान कर रहा हूँ।” और यह भी साबित है कि हफ़्सा बिनत उमर ने कहा: “मैंने अर्ज़ किया: ‘या रसूल अल्लाह! लोग एहराम से बाहर आ गए हैं और आप नहीं आए?’ आप ने फ़रमाया: ‘मैंने अपने
--	--

if he had been doing tamattu or ifrad, he would not have been prevented from slaughtering the sacrifices.	बालों को जमा लिया है और अपनी कुर्बानी के जानवर साथ लाया हूँ, इसलिए मैं उस वक्त तक एहराम से बाहर नहीं आऊँगा जब तक कुर्बानी न कर लूँ।” इससे वाज़ेह होता है कि आप क़िरान कर रहे थे, क्योंकि अगर आप तमत्तु या इफ़राद कर रहे होते तो कुर्बानी करने से पहले एहराम से बाहर आने से नहीं रोके जाते।
An-Nahhas mentioned that no one related that the Prophet said, ‘I did hajj ifrad,’ while it is related that Aishah said that he said, ‘I have assumed ihram for hajj.’ This means that he was doing ifrad although it is possible that he had assumed ihram for umrah and then said, ‘I have assumed ihram for hajj.’ Part of what clarifies this is what Muslim related from Ibn Umar: ‘The Messenger of Allah began and adopted ihram for umrah and then adopted ihram for hajj.’ So his words about adopting ihram for hajj are not evidence for ifrad. His words, ‘I am doing qiran’ remain. Anas, his servant, said that he heard him say, ‘At Your	अबू जाफ़र नह्हास ने ज़िक्र किया कि किसी ने यह रिवायत नहीं किया कि रसूल अल्लाह ने फ़रमाया हो: “मैंने हज इफ़राद किया”, जबकि आइशा सिद्दीका से रिवायत है कि आप ने फ़रमाया: “मैंने हज का एहराम बाँधा है।” इसका मतलब यह लिया जा सकता है कि आप इफ़राद कर रहे थे, अगरचे यह भी मुमकिन है कि आप ने पहले उमरा का एहराम बाँधा हो, फिर फ़रमाया हो: “मैंने हज का एहराम बाँधा है।” इसकी वज़ाहत उस रिवायत से होती है जो सहीह मुस्लिम में अब्दुल्लाह बिन उमर से मर्वी है कि: “रसूल अल्लाह ने इब्तिदा में उमरा का एहराम बाँधा, फिर हज का एहराम बाँधा।” लिहाज़ा आप का हज के एहराम का ज़िक्र करना इफ़राद की क़तई दलील नहीं बनता।

service for hajj and umrah together.’ This is a clear text for qiran not subject to interpretation. Ad-Daraqutni related from Abdullah ibn Abi Qatadah that his father said, ‘The Messenger of Allah combined hajj and umrah because he knew that he would not perform hajj after that.’	जबकि आप का यह फ़रमान बाक़ी रहता है: “मैं क़िरान कर रहा हूँ।” और अनस बिन मालिक जो आप के खादिम थे, उन्होंने बयान किया कि उन्होंने आप को यह कहते हुए सुना: “लब्बैक हज और उमरा दोनों के साथ।” यह क़िरान की वाज़ेह नस् है जिसमें किसी तावील की गुंजाइश नहीं। इमाम दारकुतनी ने अब्दुल्लाह बिन अबी क़तादा के वासिते से उनके वालिद अबू क़तादा अंसारी से रिवायत किया कि उन्होंने कहा: “रसूल अल्लाह ने हज और उमरा को इस लिए जमा किया क्योंकि आप जानते थे कि इसके बाद आप हज नहीं करेंगे।”
As we stated, ifrad, tamattu and qiran are all permitted by consensus. According to scholars, there are four forms of tamattu. There is agreement about one of them and disagreement about the other three. The one on which there is agreement is the tamattu meant by the words of the Almighty: ‘Anyone who comes out of ihram between umrah and hajj should make whatever	जैसा कि हम ने बयान किया, इफ़राद, तमत्तु और क़िरान सब इज्मा के साथ जायज़ हैं। उलमा के नज़दीक तमत्तु की चार सूरतें हैं। उन में से एक पर इत्तिफ़ाक़ है जबकि बाकी तीन में इख़िलाफ़ है। जिस सूरत पर इत्तिफ़ाक़ है वह वही तमत्तु है जिसका ज़िक्र अल्लाह तआला के इस फ़रमान में है: “जो शख्स उमरा और हज के दरमियान एहराम से बाहर आ जाए, वह जो भी कुर्बानी मयस्सर हो अदा करे।” इसकी सूरत

sacrifice is feasible.’ That is when a man adopts ihram for umrah in the months of hajj, as will be explained, and is not from Makkah. He comes to Makkah and finishes it and then remains in Makkah, not in ihram, until the hajj begins in that year before he has returned home or before he goes to the miqat of the people of his region. When he does that, he is performing tamattu and owes what Allah has obliged for someone performing tamattu: a feasible sacrifice which he slaughters and gives to the poor at Mina or Makkah. If he cannot do that, then he fasts for three days and seven when he returns home. There is consensus that he does not fast on the Day of Sacrifice. There is disagreement about fasting the days of Tashriq.	यह है कि कोई शख्स हज के महीनों में उमरा का एहराम बाँधे — जैसा कि आगे बयान होगा — और वह मक्का का रहने वाला न हो। वह मक्का आए, उमरा मुकम्मल करे, फिर उसी साल हज शुरू होने तक मक्का में बगैर एहराम के मुक्रीम रहे, इससे पहले कि वह अपने घर लौटे या अपने इलाके के मीकात की तरफ़ वापस जाए। जब वह ऐसा करे तो वह तमत्तु करने वाला शुमार होगा, और उस पर वही लाज़िम होगा जो अल्लाह ने तमत्तु करने वाले पर लाज़िम किया है: यानी एक मुमकिन कुर्बानी, जिसे वह मिना या मक्का में ज़बह करे और फुकरा में तक़सीम करे। अगर वह इसकी इस्तिताअत न रखता हो तो तीन दिन के रोज़े रखे और सात दिन जब अपने घर वापस जाए। इस बात पर इज्मा है कि वह कुर्बानी के दिन (यौम-उन-नहर) रोज़ा नहीं रखेगा। अलबत्ता अय्याम-ए-तशरीक़ के रोज़ों के बारे में इख़्तिलाफ़ है।
This is the consensus of the people of knowledge, past and present, about tamattu. It has eight preconditions. The first is that someone combines hajj	यह तमत्तु के बारे में अहल-ए-इल्म, क़दीम व जदीद, सब का इज्मा है। इसके आठ शर्ते हैं: पहली यह कि आदमी हज और उमरा को जमा

and umrah. The second is that it is on the same journey. The third is that is in the same year. The fourth is that it is in the months of hajj. The fifth is that umrah is done first. The sixth is that it is not mixed, but the ihram for hajj comes after finishing umrah. The seventh is that both umrah and hajj are for the same person, and the eighth is that he is not from Makkah. If you reflect, you will see that these are preconditions for the ruling of tamattu.	करे। दूसरी यह कि दोनों एक ही सफ़र में हों। तीसरी यह कि वह एक ही साल में हों। चौथी यह कि वह हज के महीनों में हों। पाँचवीं यह कि पहले उमरा किया जाए। छठी यह कि दोनों को खल्ल-मल्ल न किया जाए, बल्कि उमरा मुकम्मल करने के बाद हज का एहराम बाँधा जाए। सातवीं यह कि उमरा और हज दोनों एक ही शख्स की तरफ़ से हों। आठवीं यह कि वह मक्का का रहने वाला न हो। अगर तुम ग़ौर करो तो वाज़ेह होगा कि यह सब तमत्तु के हुक्म के लिए शर्तें हैं।
The second form of tamattu is basically qiran. It is that someone combines them in the same ihram and assumes ihram for both of them together in the months of hajj or some other time. He says, ‘At Your service for both hajj and umrah.’ When he reaches Makkah, he does one tawaf for his hajj and umrah and one say for both according to those who think that it can be done. They are Malik, ash-Shafi i and their people, Ishaq and Abu Thawr.	तमत्तु की दूसरी सूरत दरअसल क़िरान है। इससे मुराद यह है कि कोई शख्स एक ही एहराम में हज और उमरा दोनों को जमा करे और दोनों के लिए एक साथ एहराम बाँधे, ख़्वाह यह हज के महीनों में हो या किसी और वक़्त। वह कहे: “लब्बैक हज और उमरा दोनों के लिए।” जब वह मक्का पहुँचे तो वह एक ही तवाफ़ हज और उमरा दोनों के लिए करे और एक ही सई दोनों के लिए काफ़ी होगी, उन उलमा के नज़दीक जो इसके क़ाइल हैं। उनमें इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई और उनके

It is the school of Abdullah ibn Umar, Jabir ibn Abdullah, Ata' ibn Abi Rabah, al-Hasan, Mujahid and Tawus, based on the hadith of Aishah: 'We went out with the Messenger of Allah on the Farewell Hajj and we adopted ihram for umrah...' It says in it, 'Those who combined hajj and umrah did one tawaf.' Al-Bukhari transmitted it. On the Day of Nahr, he said to Aishah when she had not done tawaf of the House and menstruated, 'Your tawaf and say are for both your hajj and umrah.' One variant has: 'Your going between Safa and Marwah satisfies both your hajj and umrah.' Muslim transmitted it.	अस्हाब, तथा इस्हाक बिन राहविया और अबू थौर शामिल हैं। यही अब्दुल्लाह बिन उमर, जाबिर बिन अब्दुल्लाह, अता बिन अबी रबाह, हसन बसरी, मुजाहिद बिन जब्र और तावूस बिन कैसान का भी मस्लक है, जो आइशा सिद्दीका की हदीस पर मबनी है: "हम रसूल अल्लाह के साथ हज्जतुल विदा के मौके पर निकले और हमने उमरा का एहराम बाँधा..." इसमें यह भी है: "जिन लोगों ने हज और उमरा को जमा किया, उन्होंने एक ही तवाफ़ किया।" इसे सहीह बुखारी ने रिवायत किया है। और यौम-उन-नहर के दिन रसूल अल्लाह ने आइशा सिद्दीका से, जब उन्होंने बैतुल्लाह का तवाफ़ नहीं किया था और उन्हें हैज़ आ गया था, फ़रमाया: "तुम्हारा तवाफ़ और सई तुम्हारे हज और उमरा दोनों के लिए काफ़ी है।" एक दूसरी रिवायत में है: "सफ़ा और मरवा के दरमियान तुम्हारा चक्कर लगाना तुम्हारे हज और उमरा दोनों के लिए काफ़ी है।" इसे सहीह मुस्लिम ने रिवायत किया है।
Or one does two tawafs and two says according to the opinion of those who think that, namely Abu Hanifah and	या फिर वह दो तवाफ़ और दो सई करे, उन उलमा के क़ौल के मुताबिक़ जो इसके क़ाइल हैं, यानी इमाम अबू

his people, ath-Thawri, al-Awza i, al-Hasan ibn Salih and Ibn Abi Layla. It is related from Ali and Ibn Masud. That is the view of ash-Shafi i and Jabir ibn Zayd. They argue by the hadiths about Ali combining hajj and umrah and doing two ṭawafs and two sajs for them. Then he said, ‘That is how I saw the Messenger of Allah act.’ Ad-Daraqutni transmitted both of them in his Sunan and considered them weak. He made qiran part of tamattu because the one doing qiran is enjoying (tamattua) lack of fatigue in travelling to perform umrah once and to perform hajj once, and enjoying combining them. He does not have to assume ihram for each of them from his miqat. By adding hajj to umrah he falls under the words of the Almighty: ‘Anyone who comes out of ihram between umrah and hajj should make whatever sacrifice is feasible.’	हनीफ़ा और उनके अस्थाब, सुफ़यान सौरी, इमाम औज़ाई, हसन बिन सालेह और इब्न अबी लैला। यह राय अली बिन अबी तालिब और अब्दुल्लाह बिन मसऊद से भी मनकूल है, और यही इमाम शाफ़ई और जाबिर बिन ज़ैद का भी क़ौल है। इनकी दलील वह अहादीस हैं जिनमें अली बिन अबी तालिब का हज और उमरा को जमा करना मज़कूर है, और उन्होंने दोनों के लिए दो तवाफ़ और दो सई कीं, फिर फ़रमाया: “मैंने रसूल अल्लाह को इसी तरह करते देखा है।” इन दोनों रिवायतों को इमाम दारकुतनी ने अपनी सुनन में नक़ल किया है और उन्हें ज़ईफ़ क़रार दिया है। उन्होंने क़िरान को तमत्तु की एक क़िस्म क़रार दिया, क्योंकि क़िरान करने वाला शख्स एक ही सफ़र में उमरा और हज दोनों अदा करने की सहूलत से फ़ायदा उठाता है और दोनों को जमा करने से आसानी हासिल करता है। उसे हर एक के लिए अलग-अलग अपने मीक़ात से एहराम बाँधने की ज़रूरत नहीं होती। इस तरह जब वह उमरा के साथ हज को मिलाता है तो वह अल्लाह तआला के इस फ़रमान के तहत आ जाता है: “जो शख्स उमरा
--	---

	और हज के दरमियान एहराम से बाहर आ जाए, वह जो भी कुर्बानी मयस्सर हो अदा करे।”
This is a form of tamattu that is permitted by scholars without any dispute. The people of Madinah do not permit joining umrah and hajj unless the person brings a sacrificial camel with him. They believe that it must be a camel and nothing less. Part of what indicates that qiran is tamattu is the view of Ibn Umar. He made tamattu exclusively for the people of all regions [outside Makkah] and recited: ‘That is for anyone whose family does not live near the Masjid al-Haram.’ Therefore anyone who lives in the vicinity of the Masjid al-Haram and does tamattu or qiran does not owe the sacrifice of tamattu or qiran. Malik said, ‘I have not heard of a Makkan doing qiran. If he were to do it, he would not owe a sacrifice or fasting.’ Most fuqaha’ take Malik’s view regarding that. Abu al-	यह तमत्तु की एक ऐसी सूरत है जिस के जायज़ होने पर उलमा का बिला इख़्तिलाफ़ इत्तिफ़ाक़ है। अहल-ए-मदीना उमरा और हज को जमा करने की इजाज़त नहीं देते, अल्ला यह कि आदमी अपने साथ कुर्बानी का ऊँट लाए। उनके नज़दीक कुर्बानी लाज़िमन ऊँट ही होना चाहिए, इससे कम नहीं। इस बात की एक दलील कि क़िरान भी तमत्तु की एक सूरत है, अब्दुल्लाह बिन उमर का क़ौल है। उन्होंने तमत्तु को ख़ास तौर पर उन लोगों के लिए क़रार दिया जो मुख़्तलिफ़ इलाक़ों (मक्का के बाहर) से आते हैं, और यह आयत तिलावत की: “यह उस शख्स के लिए है जिस के अहल व अयाल मस्जिद-ए-हराम के पास न रहते हों।” लिहाज़ा जो शख्स मस्जिद-ए-हराम के आस-पास रहता हो और तमत्तु या क़िरान करे, उस पर तमत्तु या क़िरान की कुर्बानी लाज़िम नहीं होती। इमाम मालिक ने कहा: “मैंने किसी मक्की के बारे में नहीं सुना कि वह क़िरान करता हो, और अगर वह करे भी तो

Majishun said, 'When a Makkan does qiran of hajj with umrah, he does not owe the sacrifice for qiran because Allah has cancelled sacrifice and fasting in tamattu for the people of Makkah.'	उस पर न कुर्बानी लाज़िम होगी और न रोज़े।" अक्सर फ़ुक्कहा इसी बारे में इमाम मालिक के क़ौल को इस्तिथार करते हैं। अबू अल-मजीशून ने कहा: "जब कोई मक्की हज और उमरा को क़िरान के तौर पर जमा करे तो उस पर क़िरान की कुर्बानी लाज़िम नहीं होती, क्योंकि अल्लाह तआला ने मक्का वालों के लिए तमत्तु में कुर्बानी और रोज़ों को साक़ित कर दिया है।"
The third form of tamattu is the one which Umar ibn al-Khattab threatened. He said, 'I forbid two types of tamattu that were done in the time of the Messenger of Allah and I will punish people for them: the mutah [marriage] with women and the mutah of hajj.' Scholars disagree about the permissibility of this. It is that a man adopts ihram for hajj and then, when he enters Makkah, his hajj is changed into umrah. Then he comes out of ihram and remains so until he adopts ihram on the Day of Tarwiyah. This is the form which is reported by multiple transmissions from the Prophet.	तमत्तु की तीसरी सूरत वह है जिससे उमर बिन ख़त्ताब ने मना किया और उस पर सज़ा देने की धमकी दी। उन्होंने कहा: "मैं दो क़िस्म के तमत्तु से मना करता हूँ जो रसूल अल्लाह के ज़माने में किए जाते थे, और मैं उन पर लोगों को सज़ा दूँगा: औरतों के साथ मुतअ (निकाह-ए-मुतअ) और हज का तमत्तु।" उलमा इसके वाज़े के बारे में इस्तिथार रखते हैं। इसकी सूरत यह है कि कोई शख्स हज का एहराम बाँधे, फिर जब वह मक्का में दाख़िल हो तो उसका हज उमरा में बदल दिया जाए। फिर वह एहराम से बाहर आ जाए और यौम-ए-तरविया तक बग़ैर एहराम के रहे, फिर उस दिन दोबारा एहराम बाँधे। यह वह सूरत है जो मुतअद्दिद

In his hajj, he ordered those who did not have sacrifices with them and had adopted ihram for hajj to make it umrah. Scholars agree on the soundness of the traditions that report that from him. They did not reject any of them, but they disagree about taking it and acting on it. Most of them believe that it is not acted on because they believe that it was a specific case which the Messenger of Allah made for his Companions on that hajj. Abu Dharr said, 'The mutah for us was specifically on that hajj.' Muslim transmitted it. One version has: 'Two mutahs were allowed only to us specifically,' meaning the mutah with women and the mutah of hajj.	रिवायतों से नबी से मनकूल है। अपने हज में आप ने उन लोगों को, जो कुर्बानी के जानवर साथ नहीं लाए थे और उन्होंने हज का एहराम बाँधा था, हुक्म दिया कि वह उसे उमरा बना दें। इस बारे में आने वाली रिवायतों की सेहत पर उलमा का इत्तिफ़ाक़ है, उन्होंने इनमें से किसी को रद्द नहीं किया, लेकिन उन पर अमल करने के बारे में इख़्तिलाफ़ है। अक्सर उलमा का ख़याल है कि इस पर अमल नहीं किया जाता, क्योंकि उनके नज़दीक यह एक ख़ास हुक्म था जो रसूल अल्लाह ने अपने सहाबा के लिए उसी हज में ख़ास तौर पर दिया था। अबू ज़र गिफ़ारी ने कहा: "यह तमत्तु हमारे लिए ख़ास तौर पर उसी हज में था।" इसे सहीह मुस्लिम ने रिवायत किया है। एक रिवायत में है: "दो मुतअ सिर्फ़ हमारे लिए ख़ास तौर पर जायज़ किए गए थे", यानी औरतों के साथ मुतअ और हज का तमत्तु।
The pretext for its being special and the benefit in it is in what Ibn Abbas said: 'They used to think that umrah during the months of hajj was one of the most heinous actions anyone could do. They would consider	इसके ख़ास होने की वजह और इसमें हिकमत वह है जो अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने बयान की। उन्होंने कहा: "लोग हज के महीनों में उमरा को सबसे बड़ा बुरा अमल समझते थे। वे मुहर्रम को सफ़र करार देते थे और

al-Muharram to be Safar and would say, “When the wounds on the back of the camel heal and the scar has gone and Safar has passed, then umrah is lawful for anyone who wants to perform it.” The Prophet and his Companions arrived on the morning of the fourth of Dhu-l-Hijjah, having adopted ihram for the hajj and he told them to make it an umrah. They thought that extraordinary and said, “Messenger of Allah, what sort of coming out of ihram is it?” He said, “A total coming out of ihram.” Muslim transmitted it. We find with a sound isnad of Abu Hatim that Ibn Abbas said, ‘By Allah, the Messenger of Allah told Aishah to perform umrah in Dhu-l-Hijjah in order by that to cut off the business of the people of shirk. This clan of Quraysh and those near them used to say, “When the wounds on the back of the camel heal and the scar has gone and Safar has passed, then umrah is lawful for anyone who wants to	कहते थे: ‘जब ऊँट की पीठ के ज़ख्म भर जाएँ, निशान मिट जाए और सफ़र गुज़र जाए, तब जो चाहे उमरा कर सकता है।’ नबी और आप के सहाबा चार जुलहिज्जा की सुबह मक्का पहुँचे, इस हाल में कि उन्होंने हज का एहराम बाँधा था, तो आप ने उन्हें हुक्म दिया कि उसे उमरा बना दें। यह बात उन्हें बहुत अजीब लगी और उन्होंने कहा: ‘या रसूल अल्लाह! एहराम से निकलना किस तरह होगा?’ आप ने फ़रमाया: ‘मुकम्मल तौर पर एहराम से निकलना होगा।’” इसे सहीह मुस्लिम ने रिवायत किया है। हमें अबू हातिम की सहीह सनद के साथ मिलता है कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने कहा: “अल्लाह की क़सम! रसूल अल्लाह ने आइशा सिद्दीका को जुलहिज्जा में उमरा करने का हुक्म दिया ताकि उसके ज़रिए मुशरिकीन के तरीक़े को ख़त्म कर दिया जाए। कुरैश का यह क़बीला और उनके आस-पास के लोग कहा करते थे: ‘जब ऊँट की पीठ के ज़ख्म भर जाएँ, निशान मिट जाए और सफ़र गुज़र जाए, तब जो चाहे उमरा कर सकता है।’ वे जुलहिज्जा गुज़रने के बाद उमरा का एहराम बाँधते थे। रसूल अल्लाह ने आइशा सिद्दीका को उमरा
---	---

perform it.” They used to go into ihram for umrah when Dhu-l-Hijjah had passed. The Messenger of Allah told Aishah to perform umrah to annul that position of theirs.’	का हुक्म दिया ताकि उनके इस नज़रिया को बातिल कर दिया जाए।”
This contains proof that the Messenger of Allah incorporated the umrah into the hajj to show them that there was nothing wrong in performing umrah in the months of hajj. That was something specifically for him and those with him because Allah Almighty issued a general command that whoever starts hajj or umrah should complete them. One does not oppose the literal text of the Book of Allah, except in favour of something in the Book of Allah or a clarifying sunnah that abrogates it without ambiguity. Their argument is what we mentioned from Abu Dharr as well as the ḥadith of al-Harith ibn Bilal whose father said, ‘We said, “Messenger of Allah, is the casting off of hajj	इस में इस बात की दलील है कि रसूल अल्लाह ने उमरा को हज के साथ इस लिए शामिल किया ताकि लोगों को यह दिखाया जाए कि हज के महीनों में उमरा करना कोई ममनूअ या ग़लत बात नहीं है। यह हुक्म ख़ास तौर पर आप और आप के साथ मौजूद लोगों के लिए था, क्योंकि अल्लाह तआला ने उमूमी हुक्म दिया है कि जो शख्स हज या उमरा शुरू करे वह उसे मुकम्मल करे। अल्लाह की किताब के ज़ाहिर नस के ख़िलाफ़ नहीं जाया जा सकता, मगर इस सूरत में कि खुद किताब-ए-अल्लाह में कोई दूसरी दलील हो या ऐसी वाज़ेह सुन्नत हो जो बग़ैर किसी इबहाम के उसे मंसूख या वाज़ेह करे। इनकी दलील वह है जो हम ने अबू ज़र ग़िफ़ारी से नक़ल किया, नज़ीर हारिस बिन बिलाल की हदीस, जिस में उनके वालिद ने कहा: “हम ने अर्ज़ किया: ‘या रसूल अल्लाह! क्या हज को छोड़ देना (उसे

something particularly for us or is it for people in general?” He replied, “It is particularly for us.” This is the position of the majority of the fuqaha’ of the Hijaz, Iraq and Syria except for something related from Ibn Abbas, al-Hasan and as-Suddi.	उमरा में बदल देना) सिर्फ़ हमारे लिए खास है या तमाम लोगों के लिए?’ आप ने फ़रमाया: ‘यह खास तौर पर हमारे लिए है।’ यही मौक़िफ़ हिजाज़, इराक़ और शाम के अकसर फ़ुक़हा का है, सिवाय इसके जो अब्दुल्लाह बिन अब्बास, हसन बसरी और सुदी से मनकूल है।
Ahmad ibn Hanbal stated it and said, ‘I will not deny those sound multiple transmissions of reports which come about casting hajj into umrah based on the hadith of al-Harith ibn Bilal from his father and the position of Abu Dharr.’ He did not make it particular. Ahmad argued by the sound long hadith of Jabir about the hajj. We find in it: ‘Had I known what I know now, I would not have brought sacrificial camels and I would have made it umrah.’ Suraqah ibn Malik ibn Jushum stood up and said, ‘Messenger of Allah, is it specifically for this year or is it forever?’ The Messenger of Allah intertwined his fingers together and said twice,	इमाम अहमद बिन हनबल ने इस मौक़िफ़ को बयान किया और कहा: “मैं उन मुतअदिद सहीह रिवायतों का इंकार नहीं करूँगा जिनमें हज को उमरा में तब्दील करने का ज़िक्र आया है, जैसा कि हारिस बिन बिलाल की अपने वालिद से रिवायत और अबू ज़र ग़िफ़ारी का मौक़िफ़ है।” उन्होंने इसे किसी खास सूरत तक महदूद नहीं किया। इमाम अहमद बिन हनबल ने जाबिर बिन अब्दुल्लाह की तवील और सहीह हदीस (जो हज के बारे में है) से इस्तिदलाल किया। इसमें है: “अगर मुझे पहले वह बात मालूम होती जो अब मालूम हुई है, तो मैं कुर्बानी के जानवर साथ न लाता और इसे उमरा बना देता।” सुराक़ा बिन मालिक बिन जुशुम खड़े हुए और अर्ज़ किया: “या रसूल अल्लाह! क्या यह सिर्फ़ इसी साल के लिए है

‘Umrah has been incorporated into hajj.’	या हमेशा के लिए?” इस पर रसूल अल्लाह ने अपनी उंगलियों को एक दूसरे में दाखिल करते हुए दो मर्तबा फ़रमाया: “उमरा को हज में दाखिल कर दिया गया है।”
By Allah, I know that it is to this that al-Bukhari inclined when he entitled a chapter: ‘Someone saying talbiyah for hajj and specifying it.’ He gives the hadith of Jabir ibn Abdullah: ‘We came with the Messenger of Allah saying, “At Your service, O Allah, for the hajj.” The Messenger of Allah instructed us to make it umrah.’ Some people said that the command by the Messenger of Allah to come out of ihram came by a different path which Mujahid mentioned: ‘The Companions of the Messenger of Allah did not make the hajj obligatory first. He commanded them to come completely out of ihram and to wait for what they were commanded. That is the same with the ihram of Ali in Yemen and the same with the ihram of the Messenger of	अल्लाह की क़सम! मैं जानता हूँ कि इमाम बुखारी का मीलान इसी तरफ़ था जब उन्होंने एक बाब क़ायम किया: “कोई शख्स हज के लिए तलबिया कहे और उसे मखसूस करे।” इसमें उन्होंने जाबिर बिन अब्दुल्लाह की हदीस ज़िक्र की: “हम रसूल अल्लाह के साथ आए और हम कह रहे थे: ‘लब्बैक अल्लाहुम्मा हज के लिए।’ फिर रसूल अल्लाह ने हमें हुक्म दिया कि उसे उमरा बना दें।” कुछ लोगों ने कहा कि रसूल अल्लाह का एहराम से निकलने का हुक्म एक दूसरे तरीक़े से भी आया है जिसे मुजाहिद बिन ज़ब्र ने ज़िक्र किया: “रसूल अल्लाह के सहाबा ने इब्तिदा में हज को फ़र्ज़ नहीं समझा था। आप ने उन्हें मुकम्मल तौर पर एहराम से निकलने का हुक्म दिया और उस चीज़ का इंतज़ार करने को कहा जिसका उन्हें हुक्म दिया जाएगा। यही मामला अली बिन अबी तालिब के यमन में एहराम का था और यही

Allah. It is indicated by his words, ‘Had I known what I know now, I would not have brought sacrificial camels and I would have made it umrah.’ So it is as if he went out waiting for what he was commanded and then commanded his Companions to do that. That is also indicated by his words, ‘In the night someone came to me from my Lord and said, “Pray in this blessed valley and say, ‘Umrah in hajj.’”	रसूल अल्लाह के एहराम का भी था।” इसकी तरफ़ आप के इस फ़रमान से भी इशारा मिलता है: “अगर मुझे पहले वह बात मालूम होती जो अब मालूम हुई है, तो मैं कुर्बानी के जानवर साथ न लाता और उसे उमरा बना देता।” गोया आप उस हुक्म के इंतज़ार में थे जो बाद में दिया गया, फिर आप ने अपने सहाबा को भी उसी का हुक्म दिया। इसी तरह आप के इस क़ौल से भी इसकी ताईद होती है: “रात के वक़्त मेरे पास मेरे रब की तरफ़ से एक आने वाला आया और उसने कहा: ‘इस मुबारक वादी में नमाज़ पढ़ो और कहो: उमरा हज के साथ है।’”
The fourth form of tamattu is that of someone who is prevented from reaching the House. Yaqub ibn Shaybah mentioned from Abu Salamah at-Tabudhaki from Wuhayb from Ishaq ibn Suwayd who heard Abdullah ibn az-Zubayr say in a khutbah: ‘People! By Allah, tamattu, joining umrah into hajj, is not as you do, but tamattu is that a man sets out on hajj and is detained by the	तमत्तु की चौथी सूरत वह है जो उस शख्स से मुतअल्लिक़ है जिसे बैतुल्लाह तक पहुँचने से रोक दिया जाए। याक़ूब बिन शैबह ने अबू सलमा अत-तबूज़की के वासिते से, उन्होंने वहैब से, उन्होंने इस्हाक बिन सुवैद से रिवायत किया कि उन्होंने अब्दुल्लाह बिन जुबैर को एक ख़ुत्बा में यह कहते हुए सुना: “ऐ लोगो! अल्लाह की क़सम, तमत्तु (यानी उमरा को हज के साथ मिलाना) वैसा नहीं है जैसा तुम करते हो, बल्कि

enemy until the days of hajj have passed. Then he reaches the House and does tawaf and runs between Safa and Marwah and then enjoys being out of ihram until the following year when he performs hajj and sacrifices.’	तमत्तु यह है कि कोई शख्स हज के लिए रवाना हो और दुश्मन उसे रोक ले यहाँ तक कि हज के अय्याम गुज़र जाएँ। फिर वह बैतुल्लाह पहुँचे, तवाफ़ करे और सफ़ा व मरवा के दरमियान सई करे, फिर एहराम से बाहर हो कर फ़ायदा उठाए (यानी आम हालत में रहे) यहाँ तक कि अगले साल हज करे और कुर्बानी दे।”
Someone hindered by the enemy has already been dealt with. An element of his position is that someone hindered does not come out of ihram, but rather remains in it until he slaughters the sacrifice on the Day of Sacrifice. Then he shaves but remains in ihram until he reaches Makkah and then comes out of ihram for hajj by the actions of umrah. What Ibn az-Zubayr mentioned is counter to the undefined nature of this ayah. Allah did not make a distinction between hajj and umrah in the ruling of someone prevented from completing it. When the Prophet and his Companions	दुश्मन की वजह से रोके जाने वाले शख्स का हुक्म पहले बयान हो चुका है। उसके मौक़िफ़ का एक पहलू यह है कि जो शख्स रोका जाए वह एहराम से बाहर नहीं आता, बल्कि उसी हालत में रहता है यहाँ तक कि यौम-उन-नहर के दिन कुर्बानी करे। फिर वह सर मुँडवाता है, लेकिन फिर भी एहराम में रहता है यहाँ तक कि मक्का पहुँच जाए, फिर उमरा के आमाल के ज़रिये हज के एहराम से बाहर आता है। अब्दुल्लाह बिन जुबैर ने जो बयान किया, वह इस आयत के आम मफ़हूम के खिलाफ़ है, क्योंकि अल्लाह तआला ने रोके जाने वाले शख्स के हुक्म में हज और उमरा के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं किया। जब रसूल अल्लाह और आप के सहाबा

were stopped at Hudaybiyah, they came out ihram as he did. He commanded them to do so.	सुल्ह-ए-हुदैबिया के मौक़े पर रोक दिए गए तो उन्होंने एहराम से बाहर आ गए, जैसा कि आप ने खुद किया, और आप ने उन्हें भी ऐसा करने का हुक्म दिया।
Scholars also disagree about the reason for saying that someone is doing tamattu. Ibn al-Qasim said that he is called that because he can enjoy (tamattua) all that it is not permitted for someone in ihram to do from the time he comes out of his ihram until he starts hajj. Others say that he is called that because he enjoys not having to make one of two journeys as it is the due of umrah to be the object of a journey and the same is true of hajj. When he enjoys the cancellation of one of them, then he owes a sacrifice to Allah as is also the case with someone doing qiran who combines hajj and umrah in the same journey. The first position is more universal: he can enjoy all that someone not in ihram can do and he does not have to	उलमा इस बात में भी इख़िलाफ़ रखते हैं कि किसी शख्स को "मुतमत्ते" क्यों कहा जाता है। इब्न अल-कासिम ने कहा कि उसे इस लिए मुतमत्ते कहा जाता है कि वह एहराम से निकलने के बाद से लेकर हज शुरू करने तक उन तमाम चीज़ों से फ़ायदा उठा सकता है (तमत्तु कर सकता है) जो एहराम की हालत में जायज़ नहीं होतीं। कुछ दूसरे उलमा कहते हैं कि उसे इस लिए मुतमत्ते कहा जाता है कि वह दो सफ़रों में से एक सफ़र से बचने का फ़ायदा उठाता है, क्योंकि असल में उमरा भी एक मुस्तक़िल सफ़र का तकाज़ा करता है और हज भी। जब वह उनमें से एक सफ़र साक़ित होने का फ़ायदा उठाता है तो उस पर अल्लाह के लिए कुर्बानी लाज़िम होती है, जैसे कि क़िरान करने वाले पर भी लाज़िम होती है जो एक ही सफ़र में हज और उमरा को जमा करता है। पहला क़ौल ज़्यादा जामे है, क्योंकि इसमें

make another journey from his land to perform hajj, and he does not have to return to his miqat to adopt ihram from for hajj.	वह उन तमाम चीज़ों से फ़ायदा उठाता है जो एहराम से बाहर शरूअ के लिए जायज़ हैं, और उसे अपने वतन से दोबारा हज के लिए अलग सफ़र करने की ज़रूरत नहीं पड़ती, न ही उसे हज के लिए एहराम बाँधने के लिए अपने मीक़ात पर वापस जाना पड़ता है।
This is what Umar and Ibn Masud disliked. One or both of them said, ‘One of you comes to Mina with his penis dripping with semen.’ However, the Muslims agree that that is permitted. A group of scholars said that Umar disliked it because he preferred to visit the House twice in the year: once on hajj and once for umrah. He thought that ifrad was better and commanded it and inclined to it. His forbidding other forms of hajj was a recommendation. That is why he said, ‘Separate your hajj and your umrah. It is more complete for your hajj to do that; and it is more complete for your umrah to perform it	यही वह बात है जिसे उमर बिन ख़त्ताब और अब्दुल्लाह बिन मसऊद नापसंद करते थे। उनमें से एक या दोनों ने कहा: “तुम में से कोई मिना इस हाल में आता है कि उसकी शर्मगाह से मनी टपक रही होती है।” हालांकि मुसलमानों का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि यह (तमत्तु) जायज़ है। उलमा के एक गिरोह ने कहा कि उमर बिन ख़त्ताब को यह इस लिए नापसंद था कि वह चाहते थे कि लोग साल में दो मर्तबा बैतुल्लाह की ज़ियारत करें: एक मर्तबा हज के लिए और एक मर्तबा उमरा के लिए। वह इफ़राद को अफ़ज़ल समझते थे, उसी का हुक्म देते थे और उसी की तरफ़ माइल थे। उनका दीगर अक्साम-ए-हज से मना करना दरअसल बतौर नसीहत था। इसी लिए उन्होंने कहा: “अपने हज और

outside of the months of hajj.’	अपने उमरा को अलग-अलग करो। यह तुम्हारे हज के लिए ज़्यादा कामिल है, और तुम्हारे उमरा के लिए ज़्यादा कामिल यह है कि उसे हज के महीनों के अलावा अदा किया जाए।”
Scholars disagree about someone who performs umrah in the month of hajj, returns home to his house and then performs hajj in the same year. Most scholars say that in that case he is not performing tamattu and does not owe a sacrifice or fasting. Al-Hasan al-Basri, however, said that he is performing tamattu if he returns to his family, whether or not he performs hajj. He stated that it is because umrah during the months of hajj is necessarily tamattu. Hushaym related that from Yunus from al-Hasan. He also related from Yunus from al-Hasan that the person doing that does not owe a sacrifice. The sound position is the first one. That is what was stated by Abu Umar: ‘...whether or not he performs hajj.’ Ibn al-Mundhir did not	उलमा उस शख्स के बारे में इख्तिलाफ़ रखते हैं जो हज के महीनों में उमरा करता है, फिर अपने घर वापस चला जाता है और उसी साल दोबारा हज करता है। अक्सर उलमा का कहना है कि ऐसी सूरत में वह तमत्तु करने वाला शुमार नहीं होगा और न ही उस पर कुर्बानी या रोज़े लाज़िम होंगे। अलबत्ता हसन बसरी का कहना है कि अगर वह अपने अहल व अयाल के पास वापस जाए तो वह तमत्तु करने वाला शुमार होगा, ख़्वाह वह हज करे या न करे। उनके नज़दीक इसकी वजह यह है कि हज के महीनों में उमरा करना बि-ज़ात-ए-ख़ुद तमत्तु है। हुशैम बिन बशीर ने यह क़ौल यूनुस बिन उबैद के वासिते से हसन बसरी से रिवायत किया है। और उन्हीं के ज़रिये यह भी रिवायत किया कि ऐसा करने वाले पर कुर्बानी लाज़िम नहीं। सहीह और मज़बूत क़ौल पहला ही है। यही बात अबू उमर ने भी बयान की: “चाहे वह

mention it, but said that his hajj is based on the literal words of the Book: ‘Anyone who comes out of ihram between umrah and hajj...’ There is no exception made for someone who returns to his family or does not return. If Allah had intended that, He would have explained it in His Book or on the tongue of His Messenger.	हज करे या न करे...” इब्न अल-मुन्दिर ने इस तफ़सील को ज़िक्र नहीं किया, बल्कि कहा कि इसका हुक्म कुरआन के ज़ाहिर अल्फ़ाज़ पर है: “जो शख्स उमरा और हज के दरमियान एहराम से बाहर आ जाए...” इसमें उस शख्स के लिए कोई इस्तिस्ना नहीं किया गया जो अपने घर लौट जाए या न लौटे। अगर अल्लाह तआला इसमें कोई इस्तिस्ना चाहते तो वह अपनी किताब में या अपने रसूल की ज़बान से इसकी वज़ाहत फ़रमा देते।
A similar position to that of al-Hasan is related from Sa id ibn al-Musayyab. Abu Umar said, ‘Also related from al-Hasan regarding this topic is a position that no one follows and none of the people of knowledge adopt. He said that someone who performs umrah on the Day of Sacrifice is doing tamattu.’ Two views are related from Ṭawus that are even more aberrant than what we have mentioned from al-Hasan. One is that someone who performs umrah outside the months of	सईद बिन मुसय्यब से भी हसन बसरी के मशाबेह एक क़ौल मनकूल है। अबू उमर ने कहा: “इस मसले में हसन बसरी से एक और क़ौल भी मनकूल है जिस पर कोई अमल नहीं करता और न ही अहल-ए-इल्म में से कोई उसे इख़्तियार करता है। उन्होंने कहा कि जो शख्स यौम-उन-नहर के दिन उमरा करे वह तमत्तु करने वाला है।” तावूस बिन कैसान से इस बारे में दो ऐसे क़ौल भी मनकूल हैं जो हसन बसरी के क़ौल से भी ज़्यादा शाज़ हैं। उनमें से एक यह है कि जो शख्स हज के महीनों के अलावा उमरा करे, फिर ठहर जाए यहाँ तक कि हज का वक़्त

hajj, then stays until the time of hajj and does hajj in the same year, is performing tamattu. He is the only scholar to say this and none of the fuqaha' of any region believe it. Allah knows best, but that is because the months of hajj are more proper for hajj than they are for umrah because umrah is permitted throughout the entire year. The place of the hajj is in known months. If someone does umrah in the months of hajj, he has put it in a place to which hajj is more entitled, although in His Book and on the tongue of His Messenger Allah made an allowance for doing umrah in the months of hajj if someone is performing tamattu or qiran, and for someone who does ifrad, out of mercy from Him. He assigned a feasible sacrifice for doing it. The other form is what is said about a Makkan when he does tamattu from one of the regions: he owes a sacrifice. One does not turn to this because of the literal meaning of His words:	आ जाए और उसी साल हज करे, तो वह तमत्तु करने वाला होगा। इस क़ौल के क़ाइल सिर्फ़ वही हैं और किसी भी इलाके के फ़ुक्कहा में से कोई इसको इख़्तियार नहीं करता। और अल्लाह बेहतर जानता है, लेकिन इसकी वजह यह मालूम होती है कि हज के महीने हज के लिए ज़्यादा मुनासिब हैं बनिस्बत उमरा के, क्योंकि उमरा तो पूरे साल में जायज़ है, जबकि हज के लिए मुख़्तस महीनों मुक़र्रर हैं। लिहाज़ा अगर कोई शख्स हज के महीनों में उमरा करता है तो वह उसे ऐसे वक़्त में अंजाम देता है जो दरअसल हज के लिए ज़्यादा ख़ास है। इसके बावजूद अल्लाह तआला ने अपनी किताब में और अपने रसूल की ज़बान से हज के महीनों में उमरा करने की इजाज़त दी है, जब कोई तमत्तु या क़िरान करे, और इसी तरह इफ़राद करने वाले के लिए भी, यह सब अल्लाह की रहमत से है। और इस पर एक मुमकिन कुर्बानी लाज़िम की गई है। दूसरी सूरत वह है जो एक मक्की के बारे में कही जाती है कि अगर वह किसी दूसरे इलाके से तमत्तु करे तो उस पर कुर्बानी लाज़िम होगी, लेकिन इस क़ौल की तरफ़ रुजू नहीं किया जाता,
--	--

‘That is for anyone whose family does not live near the Masjid al-Haram.’ One group of scholars permit tamattu with the preconditions we have explained. Success is by Allah.	क्योंकि अल्लाह तआला के इस फ़रमान का ज़ाहिर मफ़हूम इसके खिलाफ़ है: “यह उस शख्स के लिए है जिस के अहल व अयाल मस्जिद-ए-हराम के पास न रहते हों।” उलमा के एक गिरोह ने इन शराइत के साथ तमत्तु को जायज़ करार दिया है जिन का हम ज़िक्र कर चुके हैं। कामयाबी अल्लाह ही की तरफ़ से है।
Scholars agree that if a man, who is not from the people of Makkah, performs umrah in the months of hajj with the resolve to remain there and then begins hajj in that year, that is tamattu, and he owes what someone performing tamattu owes. They agree that when a Makkan comes from outside the miqat in ihram for umrah and then begins hajj from Makkah while his family is in Makkah and it is his only residence, he owes no sacrifice. That is also the case if he lives elsewhere as well as living there and has family both in Makkah and outside Makkah. They agree that if he moves with his family from Makkah and then comes	उलमा का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि अगर कोई शख्स जो अहल-ए-मक्का में से न हो, हज के महीनों में उमरा करे इस इरादे के साथ कि वह वहीं क्रियाम करेगा, फिर उसी साल हज भी करे, तो यह तमत्तु है और उस पर वही लाज़िम होगा जो तमत्तु करने वाले पर लाज़िम होता है। और इस बात पर भी उनका इत्तिफ़ाक़ है कि जब कोई मक्की शख्स मीक़ात के बाहर से उमरा का एहराम बांध कर आए, फिर मक्का से हज शुरू करे जबकि उसका घराना मक्का में हो और वही उसकी वाहिद रिहाइश हो, तो उस पर कोई कुर्बानी लाज़िम नहीं। यही हुक्म उस सूरत में भी है जब वह किसी और जगह भी रहता हो और मक्का में भी रिहाइश रखता हो, और उसका घराना मक्का में भी

performing umrah in the months of hajj and stays there until hajj that year, he is performing tamattu.	हो और मक्का से बाहर भी। इसी तरह इस बात पर भी इत्तिफ़ाक है कि अगर वह अपने घराने के साथ मक्का से मुन्तक़िल हो जाए, फिर हज के महीनों में उमरा अदा करते हुए आए और उसी साल हज तक वहीं ठहरा रहे, तो वह तमत्तु करने वाला शुमार होगा।
Malik, ash-Shafi i, Abu Hanifah and their people, ath-Thawri and Abu Thawr agree that someone performing tamattu does two tawafs of the House for umrah and runs between Safa and Marwah and after that does another tawaf and say for hajj. It is related from Ata' and Tawus that it is enough to do one say between Safa and Marwah. They disagree about someone who starts his umrah outside the months of hajj and then finishes it during the months of hajj. Malik said that his umrah is in the month in which it occurred. He means that if it occurs outside the months of hajj, it is not tamattu, but if it occurs in the months of hajj,	इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई, इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब, नीज़ सुफ़यान सौरी और अबू सौर इस बात पर मुत्तफ़िक हैं कि तमत्तु करने वाला उमरा के लिए बैतुल्लाह के दो तवाफ करता है और सफ़ा व मरवा के दरमियान सई करता है, फिर उसके बाद हज के लिए एक और तवाफ और सई करता है। अता और ताउस से रिवायत है कि सफ़ा व मरवा के दरमियान एक ही सई काफ़ी है। और इस बारे में इख़्तिलाफ है कि जो शख्स अपना उमरा हज के महीनों से पहले शुरू करे और फिर उसे हज के महीनों में मुकम्मल करे। इमाम मालिक ने कहा कि उसका उमरा उसी महीने में शुमार होगा जिसमें वह वाक़े हुआ। उनका मतलब यह है कि अगर वह हज के महीनों से पहले वाक़े हुआ तो तमत्तु नहीं होगा, और

then he is performing tamattu if he does hajj in the same year. Ash-Shafi i said, 'If someone does tawaf of the House in the months of hajj, he is performing tamattu if he performs hajj in the same year.' That is because umrah is completed by tawaf of the House. One considers its completion. That is the view of al-Hasan al-Basri, al-Hakam ibn Uyaynah Ibn Shurumah and Sufyan ath-Thawri.	अगर हज के महीनों में वाक़े हुआ तो फिर अगर वह उसी साल हज करे तो वह तमत्तु करने वाला होगा। इमाम शाफ़ई ने कहा: "अगर कोई शख्स हज के महीनों में बैतुल्लाह का तवाफ करे तो वह तमत्तु करने वाला है, बशर्ते कि वह उसी साल हज करे।" इसकी वजह यह है कि उमरा बैतुल्लाह के तवाफ से मुकम्मल होता है, लिहाज़ा इसी को उसकी तकमील समझा जाता है। यही राय हसन बसरी, हकम बिन उयैना, इब्न शुब्रुमा और सुफ़यान सौरी की भी है।
Qatadah, Ahmad and Ishaq said that his umrah is attached to the month in which he assumed ihram. That idea is also related from Jabir ibn Abdullah. Tawus said that his umrah is attached to the month in which he enters the Haram. The People of Opinion said that if someone does four circuits of tawaf in Ramadan and three in Shawwal, he is not doing tamattu. AbuThawr said, 'If he starts umrah outside of the months of hajj, it is the same whether he does tawaf in	क़तादा, इमाम अहमद बिन हंबल और इस्हाक बिन राहवैयह ने कहा कि उसका उमरा उसी महीने के साथ मुतअल्लिक होगा जिसमें उसने एहराम बांधा। यही बात जाबिर बिन अब्दुल्लाह से भी मरवी है। ताउस ने कहा कि उसका उमरा उस महीने के साथ मुतअल्लिक होगा जिसमें वह हरम में दाखिल होता है। अहल-ए-राय ने कहा कि अगर कोई शख्स रमज़ान में तवाफ के चार चक्कर करे और शव्वाल में तीन, तो वह तमत्तु नहीं कर रहा। अबू सौर ने कहा: "अगर कोई शख्स हज के महीनों से पहले उमरा शुरू करे तो यह बराबर

Ramadan or in Shawwal: he is not doing tamattu in this umrah.' That is the meaning of the statement of Ahmad and Ishaq: his umrah is attached to the month in which he assumed ihram.	है कि वह तवाफ रमज़ान में करे या शव्वाल में, उस उमरा में वह तमत्तु करने वाला नहीं होगा।" यही इमाम अहमद बिन हंबल और इस्हाक बिन राहवैयह के क़ौल का मफ़हूम है कि उसका उमरा उसी महीने के साथ मुतअल्लिक होगा जिसमें उसने एहराम बांधा।
The people of knowledge agree that someone who adopts ihram for umrah in the months of hajj and does not add hajj to it until he begins tawaf of the House is by that token doing qiran. He is under the same obligation as that of someone who begins hajj and umrah together. They disagree about adding hajj to umrah after he has begun tawaf. Malik said, 'That binds him and he becomes someone performing qiran as long as he has not finished tawaf.' Something similar is related from Abu Hanifah. It is well known from him that it is only permitted to add hajj before he begins tawaf. It was said that he can add hajj to umrah as long as he has not prayed the	अहल-ए-इल्म का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि जो शख्स हज के महीनों में उमरा के लिए एहराम बांधे और बैतुल्लाह का तवाफ शुरू करने से पहले उसमें हज को भी शामिल कर ले, तो वह इस तरह क़िरान करने वाला हो जाता है, और उस पर वही लाज़िम होता है जो उस शख्स पर लाज़िम होता है जो शुरू ही से हज और उमरा को जमा कर ले। और इस बारे में इख़्तिलाफ़ है कि अगर वह तवाफ शुरू करने के बाद उमरा में हज को शामिल करे तो क्या हुक्म है। इमाम मालिक ने कहा: "यह उस पर लाज़िम हो जाएगा और जब तक वह तवाफ मुकम्मल न करे, वह क़िरान करने वाला शुमार होगा।" इसी तरह की बात इमाम अबू हनीफ़ा से भी मरवी है। हालांकि उनसे मशहूर यह है कि हज को उमरा में

two rakahs of tawaf. All of that is the position of Malik and his people.	शामिल करना सिर्फ़ उस वक्त जायज़ है जब वह तवाफ शुरू न किया हो। यह भी कहा गया है कि वह हज को उमरा में उस वक्त तक शामिल कर सकता है जब तक वह तवाफ की दो रकअतें अदा न करे। यह सब इमाम मालिक और उनके अस्थाब का मौकिफ़ है।
If someone performing umrah has done one circuit for his umrah and then adopts ihram for hajj, he is performing qiran; the rest of his umrah is cancelled for him and he owes the sacrifice of qiran. That is also the case if someone adopts ihram for hajj during tawaf or after it but before praying the two rakahs. Some of them say that he can add hajj to umrah as long as he has not completed say between Safa and Marwah. Abu Umar said, 'The people of knowledge consider all of this aberrant.' Ashab said, 'When he has done one circuit of umrah, he is not obliged to adopt ihram and he is not doing qiran. He continues with his umrah until he finishes it and	अगर कोई शख्स उमरा करते हुए एक चक्कर (तवाफ का एक शौट) मुकम्मल कर ले और फिर हज का एहराम बांध ले तो वह क़िरान करने वाला शुमार होगा, उसका बाकी उमरा उससे साक़ित हो जाएगा और उस पर क़िरान की कुर्बानी लाज़िम होगी। इसी तरह अगर कोई शख्स तवाफ के दौरान या उसके बाद मगर दो रकअतें पढ़ने से पहले हज का एहराम बांध ले तो भी यही हुक्म है। बाज़ लोगों का कहना है कि वह उस वक्त तक उमरा में हज को शामिल कर सकता है जब तक उसने सफ़ा और मरवा के दरमियान सई मुकम्मल न की हो। अबू उमर ने कहा: "अहल-ए-इल्म इस तमाम क़ौल को शाज़ समझते हैं।" असबग़ ने कहा: "जब वह उमरा का एक चक्कर मुकम्मल कर ले तो उस पर

then adopts ihram for hajj. This is the view of ash-Shafi i and 'Ata'. Abu Thawr also said that.'	एहराम बांधना लाज़िम नहीं होता और न ही वह क़िरान करने वाला होता है। वह अपने उमरा को जारी रखे यहाँ तक कि उसे मुकम्मल कर ले, फिर हज का एहराम बांधे।" यही राय इमाम शाफ़ई और अता की है, और अबू सौर ने भी यही कहा है।
They disagree about adding umrah to hajj. Malik, Abu Thawr and Ishaq said that umrah may not be added to hajj, and if someone adds umrah to hajj, it counts for nothing. Malik said that and it is one of the views of ash-Shafi i. It was known from him in Egypt. Abu Hanifah and his people and ash-Shafi i in his old school says that he becomes someone performing qiran and owes what he owes as long as he has not done one circuit of his tawaf for hajj. He cannot do it if he has done tawaf because he has done his hajj. Ibn al-Mundhir said, 'I take the view of Malik regarding this question.'	इस बारे में इख़्तिलाफ़ है कि हज में उमरा को शामिल किया जा सकता है या नहीं। इमाम मालिक, अबू सौर और इस्हाक बिन राहवैयह ने कहा कि उमरा को हज में शामिल नहीं किया जा सकता, और अगर कोई ऐसा करे तो उसका कोई एतिबार नहीं होगा। इमाम मालिक ने यही कहा और यह इमाम शाफ़ई के एक क़ौल में से भी है, जो उनसे मिस्र में मशहूर था। इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब, नीज़ इमाम शाफ़ई के क़ौल-ए-क़दीम के मुताबिक, अगर किसी ने हज में उमरा को शामिल किया तो वह क़िरान करने वाला बन जाएगा और उस पर वही लाज़िम होगा जो क़िरान करने वाले पर लाज़िम होता है, बशर्ते कि उसने अभी तक हज के तवाफ़ का एक चक्कर भी न किया हो। अगर वह तवाफ़ कर चुका हो तो फिर वह ऐसा

	नहीं कर सकता, क्योंकि वह अपना हज अदा कर चुका होता है। इब्न अल-मुज़िर ने कहा: "मैं इस मसले में इमाम मालिक के क़ौल को इस्तिथार करता हूँ।"
Malik said, 'If someone has slaughtered an animal for umrah and is performing tamattu, that does not cover what he owes. He owes another sacrifice for tamattu because that is what he is doing when he begins hajj after he has come out of ihram for umrah: a sacrifice is obliged for him. Abu Hanifah, Abu Thawr and Ishaq said that he should only slaughter his sacrifice on the Day of Sacrifice. Ahmad said, 'If someone doing tamattu arrives before the tenth, he does tawaf, say and sacrifices. If he comes in the ten days, then he only sacrifices on the Day of Sacrifice.' Ata' said that. Ash-Shafi i said, 'He comes out of ihram for umrah when he does tawaf and say whether or not he has brought a sacrificial animal.'	इमाम मालिक ने कहा: "अगर कोई शख्स उमरा के लिए कुर्बानी कर चुका हो और तमत्तु कर रहा हो तो यह उसके ज़िम्मे वाजिब को पूरा नहीं करती। उसे तमत्तु की वजह से एक और कुर्बानी देनी होगी, क्योंकि जब वह उमरा के बाद एहराम से निकल कर हज शुरू करता है तो उस पर कुर्बानी लाज़िम हो जाती है।" इमाम अबू हनीफ़ा, अबू सौर और इस्हाक बिन राहवैयह ने कहा कि वह अपनी कुर्बानी सिर्फ़ यौम-ए-नहर (कुर्बानी के दिन) ही करे। इमाम अहमद बिन हंबल ने कहा: "अगर तमत्तु करने वाला दसवीं (जुलहिज्जा) से पहले पहुंच जाए तो वह तवाफ और सई करे और कुर्बानी करे, और अगर वह अशरा (इब्तिदाई दस दिनों) में आए तो फिर वह सिर्फ़ यौम-ए-नहर ही के दिन कुर्बानी करेगा।" यही क़ौल अता का है। इमाम शाफ़ई ने कहा: "जब वह तवाफ और सई कर ले तो वह उमरा से एहराम से बाहर आ जाएगा,

	चाहे वह कुर्बानी का जानवर साथ लाया हो या न लाया हो।”
Malik and ash-Shafi i disagree about what happens when someone doing tamattu dies. Ash-Shafi i said, ‘When he adopts ihram for hajj, then he owes the sacrifice of tamattu if he can afford that.’ Az-Zafrani related it from him. Ibn Wahb related that Malik was asked whether someone performing tamattu, who dies at Arafah or elsewhere after having adopted ihram for hajj, owed a sacrifice. He said, ‘If anyone dies before stoning the Jamrat al-Aqabah, I do not think that he owes a sacrifice. If someone stones the Jamrat al-Aqabah and then dies, he owes a sacrifice.’ He was asked if it was paid from the capital or from the third [for bequests] and said that it was paid from the capital.	इमाम मालिक और इमाम शाफ़ई के दरमियान इस मसले में इख़िलाफ़ है कि अगर तमत्तु करने वाला शख्स वफ़ात पा जाए तो क्या हुक्म है। इमाम शाफ़ई ने कहा: “जब वह हज का एहराम बांध ले तो अगर वह इस्तिताअत रखता हो तो उस पर तमत्तु की कुर्बानी लाज़िम हो जाती है।” यह रिवायत ज़फ़रानी ने उनसे नक़ल की है। इब्न वहब ने रिवायत किया कि इमाम मालिक से उस शख्स के बारे में पूछा गया जो तमत्तु कर रहा हो और हज का एहराम बांधने के बाद अरफ़ात या किसी और जगह वफ़ात पा जाए, तो क्या उस पर कुर्बानी लाज़िम है? उन्होंने कहा: “अगर कोई शख्स जमरतुल अक़बा को कंकरीयाँ मारने से पहले वफ़ात पा जाए तो मैं नहीं समझता कि उस पर कुर्बानी लाज़िम है। और अगर कोई जमरतुल अक़बा को कंकरीयाँ मार ले फिर वफ़ात पा जाए तो उस पर कुर्बानी लाज़िम होगी।” उनसे पूछा गया कि यह कुर्बानी तरका के असल माल से अदा की जाएगी या एक तिहाई (वसियत के

	हिस्से) से? तो उन्होंने कहा कि यह असल माल से अदा की जाएगी।
For anyone who cannot, there is three days' fast on hajj and seven on your return – that is ten in all.	और जो शख्स (कुर्बानी की) इस्तिताअत न रखे, उसके लिए हज के दौरान तीन रोज़े हैं और वापसी पर सात रोज़े — यह कुल दस (रोज़े) हैं।
Anyone who should sacrifice but is unable to do so due to lack of money or lack of animals, must fast for three days during the hajj and seven when he returns home. The three days are the three days up to and including the Day of Arafah. This is the position of Tawus and it is related from ash-Shabi, Ata', Mujahid, al-Hasan al-Basri, an-Nakha i, Said ibn Jubayr, Alqamah, Amr ibn Dīnār and the People of Opinion. Ibn al-Mundhir related it. Abu Thawr reports that Abu Hanifah says that a person may also fast the prescribed days during the time he is in ihram for umrah because it is one of the two ihrams of tamattu and so it is	जो शख्स कुर्बानी का पाबंद हो मगर माली तंगी या जानवर न मिलने की वजह से कुर्बानी न कर सके, उसके लिए लाज़िम है कि वह हज के दौरान तीन रोज़े रखे और वापसी पर सात रोज़े रखे। यह तीन रोज़े यौम-ए-अरफ़ा तक के तीन दिन हैं, यानी उस दिन समेत। यह मौक़िफ़ ताउस का है, और यही बात शाबी, अता, मुजाहिद, हसन बसरी, नखई, सईद बिन जुबैर, अलक़मा, अम्र बिन दीनार और अहल-ए-राय से भी मनकूल है, जिसे इब्न अल-मुंज़िर ने रिवायत किया है। अबू सौर रिवायत करते हैं कि इमाम अबू हनीफ़ा ने कहा कि इंसान इन मुकर्रर दिनों के रोज़े उमरा के एहराम के दौरान भी रख सकता है, क्योंकि यह तमत्तु के दो एहरामों में से एक है, लिहाज़ा जिस तरह हज के एहराम में इन दिनों के रोज़े रखना जायज़ है उसी तरह उमरा के एहराम

permitted to fast these days in the ihram for umrah in the same way as it is in the ihram for hajj. It is also reported from Abu Hanifah and his people that the day before the day of Tarwiyah (7th Dhu-l-Hijjah) should be fasted, then the Day of Tarwiyah and then the Day of Arafah.	में भी जायज़ है। यह भी इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब से मरवी है कि यौम-ए-तरविया (7 जुलहिज्जा) से एक दिन पहले रोज़ा रखा जाए, फिर यौम-ए-तरविया और फिर यौम-ए-अरफ़ा का रोज़ा रखा जाए।
Ibn Abbas and Malik ibn Anas say that the three days may be fasted at any time from the time someone assumes ihram for hajj until the Day of Sacrifice because Allah says: ‘three days’ fast on hajj.’ If they are fasted on umrah, it is before the time and so it is not allowed. Ash-Shafi i and Ibn Hanbal say that the days may be fasted at any time between adopting ihram for hajj up until the day of Arafah, which is the position of Ibn Umar and Aishah. This is also related from Malik and is stated in the Muwatta’, and it is in order to avoid fasting on the Day of Arafah. That is following the Sunnah and more	अब्दुल्लाह बिन अब्बास और इमाम मालिक कहते हैं कि यह तीन रोज़े उस वक्त से लेकर जब कोई शख्स हज के लिए एहराम बांधे, यौम-ए-नहर (कुर्बानी के दिन) तक किसी भी वक्त रखे जा सकते हैं, क्योंकि अल्लाह तआला ने फ़रमाया है: “हज के दौरान तीन रोज़े।” अगर ये रोज़े उमरा के दौरान रखे जाएँ तो वह वक्त से पहले होंगे, इसलिए जायज़ नहीं। इमाम शाफ़ई और इमाम अहमद बिन हंबल कहते हैं कि ये रोज़े हज के एहराम बांधने के बाद से लेकर यौम-ए-अरफ़ा तक किसी भी वक्त रखे जा सकते हैं, और यही अब्दुल्लाह बिन उमर और आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा का मौक़िफ़ है। यह क़ौल इमाम मालिक से भी मरवी है और अल-मुवत्ता में मज़कूर है,

conducive to worship. Ahmad also said that it is possible to fast the three days before adopting ihram (but during Dhu-l-Hijjah). Ath-Thawri and al-Awza i said that the days may be fasted from the beginning of the first ten days of Dhu-l-Hijjah. Ata' said that. Urwah said that the days may be fasted as long as one remains in Makkah and during the days of Mina, and Malik and a group of the people of Madinah also took that view.	और इसका मक़सद यौम-ए-अरफ़ा के दिन रोज़ा रखने से बचना है, क्योंकि यह सुन्नत की पैरवी और इबादत के लिए ज़्यादा मुनासिब है। इमाम अहमद बिन हंबल ने यह भी कहा कि तीन रोज़े एहराम बांधने से पहले भी रखे जा सकते हैं (लेकिन जुलहिज्जा के अंदर)। सुफ़यान सौरी और औज़ाई ने कहा कि ये रोज़े जुलहिज्जा के पहले अशरे के आगाज़ से रखे जा सकते हैं। अता का भी यही क़ौल है। उरवा ने कहा कि जब तक कोई शख्स मक्का में रहे और अय्याम-ए-मिना के दौरान मौजूद हो, वह ये रोज़े रख सकता है, और इमाम मालिक और अहल-ए-मदीना के एक ग़िरोह ने भी इसी राय को इस्ति़यार किया है।
The days of Mina are the three days of Tashriq following the Day of Sacrifice. Malik related in the Muwaṭṭa' that Aishah, the Mother of the Believers, said, 'Someone performing tamattu, who does not have a sacrificial animal, should fast three days [there] during the period from the time he adopts ihram for the hajj till the Day	मिना के दिन वह तीन दिन हैं जो यौम-ए-नहर (कुर्बानी के दिन) के बाद अय्याम-ए-तशरीक कहलाते हैं। इमाम मालिक ने अल-मुवत्ता में रिवायत किया है कि आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा, जो उम्मुल मोमिनीन हैं, ने फ़रमाया: "जो शख्स तमत्तु करने वाला हो और उसके पास कुर्बानी का जानवर न हो, उसे चाहिए कि वह तीन रोज़े [वहीं] उस मुदत में

of Arafah, and if he does not fast then, should fast the days of Mina.’ These words show that it is good to fast between the time one adopts ihram for hajj tamattu until the Day of Arafah. He begins then, either because it is the proper time to do them, and the days of Mina after that are the time of making them up, as the people of ash-Shafi i say, or it is because doing the fasting before the Day of Sacrifice exonerates the person, and that is commanded. What is most apparent in the School is that doing that fulfils the requirement, even though fasting before it is better. It is like the latitude of the time of the prayer: the beginning of the time is better than the end of it. This is the sound position: it is performing the duty, not making it up.	रखे जब से वह हज के लिए एहराम बांधे यहां तक कि यौम-ए-अरफ़ा तक, और अगर वह उन दिनों में रोज़े न रख सके तो फिर अय्याम-ए-मिना में रोज़े रखे।” इन अल्फ़ाज़ से ज़ाहिर होता है कि हज-ए-तमत्तु के लिए एहराम बांधने के वक्त से लेकर यौम-ए-अरफ़ा तक रोज़े रखना बेहतर है। वह उसी वक्त से शुरू करता है, या तो इस लिए कि यही उन रोज़ों का अस्ल वक्त है और इसके बाद अय्याम-ए-मिना उनकी क़ज़ा का वक्त हैं, जैसा कि इमाम शाफ़ई के अस्हाब कहते हैं, या इस लिए कि यौम-ए-नहर से पहले रोज़े रख लेना इंसान को बरीउज़्ज़िम्मा कर देता है और यही हुक्म दिया गया है। मसलक में ज़्यादा ज़ाहिर क़ौल यह है कि ऐसा करने से फ़र्ज़ अदा हो जाता है, अगरचे इससे पहले रोज़े रखना अफ़ज़ल है। यह नमाज़ के वक्त की वुसअत की तरह है कि उसके अव्वल वक्त में अदा करना आखिर वक्त से बेहतर है। यही दुरुस्त मौक़िफ़ है कि यह अदायगी है, न कि क़ज़ा।
‘Three days fast on hajj’ can refer to the locus of the hajj or the time of the hajj. If it means the actual days, this is a sound	“हज के दौरान तीन रोज़े” से मुराद या तो खुद हज की जगह हो सकती है या हज का वक्त। अगर इससे मुराद

view because the last of the days of hajj is the Day of Sacrifice. It is also possible, however, that the last of the days are the days of stoning because stoning is one of the actions of the hajj in particular even if it is not one of its pillars. If what is meant is the locus of the hajj, he may fast the days as long as he is at Makkah during the days of Mina as Urwah said and greatly stresses. Some people said that a person may delay starting them until the days of Tashriq because fasting only becomes obligatory for him when he does not find a sacrifice on the Day of Sacrifice.	मखसूस दिन हों तो यह एक दुरुस्त राय है, क्योंकि हज के दिनों का आखिरी दिन यौम-ए-नहर (कुर्बानी का दिन) है। हालांकि यह भी मुमकिन है कि आखिरी दिनों से मुराद अय्याम-ए-रमी (कंकरीयाँ मारने के दिन) हों, क्योंकि रमी हज के आमाल में से एक खास अमल है, अगरचे वह उसके अरकान में शामिल नहीं है। और अगर इससे मुराद हज की जगह हो तो जब तक वह मक्का में अय्याम-ए-मिना के दौरान मौजूद रहे, वह उन दिनों में रोज़े रख सकता है, जैसा कि उरवा ने कहा और इस पर बहुत ज़ोर दिया। बाज़ लोगों ने कहा है कि इंसान उन रोज़ों को अय्याम-ए-तशरीक तक मुअख़्खर कर सकता है, क्योंकि उस पर रोज़े उस वक्त वाजिब होते हैं जब वह यौम-ए-नहर के दिन कुर्बानी का जानवर न पाए।
A group of the people of Madinah and ash-Shafi i in his New School as well as most of his people believe that it is not permitted to fast the days of Mina because the Messenger of Allah forbade fasting them. The response to that is that if	अहल-ए-मदीना के एक गिरोह और इमाम शाफ़ई के क़ौल-ए-जदीद, नीज़ उनके अकसर अस्थाब का यह मौक़िफ़ है कि अय्याम-ए-मिना में रोज़े रखना जाइज़ नहीं, क्योंकि रसूलुल्लाह ने इन दिनों में रोज़ा रखने से मना फ़रमाया है। इसका जवाब

the prohibition is confirmed, it is general but was qualified by the fact of its permissibility for someone who is performing tamattu, since it is confirmed in al-Bukhari that Aishah fasted them. Ibn Umar and Aishah both said that there is no allowance to fast the days of Tashriq unless someone has not brought sacrifices. Ad-Daraqutni said that its isnad is sound. It is related marfu from Ibn Umar and Aishah via three paths of transmission which he considers to be weak. There is an allowance to fast them because only they remain of the days of hajj. Therefore it is mandatory for those without sacrificial animals to fast them. Ibn al-Mundhir related that Ali ibn Abi Talib said, 'If someone fails to fast before, then he should fast after the days of Tashriq.' Al-Hasan and Ata said that. Ibn al-Mundhir said, 'That is what we say.' One group say that if he fails to fast during the ten, then nothing but a sacrifice will satisfy the

यह है कि अगर यह मुमानअत साबित हो भी जाए तो वह आम है, लेकिन उसे इस बात ने ख़ास कर दिया है कि तमत्तु करने वाले के लिए इसकी इजाज़त है, क्योंकि सहीह बुखारी में साबित है कि आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने इन दिनों में रोज़े रखे। अब्दुल्लाह बिन उमर और आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा दोनों ने कहा कि अय्याम-ए-तशरीक में रोज़ा रखने की इजाज़त नहीं, मगर उस शख्स के लिए जिसके पास कुर्बानी का जानवर न हो। दारकुतनी ने कहा कि इसकी सनद सहीह है। यह रिवायत इब्न उमर और आयशा से मर्फूअन तीन तुरुक से भी मरवी है, जिन्हें उन्होंने ज़ईफ़ करार दिया है। इन दिनों में रोज़ा रखने की इजाज़त इस लिए है कि यही अय्याम-ए-हज के बाक़ी दिन हैं, लिहाज़ा जिसके पास कुर्बानी न हो उस पर इन में रोज़े रखना लाज़िम है। इब्न अल-मुज़िर ने रिवायत किया कि अली बिन अबी तालिब ने फ़रमाया: "अगर कोई पहले रोज़े न रख सके तो वह अय्याम-ए-तशरीक के बाद रोज़े रखे।" हसन बसरी और अता का भी यही क़ौल है। इब्न अल-मुज़िर ने कहा: "हम भी यही कहते हैं।" एक

requirement. That is related from Ibn Abbas, Said ibn Jubayr, Tawus, and Mujāhid. Abu Umar related it from Abu Hanifah and his people. Reflect on it.	गिरोह का कहना है कि अगर कोई शख्स अशरा (यानी इब्तिदाई दस दिनों) में रोज़े न रख सके तो उसके लिए सिर्फ़ कुर्बानी ही काफ़ी होगी। यह क़ौल अब्दुल्लाह बिन अब्बास, सईद बिन जुबैर, ताउस और मुजाहिद से मरवी है। अबू उमर ने इसे इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब से नक़ल किया है। इस पर ग़ौर करो।
Scholars agree that there is no way for someone performing tamattu to fast if he is able to sacrifice. They disagree about what should happen when he does not find a sacrifice and so fasts, but then finds a sacrifice before his fast is complete. Ibn Wahb mentioned that Malik said, ‘When he begins the fast and then finds a sacrifice, I prefer him to sacrifice. If he does not, the fast satisfies the requirement.’ Ash-Shafi i said, ‘He continues the fast. It is his obligation.’ That is also what Abu Thawr says and it is the view of al-Ḥasan and Qatadah. Ibn al-Mundhir preferred it. Abu Ḥanifah said, ‘If it	उलमा का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि जो शख्स हज-ए-तमत्तु कर रहा हो, अगर वह कुर्बानी करने की कुदरत रखता हो तो उसके लिए रोज़ा रखने की गुंजाइश नहीं। अलबत्ता इस बात में इख़्तिलाफ़ है कि जब वह कुर्बानी न पाए और रोज़े रख ले, फिर उसके रोज़े मुकम्मल होने से पहले उसे कुर्बानी मयस्सर आ जाए तो क्या करे। इब्न वहब ने ज़िक्र किया कि इमाम मालिक ने फ़रमाया: “जब वह रोज़ा शुरू कर दे और फिर उसे कुर्बानी मिल जाए तो मैं यह पसंद करता हूँ कि वह कुर्बानी करे, और अगर ऐसा न करे तो रोज़ा काफ़ी हो जाएगा।” इमाम शाफ़ई ने कहा: “वह रोज़ा ही जारी रखे, यही उस पर लाज़िम है।” यही क़ौल अबू

becomes feasible on the third day of the fast, the fast is void and he must sacrifice. If he fasts three days in the hajj and then it becomes feasible, he can fast seven days and does not return to sacrifice.’ Ath-Thawri, Ibn Abi Najih and Hammad said that.	सौर का है और हसन बसरी और क़तादा का भी यही मौक़िफ़ है। इब्र अल-मुज़िर ने इसी को तरजीह दी है। इमाम अबू हनीफ़ा ने कहा: “अगर रोज़े के तीसरे दिन उसे कुर्बानी मयस्सर आ जाए तो रोज़ा बातिल हो जाएगा और उस पर कुर्बानी लाज़िम होगी। और अगर वह हज के दौरान तीन रोज़े रख चुका हो, फिर उसे कुर्बानी मयस्सर आ जाए तो वह मज़ीद सात रोज़े रख सकता है और कुर्बानी की तरफ़ रुजू नहीं करेगा।” सुफ़यान सौरी, इब्र अबी नजीह और हम्माद का भी यही क़ौल है।
The words ‘your return’ mean when you return to your country as Ibn Umar, Qatadah, ar-Rabi, Mujahid and Ata’ said. Malik said that in the book of Muhammad and ash-Shafi i stated that. Qatadah and ar-Rabi said, ‘This is a dispensation from Allah Almighty. No one is obliged to fast the seven until he returns home unless there is a very strong reason, as is the case with someone who fasts while travelling in Ramaḍan. Ahmad	“तुम्हारी वापसी” से मुराद यह है कि जब तुम अपने वतन लौट जाओ, जैसा कि अब्दुल्लाह बिन उमर, क़तादा, रबीअ, मुजाहिद और अता ने कहा है। इमाम मालिक ने भी किताब-ए-मुहम्मद में यही कहा और इमाम शाफ़ई ने भी इसी की तसरीह की। क़तादा और रबीअ ने कहा: “यह अल्लाह तआला की तरफ़ से रुख़्सत है। किसी पर लाज़िम नहीं कि वह सात रोज़े उस वक्त तक रखे जब तक वह अपने घर वापस न आ जाए, अलबत्ता यह कि कोई मज़बूत उज़्र हो, जैसे वह शख्स जो रमज़ान में

and Ishaq said that fasting on the road satisfies the requirement. This is also related from Mujahid and Ata'. Mujahid said, 'If he wishes, he can fast on the road. This is a dispensation.' That is similar to what Ikrimah and al-Hasan said. However, some linguists say that the phrase refers to when you leave ihram and return to the state you were in before. Malik said, 'When someone has returned from Mina, there is nothing wrong in fasting then.' Ibn al- Arabi said, 'It is a lightening and allowance. The consensus is that it is permitted to bring forward the allowance and abandon the kindness in favour of resolve. If that has a time, there is no text on it and nothing explicit about it meaning a person's own country, although that is what is normally understood.	सफ़र के दौरान रोज़ा रखता है।" इमाम अहमद बिन हंबल और इस्हाक बिन राहवैयह ने कहा कि सफ़र में रोज़ा रखना भी काफ़ी है। यह क़ौल मुजाहिद और अता से भी मरवी है। मुजाहिद ने कहा: "अगर वह चाहे तो रास्ते में रोज़े रख सकता है, यह एक रुख़्सत है।" यही बात इकरिमा और हसन बसरी से भी मनकूल है। अलबत्ता कुछ अहल-ए-लुगत कहते हैं कि इस इबारत से मुराद यह है कि जब तुम एहराम से निकल कर अपनी पहली हालत की तरफ़ लौट आओ। इमाम मालिक ने कहा: "जब कोई मिना से वापस आ जाए तो उसके लिए उस वक्त रोज़े रखने में कोई हरज नहीं।" इब्र अल-अरबी ने कहा: "यह तख़्ज़ीफ़ और रुख़्सत है। इस पर इज्मा है कि इस रुख़्सत को इख़्तियार करना और आसानी को अपनाना जाइज़ है। अगर इसके लिए कोई ख़ास वक्त मुक़र्रर होता तो उस पर कोई सरीह नसी मौजूद नहीं, और न ही इस बात की वाज़ेह दलील है कि इससे मुराद ख़ास तौर पर इंसान का अपना वतन है, अगरचे आम तौर पर यही समझा जाता है।"
---	---

There is, however, something evident, which is close to a clarifying text, in Ibn Umar's words: 'The Messenger of Allah did tamattu in the Farewell Hajj, with umrah to hajj, and sacrificed. He drove the sacrificial camels with him from Dhu-l-Hulayfah. The Messenger of Allah first went into ihram for umrah and then ihram for hajj. People did tamattu with the Messenger of Allah. Some people brought sacrificial camels with them and some did not. When the Messenger of Allah reached Makkah, he said to the people, "Any of you who have sacrificial camels, should not make lawful anything that was unlawful for you until you finish your hajj. Those of you who do not have sacrificial animals should do tawaf of the House, go between Safa and Marwah, shorten their hair and come out of ihram. Then they should adopt ihram for hajj and sacrifice. Those who do not find any way to sacrifice	अलबत्ता इस बारे में एक वाज़ेह बात मौजूद है जो गोया सरीह नस् के करीब है, और वह अब्दुल्लाह बिन उमर के इस क़ौल में है: "रसूलुल्लाह ने हज्जतुल विदा में तमत्तु किया, यानी उमरा के साथ हज किया और कुर्बानी की। आप अपने साथ जुल-हुलैफ़ा से कुर्बानी के जानवर लाए थे। रसूलुल्लाह ने पहले उमरा का एहराम बांधा, फिर हज का एहराम बांधा। लोगों ने भी रसूलुल्लाह के साथ तमत्तु किया। कुछ लोग अपने साथ कुर्बानी के जानवर लाए थे और कुछ नहीं लाए थे। जब रसूलुल्लाह मक्का पहुंचे तो आप ने लोगों से फ़रमाया: 'तुम में से जो कोई कुर्बानी का जानवर साथ लाया है, वह उस वक्त तक कोई ऐसी चीज़ हलाल न करे जो उस पर हराम थी, जब तक कि वह अपना हज मुकम्मल न कर ले। और तुम में से जो कुर्बानी का जानवर नहीं लाया, वह बैतुल्लाह का तवाफ करे, सफ़ा और मरवा के दरमियान सई करे, अपने बाल कटवाए और एहराम से बाहर आ जाए। फिर वह हज का एहराम बांधे और कुर्बानी करे। और जो कुर्बानी की इस्तिताअत न रखे वह हज के दौरान तीन रोज़े रखे और सात रोज़े उस वक्त रखे जब वह
--	---

should fast for three days on hajj and seven when they return to their family.” This is like a text for it not being permitted to fast the seven days except in one’s own country and family. Allah knows best.	अपने घर वालों की तरफ़ लौट जाए।” यह इबारत इस बात पर नस् के मानिंद है कि सात रोज़े अपने वतन और अहल-ओ-ऐयाल के पास वापस आए बिना रखना जाइज़ नहीं। वल्लाहु आलम।
That is similar to what al-Bukhari reported from Ibn Abbas: ‘Then on the eve of Tarwiyah he told us to go into ihram for hajj. When we finished the rites, we came and did tawff of the House and did say between Safa and Marwah. Our hajj was complete and we had to sacrifice, in compliance with the words of Allah Almighty: “...he should make whatever sacrifice is feasible. For anyone who cannot, there is three days’ fast on hajj and seven on your return.” An-Nahhas said that this is the consensus.	यह उसी के मुशाबेह है जो सहीह बुखारी में अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत है: “फिर यौम-ए-तरविया की शाम हमें हुक्म दिया गया कि हम हज का एहराम बांधें। जब हम मनासिक से फ़ारिग हुए तो हम आए और बैतुल्लाह का तवाफ़ किया और सफ़ा व मरवा के दरमियान सर्ई की। हमारा हज मुकम्मल हो गया और हम पर कुर्बानी लाज़िम हुई, अल्लाह तआला के इस फ़रमान की तामील में: ‘...जो कुर्बानी मयस्सर हो वह करे, और जो उसकी इस्तिताअत न रखे वह हज के दौरान तीन रोज़े रखे और वापसी पर सात रोज़े रखे।” नहहास ने कहा कि इस पर इज्मा है।
There is disagreement about the meaning of the words ‘that is ten in all’. It is known that it is ten. Az-Zajjaj said, ‘Since it is conceivable to imagine that	“यह कुल दस हैं” के अल्फ़ाज़ के मानी के बारे में इख़्तिलाफ़ है, हालाँकि यह मालूम है कि वह दस ही हैं। ज़ज्जाज ने कहा: “चूँकि यह एहतिमाल हो सकता था कि तीन दिन

there is a choice between three days on hajj or seven when he returns home instead of them since He did not say,’ “another seven”, He removed that possibility by saying, “that is ten” and then said “in all” (kamilah). Al-Hasan said that he is ‘complete’ in respect of the reward, just like someone who did not do tamattu. It is said that it is an expression which is in the form of a report while a command is meant. It means: ‘Complete them: that is the obligation.’ Al-Mubarrad said that ‘ten’ indicates the ten of the number so that it is not imagined that there is anything further after the seven. It is said that it is for stress.	हज में या उसके बदले वापसी पर सात दिन में से किसी एक का इस्तिहार हो, क्योंकि अल्लाह तआला ने ‘मज़ीद सात’ नहीं फ़रमाया, इसलिए इस एहतिमाल को ख़त्म करने के लिए फ़रमाया: ‘यह दस हैं’ और फिर फ़रमाया ‘पूरे के पूरे’ (कामिलह)।” हसन बसरी ने कहा कि यह सवाब के एतिबार से ‘कामिल’ हैं, जैसे वह शख्स जिसने तमत्तु नहीं किया। यह भी कहा गया है कि यह ख़बर के अंदाज़ में है मगर इससे हुक्म मुराद है, यानी: “इन्हें मुकम्मल करो, यही फ़र्ज़ है।” मुबर्द ने कहा कि “दस” का ज़िक्र इस लिए किया गया है ताकि यह गुमान न हो कि सात के बाद कुछ और भी बाकी है। और यह भी कहा गया है कि यह ताकीद के लिए है।
That is for anyone whose family does not live near the Masjid al-Haram.	यह उस शख्स के लिए है जिसका घराना मस्जिद अल-हराम के करीब नहीं रहता।
A sacrifice is required from anyone not resident in the Haram who performs tamattu. Al-Bukhari related that Ibn Abbas was asked about hajj tamattu and said, ‘The	जो शख्स हरम का रहाइशी न हो और तमत्तु करे, उस पर कुर्बानी लाज़िम होती है। सहीह बुखारी में रिवायत है कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास से हज-ए-तमत्तु के बारे में

Muhajirun and the Ansar and the wives of the Prophet went into ihram for the Farewell Hajj and we went into ihram too. When we reached Makkah, the Messenger of Allah said, “Make your ihram for hajj an ihram for umrah – except for those who have garlanded sacrificial animals.” We did tawaf of the House and went between Safa and Marwah, and then went to our wives and put on our (normal) clothes. He said, “Anyone who has garlanded his sacrificial animal should not come out of ihram until the sacrifice reaches its place.” Then, on the eve of Tarwiyah, he told us to go into ihram for hajj. When we had finished the rites, we came and did tawaf of the House and went between Safa and Marwah. Our hajj was complete and we had to sacrifice, in compliance with the words of Allah Almighty: ‘...he should make whatever sacrifice is feasible. For anyone who cannot, there is three days’	पूछा गया तो उन्होंने कहा: “मुहाजिरीन, अंसार और नबी की अज़वाज ने हज्जतुल विदा में एहराम बांधा और हमने भी एहराम बांधा। जब हम मक्का पहुंचे तो रसूलुल्लाह ने फ़रमाया: ‘अपने हज के एहराम को उमरा का एहराम बना दो, सिवाए उन लोगों के जिन्होंने कुर्बानी के जानवरों को क़िलादा पहनाया है।’ हमने बैतुल्लाह का तवाफ किया और सफ़ा व मरवा के दरमियान सई की, फिर अपनी बीवियों के पास गए और (मामूल के) कपड़े पहन लिए। आप ने फ़रमाया: ‘जिसके पास कुर्बानी का जानवर है वह उस वक्त तक एहराम से न निकले जब तक कुर्बानी अपनी जगह न पहुंच जाए।’ फिर यौम-ए-तरविया की शाम आप ने हमें हुक्म दिया कि हम हज का एहराम बांधें। जब हम मनासिक से फ़ारिग हुए तो हम आए और बैतुल्लाह का तवाफ किया और सफ़ा व मरवा के दरमियान सई की। हमारा हज मुकम्मल हो गया और हम पर कुर्बानी लाज़िम हुई, अल्लाह तआला के इस फ़रमान की तामील में: ‘...जो कुर्बानी मयस्सर हो वह करे, और जो इस्तिताअत न रखे वह हज के दौरान तीन रोज़े रखे और वापसी पर सात
---	--

fast on hajj and seven on your return' to your cities, a sheep being sufficient. So we combined two practices – hajj and umrah – in the same year Allah Almighty sent it down in His Book and it was the Sunnah of His Prophet. It was allowed to people other than the people of Makkah. Allah says: ‘...that is for anyone whose family does not live near the Masjid al-Haram.’ The months of hajj which Allah Almighty mentioned are Shawwāl, Dhu-l-Qadah and Dhu-l-Hijjah. Whoever performs tamattu in these months must sacrifice or fast.	रोज़े रखे' यानी अपने शहरों को लौटने पर, और एक बकरी काफ़ी है। इस तरह हमने एक ही साल में दो इबादतें जमा कीं—हज और उमरा—जैसा कि अल्लाह तआला ने अपनी किताब में नाज़िल फ़रमाया और यह उसके रसूल की सुन्नत है। यह इजाज़त मक्का के रहने वालों के अलावा लोगों के लिए है। अल्लाह तआला फ़रमाता है: ‘...यह उस शख्स के लिए है जिसका घराना मस्जिद अल-हराम के करीब न रहता हो।' और वह हज के महीने जिनका अल्लाह तआला ने ज़िक्र किया है वह शव्वाल, जुलक़अदा और जुलहिज्जा हैं। जो इन महीनों में तमत्तु करे उस पर कुर्बानी या रोज़े लाज़िम हैं।
The lam in ‘for anyone’ means the obligation of sacrifice for those who are not from the people of Makkah. That indicates the position of Abu Hanifah and his people that tamattu and qiran are only for those who are not from Makkah. They believe that those who live near the Masjid al-Haram cannot do either	“लिमन” (यानी “उस शख्स के लिए”) में लाम इस बात पर दलालत करता है कि कुर्बानी उन लोगों पर लाज़िम है जो अहल-ए-मक्का में से नहीं हैं। इससे इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब का मौक़िफ़ ज़ाहिर होता है कि तमत्तु और क़िरान सिर्फ़ उन्हीं लोगों के लिए हैं जो मक्का के रहने वाले नहीं हैं। उनके नज़दीक जो लोग मस्जिद अल-हराम के करीब रहते हैं वह न तमत्तु कर सकते हैं और न

tamattu or qiran, and if someone does that, then he owes the sacrifice for a malpractice, from which he may not eat because it is not the sacrifice of tamattu. Ash-Shafi i said that they owe the sacrifice of tamattu or qiran. What is indicated is sacrifice and fasting and so someone from Makkah does not owe either. Abd al-Malik ibn al-Majishun made a difference between tamattu and qiran and obliged a sacrifice for qiran but not tamattu.	किरान, और अगर कोई ऐसा करे तो उस पर बतौर खिलाफ़-ए-कायदा कुर्बानी लाज़िम होगी, जिसमें से वह खुद नहीं खा सकता क्योंकि वह तमत्तु की कुर्बानी नहीं है। इमाम शाफ़ई ने कहा कि उन (अहल-ए-मक्का) पर भी तमत्तु या क़िरान की कुर्बानी लाज़िम होगी। जबकि ज़ाहिर मफ़हूम यह है कि कुर्बानी और रोज़े दोनों ग़ैर मक्की लोगों के लिए हैं, लिहाज़ा मक्का के रहने वाले पर न कुर्बानी लाज़िम है और न रोज़े। अब्दुल मलिक बिन अल-माजिशून ने तमत्तु और क़िरान में फ़र्क किया है, और क़िरान में कुर्बानी को लाज़िम करार दिया है लेकिन तमत्तु में नहीं।
People disagree about the definition of those who live near the Masjid al-Haram although they agree that those who live in Makkah and what is directly connected to it are considered to be living near it. At-Tabari said, ‘There is consensus that they are the people of the Haram.’ Ibn Aṭiyyah said, ‘It is not as some scholars say about it meaning those who are obliged to attend	लोग इस बात में इख़िलाफ़ रखते हैं कि “मस्जिद अल-हराम के करीब रहने वालों” की तआरिफ़ क्या है, हालांकि इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि जो लोग मक्का में रहते हैं और उससे मुत्तसिल इलाक़े हैं, वह उसके करीब शुमार होते हैं। तबरी ने कहा: “इस पर इज्मा है कि वह अहल-ए-हरम हैं।” इब्न अतीया ने कहा: “यह वैसा नहीं जैसा कुछ उलमा ने कहा कि इससे मुराद वह लोग हैं जिन पर मस्जिद अल-हराम की जुमुआ में

its jumuah prayer and anyone beyond that is a Bedouin, making the expression refer to city people and Bedouins.’ Malik and his people said that they are only the people of Makkah and what is directly connected to it. Abu Hanifah and his people said that they are the people of the miqats and those closer than them in all directions. So those who are the people of the miqats and those closer than them are considered to be near the Masjid al-Haram. Ash-Shafi i and his people said that they are those who do not have to shorten the prayer when travelling to Makkah. That is the closest miqat. The positions of the early scholars are based on these views in interpreting the ayah.	शिरकत लाज़िम हो और उससे दूर रहने वाले बदवी हों, गोया यह ताबीर शहरी और बदवी की तक्रसीम की तरफ़ इशारा करती है।” इमाम मालिक और उनके अस्थाब के नज़दीक इससे मुराद सिर्फ़ मक्का और उससे मुत्तसिल इलाक़े हैं। जबकि इमाम अबू हनीफ़ा और उनके अस्थाब के नज़दीक इससे मुराद मीक़ात के इलाक़े और उनसे करीब के तमाम अतराफ़ हैं। चुनाँचे जो लोग मीक़ात के रहने वाले हैं या उससे भी करीब हैं, वह मस्जिद अल-हराम के करीब शुमार होते हैं। इमाम शाफ़ई और उनके अस्थाब के नज़दीक वह लोग मुराद हैं जिन्हें मक्का के सफ़र में नमाज़ क़सर करने की ज़रूरत न हो, यानी करीब तरीन मीक़ात तक का फ़ासला। इब्तिदाई उलमा के अक़वाल इसी तरह की मुख्तलिफ़ आराओं पर मबनी हैं जिनके ज़रिये इस आयत की तफ़सीर की गई है।
Have taqwa of Allah.	अल्लाह से तक्रवा इख़्तियार करो।
Fear Him in respect of what He has made obligatory for you. This is a general command to be godfearing and a warning	इससे डरो उस मामले में जो उसने तुम पर फ़र्ज़ किया है। यह तक्रवा इख़्तियार करने का एक आम हुक्म है और उसकी सज़ा की सख़्ती से

about the severity of His punishment.	ख़बरदार करने के लिए है।
--	-------------------------